सूचीपत्र सारबचन छन्दबन्द भाग दूसरा

शब्द की टेक		सफ़हा
अगम आरती राधास्वामी गाऊँ	...	१४६
अजब यह बँगला लिया सजाय	...	४२१
अब खेलत राधास्वामी सँग होरी	...	४०९
अब चली तीसर परदा खोल	...	१०३
अब चलो सजनी दूसर धाम	...	१०१
अब चौथे की करी तयारी	...	१०५
अब मन आतुर दरस पुकारे	...	१८८
अब मैं कौन कुमति उरझानी	...	१९०
अब सूरत पूछे स्वामी से	...	७३
अरे मन नाहिँ आई परतीत	...	१७९
अली री मथूँ निज पिण्डा	...	२८८
आओ री सखी जुड़ होली गावैँ	...	४१६
आओ री सिमट हे सखियो	...	२४९
आज आरती करूँ सुहावन	...	१५६
आज काज मेरे कीन्हे पूरे	...	२२१
आज घड़ी अति पावन भावन	...	१२२
आज मैं देखूँ घट मैं तिल को	...	२४२
आया मास अगहन अब छठा	...	२७२
आरत आगे राधास्वामी के कीजे	...	१६७
आरत गाऊँ पाँच कड़ी की	...	१४२
आरत गाऊँ पूरे गुरु की	...	१३३
आरत गाऊँ सत्तनाम की	...	१४३
आरत गाऊँ स्वामी अगम अनामी	...	१३२

शब्द की टेक		सफहा
जाग रे मन छोड़ बखेड़ा	...	१२९
जीव चितावन आये राधास्वामी	...	२२९
जेठ महीना जेठा भारी	...	३९४
ठुमरी अब करी है बखानीं	...	४४९
डगर मेरी रोक लई या जुल्मी काल	...	१८२
तुम धुर से चल कर आये	...	२०६
दरूपत आरत करूँ राधास्वामी	...	१५३
दमिनियाँ दमक रही घट माहिं	...	३०१
दया गुरू की अब हुइ भारी	...	१४४
दर्द दुखी जियरा नित तरसे	...	११५
दर्द दुखी मैं बिरहिन भारी	...	१११
दर्शन की प्यास घनेरी	...	२२३
दिखाया रूप मनोहर गुरु ने	...	३४१
देखन चली बसन्त अगम घर	...	४०८
देख पियारे मैं समझाऊँ	...	२१६
देखो गगन के बीच श्याम कंज खिल रहा	...	१४
देखो देखो सखी अब चल बसंत	...	४०३
दौड़त गई गगन के घेर	...	३४७
धीरज धरो बचन गुरु गहो	...	२२५
धुन धुन धुन डालूँ अब मन को	...	४४८
धुबिया गुरु सम और न कोय	...	३४१
धूम धाम से आइ इक सजनी	...	१६०
धोखे में सब जग ज्ञात पचा	...	२३
नाम दान अब सतगुरु दीजे	...	२००
नाम रस पीवो गुरु की दात	...	२०२

शब्द की टेक | सफ़हा

शब्द की टेक | सफ़हा

शब्द की टेक　　　　　　　　　　　　सफ़हा

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

सारबचन छन्दबन्द दूसरा भाग।

॥ बचन बाईसवाँ ॥

भेद काल मत और दयाल मत का और बर्णन हाल भूल भर्म संसारियों का।

॥ शब्द पहिला ॥

चार खान चौपड़ जग रची।
अन्ड* जेर† सेदज‡ उदभिजी§ ॥ १ ॥
माया ब्रह्म पुरुष पिरकिरती।
मन इच्छा खेलैं शिव शक्ती ॥ २ ॥
सुरत नर्द§ ता सँ बहु पची।
धूस खेल की अति कर मची ॥ ३ ॥
तीन गुनन का पासा लीन्ह।
रजगुन तमगुन सतगुन चीन्ह ॥ ४ ॥

---

* अंडज याने जो अण्डे से पैदा होते हैं। †जेरज याने जो झिल्ली से पैदा होते हैं। ‡ स्वेदज याने जो पसीने से पैदा होते हैं। § उद्भिज याने जो मिट्टी या खान से पैदा होते हैं। § गोट।

कर्म हाथ से पासे डारे ।
भोग अंक ता में बिस्तारे ॥ ५ ॥
झूँठी बाज़ी जानी सच्ची ।
कोइ पक्की कोइ मारे कच्ची ॥ ६ ॥
नर्द सुरत चौरासी घर में ।
भरमत फिरे दुक्ख और सुख में ॥ ७ ॥
हारे ब्रह्म और जीती माया ।
जीव नर्द बहु बिधि दुख पाया ॥ ८ ॥
कभि कभि ब्रह्म जीत जो होई ।
नर्द लाल होय ब्रह्म घर सोई ॥ ९ ॥
चौपड़ से बाहर नहिँ होई ।
निज घर अपना पाये न कोई ॥ १० ॥
माया ब्रह्म खिलाड़ी दोई ।
खेलैं इन नरदन से सोई ॥ ११ ॥
भरमे नर्द पिटे और कुटे ।
दुख उनका कोई नाहिँ सुने ॥ १२ ॥
सभी नर्द पछतावैं दम दम ।
कैसे छूटैं इन से अब हम ॥ १३ ॥

करैं फ़र्याद दाद* नहिं पावैं।
रोवैं झींखैं और चिल्लावैं ॥ १४ ॥
बार बार भरमैं चौरासी।
कोइ न काटे उनकी फाँसी ॥ १५ ॥
स्रुत सिमृत और बेद पुरान।
सबही मारैं इनकी जान ॥ १६ ॥
माया काल बिछाया जाल।
अपने स्वारथ करैं बेहाल ॥ १७ ॥
कोई गोट न जावे घर को।
यहाँ ही खेल खिलावैं सब को ॥ १८ ॥
सत्तपुरुष देखा यह हाल।
काल हुआ जीवन का काल ॥ १९ ॥
अपने स्वाद जीव भरमावे।
पता हमारा काहू न बतावे ॥ २० ॥
पुरुष दयाल दया उमगाई।
संत रूप धर जग में आई ॥ २१ ॥
नर्दन को बहु बिधि समझाया।
काल निर्दई तुम को खाया ॥ २२ ॥

* इन्साफ़।

अब मैं कहूँ करो तुम सोई ।
जाल जाल* कर न्यारे होई ॥ २३ ॥
सतगुरु संग बाँध जुग चलो ।
चोट न खाव काल बल दलो ॥ २४ ॥
यह घर काल बसाया आन ।
तुम को लाया हम से माँग ॥ २५ ॥

॥ दोहा ॥

यह तो घर है कालका, घर अपना मत जान।
निश्चयकरकेमानियो, जोअबकहूँबखान२६

निज घर तुम्हरा हमरे देश ।
अब मैं कहूँ देश सन्देश ॥ २७ ॥
सत्तनाम सतपुरुष कहाई ।
चौथा लोक संत कहैं भाई ॥ २८ ॥
ता के परे अलखपुर बसा ।
संत सुरत बिन कोइ न धसा ॥ २९ ॥
अगमलोक रचना तिस परे ।
बिन वहाँ पहुँचे काज न सरे ॥ ३० ॥

* जला ।

आगे ता के निज घर जान ।
राधास्वामी धाम पिछान ॥ ३१ ॥
इन लोकन की शोभा भारी ।
देखे सो जिन जुक्त सम्हारी ॥ ३२ ॥
अब जुक्ती का भेद सुनाऊँ ।
सुरत शब्द की राह लखाऊँ ॥ ३३ ॥
मन इन्द्री उलटो घट माहीं ।
सुरत निरत दोउ नैन जमाई ॥ ३४ ॥
सहसकँवल चढ़ त्रिकुटी आओ ।
सुन्न के परे महासुन पाओ ॥ ३५ ॥
भँवरगुफा सतलोक निहारो ।
अलख अगम के पार सिधारो ॥ ३६ ॥
राधास्वामी कही बनाय ।
चौपड़ खेली अद्भुत आय ॥ ३७ ॥
पौ पर बाज़ी अटकी आय ।
गुरु बिन पौ का दाव न पाय ॥ ३८ ॥
संत सतगुरू जो जन पाय ।
चौपड़ से बाहर हो जाय ॥ ३९ ॥

निज घर अपने जाय समाय ।
राधास्वामी दर्शन पाय ॥ ४० ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

सुरत बुंद सत सिंध तज ।
आई दसवें द्वार ॥ १ ॥
वहाँ से उतरी पिंड में ।
बसी आय नौ वार ॥ २ ॥
मन इन्द्री सम्बन्ध कर ।
पड़ी जक्त की लार ॥ ३ ॥
जन्म जन्म दुख में रही ।
बही चौरासी धार ॥ ४ ॥
सुध भूली घर आद की ।
सत्तपुरुष दरबार ॥ ५ ॥
नर देही जब जब मिली ।
किया न सतगुरु प्यार ॥ ६ ॥
संसय रोग भरमत रही ।
क्योंकर उतरे पार ॥ ७ ॥
सतगुरु संत दया करी ।
आये धर औतार ॥ ८ ॥

बहु बिधि अब समझावहीं ।
मारग शब्द पुकार ॥ ९ ॥
काल बिछाया जाल अस ।
गुप्त किया मत सार ॥ १० ॥
कर्म भर्म पाखंड का ।
कीन्हा बहुत पसार ॥ ११ ॥
विद्या रस ज्ञानी ठगे ।
बाचक अति अहंकार ॥ १२ ॥
जड़ चेतन ग्रन्थी* बँधे ।
थोथा करें बिचार ॥ १३ ॥
सुरत शब्द की राह को ।
करें न अंगीकार ॥ १४ ॥
मन बैरी धोखा दिया ।
तजे न मूल बिकार ॥ १५ ॥
इन की संगत मत करो ।
यह मारें घेरा डार ॥ १६ ॥
खोजी कोइ कोइ होयगा ।
बादी सब संसार ॥ १७ ॥

* गाँठ ।

रोज़गारी भेखी सभी ।
मानी मान अधार ॥ १८ ॥
राधास्वामी गाइया ।
इन से रहो हुशियार ॥ १९ ॥
संत सरन दृढ़कर गहो ।
काल बड़ा बरियार* ॥ २० ॥
सुरत न पावे शब्द रस ।
तब लग रहे ख़ुवार ॥ २१ ॥
ता ते सतगुरु संग कर ।
पहुँचो निज घरबार ॥ २२ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

काल मत जग में फैला भाई ।
दयाल मत भेद न काहू पाई ॥ १ ॥
बेद पुरान शास्त्र और सिमृत ।
इन सब रूँधा† मारग आई ॥ २ ॥
ब्रह्मा बिष्णु महादेव शक्ती ।
दस औतार जाल फैलाई ॥ ३ ॥
ज्ञानी जोगी और सन्यासी ।
ब्रह्मचार तपसी भरमाई ॥ ४ ॥

* बलवान । † बंद किया ।

कहा कहूँ सारा जग भूला ।
  कोइ बिरले संत जनाई ॥ ५ ॥
पंडित भेख टेक में भूले ।
  सब भौ धार बहाई ॥ ६ ॥
साहेब कबीर और तुलसी साहेब ।
  दयाल मता इन आन चलाई ॥ ७ ॥
राधास्वामी खोल सुनाई ।
  मैं भी इन सँग मेल मिलाई ॥ ८ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

इक पुरुष अजायब पाया ।
कोइ मर्म न उसका गाया ॥ १ ॥
बिन संत हाथ नहिं आया ।
ऋषि मुनि सब धोखा खाया ॥ २ ॥
क्या ब्यास बशिष्ट भुलाया ।
क्या शेष महेश भ्रमाया ॥ ३ ॥
पारासर जोगी नारद ।
शृङ्गी ऋषि ग़ोता खाया ॥ ४ ॥
हम कहँ कौन समझाई ।
परतीत न कोई लाया ॥ ५ ॥

संतन यह भाख सुनाया ।
कोइ गुरुमुख बूझ बुझाया ॥ ६ ॥
घट घट में काल समाया ।
सुत सिमृत जाल बिछाया ॥ ७ ॥
षट शास्तर बुद्धि चलाया ।
अंधे मिल धूल उड़ाया ॥ ८ ॥
कुछ हाथ न उनके आया ।
बिन सतगुरु भटका खाया ॥ ९ ॥
संतन वह देश जनाया ।
तब तुच्छ जीव भी पाया ॥ १० ॥
नीचों को घाट लगाया ।
ऊँचों को काल बहाया ॥ ११ ॥
राधास्वामी पता बताया ।
खोजी की कमर बँधाया ॥ १२ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

मैं कहूँ कौन से भाई ।
कोइ मेली नज़र न आई ॥ १ ॥
जो बात संत बतलाई ।
काहू से मेल न खाई ॥ २ ॥

तिरलोकी सभी सुनाई ।
चौथे का मर्म न गाई ॥ ३ ॥
जिस चौथा लोक जनाई ।
सो अचरज करते भाई ॥ ४ ॥
कोइ माने न बहुत मनाई ।
अब क्योंकर कहूँ लखाई ॥ ५ ॥
मैं समझ यही चित लाई ।
बिन मेहर न सरधा आई ॥ ६ ॥
जो सतगुरु होयँ सहाई ।
तो सभी बात बन आई ॥ ७ ॥
ता ते यह गिनत* मिटाई ।
राधास्वामी चुप्प रहाई ॥ ८ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

कहूँ अब गोपी कृष्ण बिहार ॥ टेक ॥
मन है कृष्ण इन्द्रियाँ गोपी ।
लीला भोग बिकार ॥ १ ॥
कामादिक सब ग्वाल बाल सँग ।
बिन्द्राबन तन करत खिलार ॥ २ ॥

* ख़्याल ।

नंद अनंद रूप पित अपना ।
छोड़ तिरकुटी द्वार ॥ ३ ॥
नाद धाम तज जक्त सम्हारा ।
आय फसा नौ वार ॥ ४ ॥
कंस रूप अज्ञान निशाचर ।
पड़ गया इस मन लार ॥ ५ ॥
नाद ज्ञान ले करी चढ़ाई ।
मारा कंस गँवार ॥ ६ ॥
राधा सुरत मिली जिस मन को ।
वही कृष्ण पहुँचा दस द्वार ॥ ७ ॥
आगे का गुरु मिला न उसको ।
रहा काल के जार* ॥ ८ ॥
यह दोउ लीला कृष्ण सम्हारी ।
कभी नौ में और कभी दस द्वार॥९॥
संत धाम इन भेद न पाया ।
काल हुआ यह कृष्ण मुरार॥१०॥
ता ते संतन बर्ण सुनाया ।
कृष्ण काल दोउ एक बिचार ॥११॥

* जाल।

जब लग सुरत न पावे सतपुर ।
रहे काल के बार* ॥ १२ ॥
ता ते सतगुरु कहत जनाई ।
छोड़ो कृष्ण दुआर ॥ १३ ॥
आगे चलो संत मत परखो ।
जाकी ऊँची धार ॥ १४ ॥
चौथा लोक संत गुहरावैं ।
सत्त नाम पद सार ॥ १५ ॥
सुरत शब्द का मारग धारो ।
पहुँचो निज घर बार ॥ १६ ॥
राधास्वामी कहत बुझाई
त्यागो कृष्ण लबार† ॥ १७ ॥
यही हाल तुम राम बिचारो ।
दोनों हैं इकतार‡ ॥ १८ ॥
राम कृष्ण दोउ जग में आये ।
काल धरे औतार ॥ १९ ॥
वही रावन को मार राम ने ।
सीता सुमत सुधार ॥ २० ॥

* द्वार, दखल । † झूठा । ‡ एक से ।

आय अजुध्या तन के भीतर ।
राज लिया दस द्वार ॥ २१ ॥
पहिले बिपता बहुतक भोगी ।
जब लग चढ़े न त्रिकुटी पार ॥ २२ ॥
संत मता इनहूँ नहिँ जाना ।
रहे काल के गार* ॥ २३ ॥
राधास्वामी कह समझावैं ।
कृष्ण राम दोनौं तज डार ॥ २४ ॥
दस औतार काल के जानो ।
सब ही से तुम गहो किनार† ॥ २५ ॥
चौथा पद जो सत बतावैं ।
सुरत शब्द ले उतरो पार ॥ २६ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

देखो गगन के बीच, श्याम कंज खिल रहा ।
भँवर गया लुभाय, वहीं चढ़के मिल रहा ॥ १ ॥
धोखे का वह मुक़ाम, उसे देखता रहा ।
बहु सिद्ध नाथ जोगी, उन्हें पेखता‡ रहा ॥ २ ॥
काल अपना जाल, एक जुदा ही बिछा रहा ।
जो जो गये वहाँ, उन्हें उलटावता रहा ॥ ३ ॥

* मुँह । † अलहदगी । ‡ देखता ।

नाना कला* दिखाय, वहीं मोहता रहा।
सब की कमाई आप, खड़ा खोसता रहा॥४॥
क्या क्या कहूँ, अनर्थ बहुत भाँत कर रहा।
बिन संत सतगुरू, वह सभी को निगल रहा॥५॥
आगे न कोइ जाय, इसी में भुला रहा।
माया का झूला डाल, सुनन को झुला रहा॥६॥
द्वारे के पार काहू को, जाने न दे रहा।
फिर भेद व्हाँ के पार का सबही ढका रहा॥७॥
क्या शेष क्या महेश, सभी हार कर रहा।
बिन संत उसके पार, कोई भी न जा रहा॥८॥
सो भेद राधास्वामी, सभी को सुना रहा।
जिसपर है मेहर उनकी, वह परतीत ला रहा॥९॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

पिया बिन प्यारी कैसे होय निबाह ॥टेक॥

तू तो अचेत फिरे बौरानी।
कस पावे सच शाह ॥ १ ॥
जक्त भाड़ में क्यों तू भुनती।
पावे निस दिन दाह ॥ २ ॥

---

* लीला।

छोड़ उपाय करो सत संगत ।
ले सतगुरु से राह ॥ ३ ॥
इन्द्री भोग बिसारो मन से ।
छोड़ो सब की चाह ॥ ४ ॥
चेतन रूप बिचारो अपना ।
फिर लगो शब्द घट आय ॥ ५ ॥
कहना मान पियारी मेरा ।
अब तैं पाया दाव ॥ ६ ॥
अब के चूके ठौर न पैहो ।
रहो बहुत पछताय ॥ ७ ॥
ता ते पहिले सोधो आपा ।
फिर सतनाम समाय ॥ ८ ॥
राह रकाना गुरु से लेना ।
सरन पड़ो उन जाय ॥ ९ ॥
बिन सरना उन काज न सरिहै ।
ठग सँग काहे ठगाय ॥ १० ॥
पंडित भेख देह अभिमानी ।
जग सँग रहे गठियाय* ॥ ११ ॥

* गठ रहे।

करम भरम सँग हुए बावरे ।
तीरथ बरत पचाय ॥ १२ ॥
गंगा जमना मूरत मंदिर ।
माला तिलक लगाय ॥ १३ ॥
जप तप संजम और अचारा ।
जाति बरन लिपटाय ॥ १४ ॥
शिखा* सूत† और धोती पोथी ।
नेम धरम अटकाय ॥ १५ ॥
चौका दे दे करें रसोई ।
कच्ची पक्की छूत लगाय ॥ १६ ॥
पानी साथ शुद्धता मानें ।
नाम महातम चित न समाय ॥१७॥
चौके बैठे मछली खावें ।
भक्तन साथ उपाध लगाय ॥ १८ ॥
बिद्या पढ़ पढ़ मानी होवें ।
पत्थर पानी जक्त पुजाय ॥ १९ ॥
दान पुन्य की महिमा गावें ।
देवी देवा रहे भुलाय ॥ २० ॥

* चोटी । † जनेऊ ।

मथुरा काशी गया द्वारका ।
पित्तर पूजा दाग़ दगाय* ॥ २१ ॥
चार धाम† पृथ्वी परिकर्मा ।
धूर फाँक फिर घर को आय ॥२२॥
करम चढ़ाये भरम भुलाये।
दुख भोगे कुछ लाभ न पाय ॥२३॥
जड़ बुद्धी अभिमानी भारी‡ ।
सतसँग बचन न चित ठहराय ॥२४॥
गंगा जमना पाप कटावैं ।
गोबर बछिया मूत पिलाय॥ २५ ॥
पशू होय पशुवन को पूजैं।
पीपल तुलसी पेड़ लगाय॥ २६ ॥
नर देही की सार न जानैं ।
चौरासी मैं ग़ोता खाय ॥ २७ ॥
संत सीत§ और गुरु परशादी ।
चरनामृत को दोष लगाय॥ २८ ॥
ऐसे मूरख भटका खावैं ।
तुम उन संग करो मत भाय‖ ॥ २९ ॥

*-बदन पर ग़रम लोहे से द्वारका में दाग़ लगवाना। †जगन्नाथ, बद्रीनाथ, द्वारकानाथ, रामेश्वरम। ‡ बढ़के। § परशादी। ‖ भाव प्रीत।

कथा पुरान सुनावत डोलें ।
जीवका कारन भटका खाय ॥ ३० ॥
जीव अकाज न सोचैं कबही ।
मान लोभ में रहे लिपटाय ॥ ३१ ॥
सुनत सुनावत मरम न पावत ।
अहंकार में रहे भुलाय ॥ ३२ ॥
भक्ति भाव की सार न जानत ।
जक्त ठगौरी* निस दिन खाय ॥ ३३ ॥
माया जाल बिछाया भारी ।
ऋषी मुनी सब धर धर खाय ॥ ३४ ॥
दस औतार जती और जोगी ।
पंडित ज्ञानी रहे पछताय ॥ ३५ ॥
संत मते की सार न जानें ।
काल मते में अवधि† बिहाय‡ ॥ ३६ ॥
सतगुरु बिन सब धोखा खावें ।
निज घर अपने कोई न जाय ॥ ३७ ॥
जक्त जाल में रहे फँसाई ।
बार बार चौरासी धाय ॥ ३८ ॥

* धोखा । † अवस्था, उमर । ‡ बिताया ।

सुरत शब्द मारग अति सूधा ।
ताका मरम न कोई पाय ॥ ३९ ॥
ऐसी भूल पड़ी जग माहीं ।
हम किस किस को कहैं बुझाय ॥४०॥
जो जो संत सरन में आवें ।
सो सो पावें घर की राह ॥ ४१ ॥
अब आरत सतगुरु की करहूँ ।
बहुत कहा यह झगड़ा गाय ॥ ४२ ॥
सुरत चढ़ाय चलूँ नभ ऊपर ।
सहसकँवल में बैठूँ जाय ॥ ४३ ॥
वहाँ से बंक तिरकुटी छेदूँ ।
सुन्न सिखर में आसन लाय ॥ ४४ ॥
महासुन्न और भँवरगुफा पर ।
सत्तलोक में पहुँची धाय ॥ ४५ ॥
अलख अगम के पार सिधारी ।
वहाँ आरती कीन्ही जाय ॥ ४६ ॥
प्रेम ख़ज़ाना मिला अपारा ।
राधास्वामी लिये रिझाय ॥ ४७ ॥

॥ शब्द नवाँ ॥

मैं भूली सतगुरु स्वामी ।
मैं चूकी अंतरजामी ॥ १ ॥
क्या क्या कहुँ बिथा* बखानी ।
सब जग को पँडियन कीन्ह दिवानी ॥२॥
ब्राह्मण और भेखन बहु भरमानी ।
उभट† में पड़े भटक भटकानी ॥ ३ ॥
मारग जो सीधा दीन्ह छिपानी ।
तीरथ और बरतन माहिँ भुलानी ॥ ४ ॥
गया गायत्री राह खुलानी ।
यह कर्म प्रवृत्ती करें करानी ॥ ५ ॥
उलटे गिर भौजल गोता खानी ।
यह साधन पिछले हुए पुरानी ॥ ६ ॥
स्रुत स्मृत ब्यास आदिक करें बखानी ।
यह साधन मुक्ति निमित्त न जानी ॥ ७ ॥
निरवृत्ती साधन यों कह गानी ।
कलजुग में इक नाम निशानी ॥ ८ ॥
सतगुरु सेवा सतसँग ठानी ।
अब निर्विर्ति पर जिन मन मानी ॥ ९ ॥

---

* बिपत । † बुरी राह ।

तिन जीवन प्रति कहूँ बुझानी ।
सतगुरु पूरा खोज़ खुजानी ॥ १० ॥
जब लग पूरा मिले न मिलाना ।
तब लग खोजत रहे जहानी ॥ ११ ॥
खोजन में जो दिवस बितानी ।
वह साधन में बृथा न जानी ॥ १२ ॥
सतगुरु पूरे जभी भिटानी* ।
प्रेम प्रीत से सेवा आनी ॥ १३ ॥
तब वह भेद नाम दें दानी ।
नाम जुक्ति तुम रहो कमानी ॥ १४ ॥
नाम प्रताप मुक्ति गति पानी ।
बिना नाम नहिं ठौर ठिकानी ॥ १५ ॥
कलजुग में बिन नाम निशानी ।
मुक्ति न होगी निश्चय ठानी ॥ १६ ॥
करमी धरमी जोगी ज्ञानी ।
यह सब पिल रहे मन की घानी ॥ १७ ॥
सतगुरु संत मिले नहिं आनी ।
भूले पढ़ पढ़ पिछली बानी ॥ १८ ॥

* भेटें याने मिलें ।

सब से करी काल ठग हानी ।
संत बिना कोइ बचे न बचानी ॥ १९ ॥
बिरले संत नाम गति गानी ।
चौथे लोक चढ़ पता जनानी ॥ २० ॥
राधास्वामी कहा भेद सब छानी ।
उनकी दया से महुँ* पुनि जानी ॥ २१ ॥
भर्म मिटा भइ नाम दिवानी ।
आरत उन की सजूँ सजानी ॥ २२ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

धोखे में सब जग जात पचा ॥ टेक ॥
अपनी अपनी बुधि दौड़ावें ।
सार भेद नहिँ हाथ लगा ॥ १ ॥
कहाँ कहाँ की बरन सुनाऊँ ।
साहेब सच्चा काहू न मिला ॥ २ ॥
बुधि चतुराई सबहिन कीन्ही ।
थकी बुद्धि तब हार रहा ॥ ३ ॥
दसअष्टी† कुछ और बखानें ।
छः शास्तर कुछ और कहा ॥ ४ ॥

* मैं । † अट्ठारह पुरान ।

चार बेद मिल नेत पुकारैं।
संत बिना कोइ नाहिं कहा ॥ ५ ॥
सुरत चढ़ाय शब्द सँग पहुँचे।
अगम देश में राज किया ॥ ६ ॥
तिन का बचन न कोई माने।
मूरखता में बहक गया ॥ ७ ॥
बिन मिलाप सतगुरु पूरे के।
जन्म जुए में हार दिया ॥ ८ ॥
हिरसी जीव मिले बहुतेरे।
उन से कहो क्या काज सरा ॥ ९ ॥
मेहनत करैं न मन को मारैं।
कैसे छूटे जाल बड़ा ॥ १० ॥
काल शिकारी सिर पर ठाढ़ा।
जीव अनाड़ी फाँस फँसा ॥ ११ ॥
राधास्वामी कहत बिचारी।
बिना सरन अब कौन बचा ॥ १२ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

सुन गुरु बचन कहैं जो तुझ से।
कर परतीत मान हित चित से ॥ १ ॥

चौथा लोक बतावें सतगुरु ।
तीन लोक भाखें सब ही गुरु ॥ २ ॥
बेद पुरान सिमृत और शास्तर ।
सबही मिल भाखें चौदह पुर ॥ ३ ॥
उन के बचन सभी मिल मानें ।
कर परतीत झूठ नहिं जानें ॥ ४ ॥
प्रत्यक्ष तो दो लोक दिखावें ।
और लोक सुन सुन सब गावें ॥ ५ ॥
जिन के मन में उन का निश्चा ।
सो रखते सब उन की दृढ़ता ॥ ६ ॥
तू सतगुरु का सेवक कैसा ।
उनका बचन न माने वैसा ॥ ७ ॥
एक लोक आगे वह कहें ।
इन से ऊँचा ता में रहें ॥ ८ ॥
सो परतीत न लावो भाई ।
यह अचरज मेरे मन आई ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

महिमा सतगुरु संत की, करते सब मिल झाड़।
कहें संत सब से बड़े, कोई न पावत पार ॥१०॥

गगन सात के ऊपरे, सतगुरु का निज धाम।
सुरतवंत कोइ पावई, सत्त शब्द बिसराम ११॥

गगन सात का भेद सुनाऊँ।
भिन्न भिन्न निरनय कर गाऊँ ॥ १२ ॥
प्रथम गगन में दो दल बासा।
श्याम सेत का वहाँ निवासा ॥ १३ ॥
दूसर गगन तिरकुटी थाना।
कवल चार दल और ठिकाना ॥ १४ ॥
तीसर गगन सुन्न परमाना।
दसवाँ द्वारा संत बखाना ॥ १५ ॥
चौथा भँवरगुफा पहिचानो।
महासुन्न के ऊपर जानो ॥ १६ ॥
पंचम सत्तलोक सतनामा।
षष्टम अलख लोक परमाना ॥ १७ ॥
सप्तम अगम लोक सुत पाया।
संतन यह पद ऊँच सुनाया ॥ १८ ॥
तिस पर आदि अनाम समाना।
आदि अंत तिसका नहिँ जाना ॥१९ ॥
सो पद भेद संत कोइ पावैं।
राधास्वामी कह समझावैं ॥ २० ॥

॥ दोहा ॥

गगन भेद निरनय, किया सैन* बैन के संग।
नैन उलट स्रुत सोड़कर, चढ़े पुकारैं सन्त॥२१॥
पद अनाम जो भाखिया, सो सतगुरु का ठाम।
शब्द शब्द को बँधती, पहुँची मूल मुक़ाम†॥२२॥

सन्त दया बिन कोई न पावे।
बिना सन्त कुछ हाथ न आवे ॥ २३ ॥
करनी भी सब सन्त बताई।
बिना मेहर पचना है भाई ॥ २४ ॥
ताते मुख्य मेहर अब रही।
सरन पड़ो राधास्वामी कही ॥ २५ ॥

****

॥ बचन तेईसवाँ ॥

हाल उत्पत्ति प्रलय रचना का और महिमा सुरत शब्द मारग की वास्ते पहुँचने निज स्थान के।

॥ शब्द पहिला ॥

बंझा‡ ने बालक§ जाया।
जिन सकल जीव भरमाया ॥ १ ॥

* इशारा। † स्थान। ‡ जिस स्त्री को लड़का न होता हो, माया। § मन।

अज्ञानी नाम कहाया ।
जिन माया सबल* उपाया ॥ २ ॥
ब्रह्मा और बिष्णु महेशा ।
नारद और सारद शेषा ॥ ३ ॥
ऋषि मुनि और जोगी ज्ञानी ।
सब को उन ले घर खाया ॥ ४ ॥
बेद पुरान शास्त्र परमाना ।
दे दे जीवन अधिक भुलाया ॥ ५ ॥
जीव अजान मर्म नहिँ जाने ।
काल दुष्ट जंजाल लगाया ॥ ६ ॥
रहट† घड़ी सम ऊँचे नीचे ।
भरमत फिरे कुछ चैन न पाया ॥ ७ ॥
कोई ज्ञान कर ब्रह्म समाने ।
कोइ उपाय बैराट समाया ॥ ८ ॥
कोइ करमी स्वर्गन मेँ पहुँचे ।
कोइ बिषई नर्कन भोगाया ॥ ९ ॥
मुक्ति पदारथ बढ़कर जाना ।
ज्ञानी ऐसा धोखा खाया ॥ १० ॥

*बलवान। †पानी खीँचने का चक्कर।

कोई काल मुक्ती रस भोगा ।
फिर नर देही आन बँधाया ॥ ११ ॥
कर्म करे जैसे देही में ।
फिर तैसा फल पाया ॥ १२ ॥
करमी विपई और उपासक ।
इन तो सदही* चक्कर खाया ॥ १३ ॥
काल जाल से कोई न बाचा ।
निज घर अपने कोई न आया ॥ १४ ॥
तब सतपुरुष दया चित आई ।
कलि में संत रूप धर आया ॥ १५ ॥
सब जीवन को दिया सँदेसा ।
सत्तलोक का भेद जनाया ॥ १६ ॥
बिरले जीव बचन उन माना ।
उनको ले सतपुर पहुँचाया ॥ १७ ॥
बहुतक जीव बँधे सुत सिमृत ।
संत बचन परतीत न लाया ॥ १८ ॥
फिर फिर माँगें वेद प्रमाना ।
उन उस घर को नेत सुनाया ॥ १९ ॥

* सदा, हमेशा ।

जब नहिँ बेद बेद का करता ।
तब का भेद संत गुहराया ॥ २० ॥
उस घर मर्म बेद नहिँ जाने ।
फिर क्योंकर परमान सुनाया ॥२१॥
यह तो बात अगम गति न्यारी ।
संत बिना कोइ नेक न गाया ॥ २२ ॥
ताते संत बचन को मानो ।
यह परतीत प्रमान दृढ़ाया ॥ २३ ॥
संत बिना कोइ मर्म न जाने ।
बेद कतेब कहाँ से लाया ॥ २४ ॥
वह तो तीन गुनन में बरते ।
काल बचन क़ानून सुनाया ॥ २५ ॥

॥ दोहा ॥

बेद बचन त्रैगुन बिषय, तीन लोक की नीत ।
चौथे पद के हाल को, वह क्या जानैं मीत २६ ॥
अब उत्पतिबर्णन करूँ, जस संतन मतमाहिँ ।
पुनिपरलयभी कहत हूँ ताते भर्म नसाय ॥ २७ ॥
सब की आदि कहूँ अब स्वामी ।
अकह अगाध अपार अनामी ॥ २८ ॥

तिन से अगम पुरुष प्रगटाये ।
अगमलोक में आसन लाये ॥ २९ ॥
अलख पुरुष का हुआ उजाला ।
अलख लोक उन चौकी डाला ॥ ३० ॥
फिर सतनाम पुरुष सत सोई ।
सत्य सत्य रचना जहँ होई ॥ ३१ ॥
सत्तलोक वह धाम सुहेला* ।
हंस करें जहँ अचरज केला ॥ ३२ ॥
इन लोकन की महिमा भारी ।
कहूँ कहा अद्भुत बिस्तारी ॥ ३३ ॥
सहस अठासी दीप निवास ।
हंस करें जहँ सदा बिलास ॥ ३४ ॥
सुख का धाम सदा सुख जहाँ ।
दुख कलेश का नाम न वहाँ ॥ ३५ ॥
नइ नइ लीला सदा अनंद ।
हंस करें नित परमानंद ॥ ३६ ॥
अमी अहार भोग परचंड† ।
सच्च खंड वह धाम अखंड ॥ ३७ ॥

* सुहावन, सुन्दर । † प्रबल ।

तहँ से भँवरगुफा रचराखी ।
सोहं पुरुष नाम कह भाखी ॥ ३८ ॥
महासुन्न इक रचा ठिकाना ।
दीप अचिंत महा मैदाना ॥ ३९ ॥
तिस के नीचे सुन्न बिलास ।
अक्षर दीप रकार प्रकास ॥ ४० ॥
वहाँ से रचा तिरकुटी धाम ।
ओंकार का जहँ बिस्राम ॥ ४१ ॥
बेद कतेब का यही मुक़ाम ।
तिरलोकी का कारन धाम ॥ ४२ ॥
झँझरीदीप* की रचन रचाई ।
निर्गुन काल की जहँ ठकुराई† ॥ ४३ ॥
गुन तीनौं यहाँ से उतपाने ।
ब्रह्मा बिष्णु महेश कहाने ॥ ४४ ॥
यहाँ से सरगुन रचा पसारा ।
चार खान उत्पति बिस्तारा ॥ ४५ ॥
जन्मैं मरैं जीव चौरासी ।
काल निरंजन डाली फाँसी ॥ ४६ ॥

* सहसदल कँवल । † हुकूमत, राज ।

वह दयाल पद कोई न पावे ।
निरगुन सरगुन चक्कर खावे ॥ ४७ ॥
अब परलय का भाखूँ लेखा* ।
जस सिमटाव जक्त का देखा ॥ ४८ ॥
काल आय जीवन को ग्रासा ।
जीव समाने काल की स्वाँसा ॥ ४९ ॥
देही कारज पृथवी होई ।
पृथवी ने गिरसी पुनि सोई ॥ ५० ॥
पृथवी घोली जल ने आय ।
जल को सोखा अगनी धाय ॥ ५१ ॥
अगनी मिली पवन के रूप ।
पवन हुई आकाश सरूप ॥ ५२ ॥
आकाश समाना माया माहिँ ।
तम रूपा दीखे कुछ नाहिँ ॥ ५३ ॥
माया रली ब्रह्म मेँ जाय ।
शक्ती शिव† मेँ गई समाय ॥ ५४ ॥
शिव पहुँचे ओंकार मँझार ।
ओंकार समाने सुन्न के द्वार ॥ ५५ ॥

*कैफ़ियत । †जोत निरंजन ।

सुन्न किया महासुन्न निवास ।
भँवरगुफा महासुन्न का बास ॥ ५६ ॥
यहाँ तक परलय कमि कमि होई ।
सत्तलोक का द्वारा सोई ॥ ५७ ॥
परलय गति आगे नहिँ आई ।
सत्तलोक मेँ कभी न जाई ॥ ५८ ॥
काल त्रिलोकी कीन्ही नास ।
महाकाल पुनि काल गिरास ॥ ५९ ॥
महाकाल पहुँचा सत द्वार ।
आगे गति नाहिँ ठिटका* वार ॥ ६० ॥
परलय महापरलय गति गाई ।
पिंड प्रलय अब कहूँ बुझाई ॥ ६१ ॥
काल किया जब तन परवेस ।
जीव चला तज यह परदेस ॥ ६२ ॥
मूलद्वार† पृथवी का बास ।
खिँचा वहाँ से स्वाँस और भास‡ ॥ ६३ ॥
खिँचकर आया इंद्री द्वार ।
वहाँ से पहुँचा नाभ मँझार ॥ ६४ ॥

*ठहर गया । †गुदा चक्र । ‡चैतन्य का प्रकाश ।

नाभी से खिंच हिरदे आया ।
हिरदे से फिर कंठ समाया ॥ ६५ ॥
पृथवी जल अग्नी और पौन ।
कंठ माहिँ ढूँधन लगी होन ॥ ६६ ॥
चारौँ तत्व भास और स्वाँस ।
यहाँ से चले खिंचे आकास ॥ ६७ ॥
दो दल कँवल काल के देस ।
कर्म अनुसार खान परवेस ॥ ६८ ॥
इस बिधि काल जीव को खाय ।
जन्मे मरे बहुत दुख पाय ॥ ६९ ॥
सतगुरु बिन नहिँ लगे ठिकाना ।
ता ते सतगुरु सरन समाना ॥ ७० ॥
सतगुरु कहैँ भेद दरसाई ।
मारग घर का देयँ बुझाई ॥ ७१ ॥
पिरथम सरन गहो सतगुरु की ।
दुतिये बाड़* धरो सतसँग की ॥ ७२ ॥
गुरु जो भेद बतावैँ तुम को ।
धारो बचन कमाओ उनको ॥ ७३ ॥

* ओट ।

तन मन इंद्री सुरत समेटो ।
चढ़ आकाश शब्द गुरु भेटो ॥ ७४ ॥
सुनो नित्य तुम अनहद बानी ।
देखो अद्भुत जोत निशानी ॥ ७५ ॥
जोत फाड़ फिर सुन्न समाओ ।
सुखमन होय बंक में आओ ॥ ७६ ॥
बंक पार त्रिकुटी सुन गीत ।
काल कर्म दोउ लीन्हे जीत ॥ ७७ ॥
सुन्न सिखर चढ़ी सूरत घूस ।
मानसरोवर पहुँची सूस ॥ ७८ ॥
महासुन्न जहँ अति अँधियार ।
गुप्त चार धुन बानी सार ॥ ७९ ॥
भँवरगुफा जाय लीन्ही चीन्ह ।
आगे सत्यलोक चढ़ लीन्ह ॥८० ॥
अलख अगम को जा कर परसा ।
शब्द पकड़ मन सूरत सरसा* ॥ ८१ ॥
राधास्वामी नगर निहारा ।
देखा जाय अगर उजियारा ॥ ८२ ॥

* आनन्द पाया ।

उत्पति परलय मारग भेद ।
जो जो सुने मिटे भ्रम खेद ॥ ८३ ॥
यह उत्पति कर भली सुनाई ।
बेद शास्त्र ताहि जाने न भाई ॥ ८४ ॥

॥ सोरठा ॥

संतन का मत गूढ़, बिना संत को जानई ।
राधास्वामीकियाज़हूर,* मानेसतसंगीकोई ॥८५॥

****

॥ बचन चौबीसवाँ ॥

॥ माया सम्बाद ॥

भेद वेदांत और हाल बाचक ज्ञानियों का और यह कि सिद्धांत पद वेदांत का सुरत शब्द मारग की कमाई से प्राप्त होगा ।

॥ शब्द पहिला ॥

चढ़ो री सखी अब अगम अटारी ।
खोल दई मेरे हिये की पिटारी ॥ १ ॥
हाथ लई मैं ने बिरह कटारी ।
काल दुष्ट का सीस कटारी ॥ २ ॥

*प्रकाश ।

तिल का परदा तुरत फटा री ।
गुरु से लिखाया अमर पटा* री ॥ ३ ॥
देख लिया अब मूल अटारी ।
बाँध लई मैं ने प्रेम जटा री ॥ ४ ॥
छोड़ दिया जग देख मठा† री ।
काम क्रोध अब दूर हटा री ॥ ५ ॥
लोभ मोह मेरा आज घटा री ।
करम भरम सब आप लटा‡ री ॥ ६ ॥
मन करे मेरा खेल नटा री ।
भर गया मेरा प्रेम घटा§ री ॥ ७ ॥
दुख सुख संसय सभी घटा री ।
छाय गई अब बिरह घटा री ॥ ८ ॥
मानसरोवर पाया तटा री ।
फ़तह किया गढ़ झटापटा री ॥ ९ ॥
अमल किया जाय अगम पुरी मैं ।
झाँक रही अब सुन झँझरी मैं ॥ १० ॥
धुन धधकार उठी जहँ भारी ।
तीन लोक से हो गई न्यारी ॥ ११ ॥

* पट्टा । † छाछ । ‡ निरबल हो गया । § घड़ा ।

घड़की छाती काल शिकारी ।
घर घर रोवे माया पुकारी ॥ १२ ॥
इन मेरा अब देश उजाड़ी ।
क्या ऐसी अब मन में धारी ॥ १३ ॥
बिनती करूँ अब राधास्वामी पै ।
और उपाय नहीं अब मो पै ॥ १४ ॥
और जीव कोइ अब न चितावें ।
घर मेरा जो चाहें बसावें ॥ १५ ॥
बहुतक जीव लिये हैं उबारी ।
एक जीव यह सब पर भारी ॥ १६ ॥
बंद करो अब अपना रस्ता ।
बहुत किया तुम मारग सस्ता ॥ १७ ॥
सुन लो स्वामी बिनती मोरी ।
मैं आई अब सरना तोरी ॥ १८ ॥
और जीव तेरे मैं हूँ किस की ।
मैं भी पकड़ी ओटा अब की ॥ १९ ॥
सुन कर बचन सुवामी बोले ।
छल बल तेरे सब हम तोले ॥ २० ॥
जीव हमारा तू नहिं पावे ।
अमर लोक को सीधा जावे ॥ २१ ॥

सिमृत शास्तर बेद पुराना ।
इन में सब जिव आय फसाना ॥ २२ ॥
संत पंथ का मारग छूटा ।
तीरथ बर्त नेम कर लूटा ॥ २३ ॥
बहुत पुजाया पत्थर पानी ।
करम भरम में जिव लिपटानी ॥ २४ ॥
ज्ञान ध्यान सब वाचक फैला ।
जोग जुक्ति में ठेलमठेला* ॥ २५ ॥
साधन चारों† सब के ढीले ।
जो समझाओ तो करें दलीले ॥ २६ ॥
मन अभिमानी जैसे फीले‡ ।
संत पंथ में ढीले ढीले ॥ २७ ॥
ना गुरु भक्ति न नाम सनेहा ।
कहो तो कहैं हम आगे कीया ॥ २८ ॥
पिछले जन्म का धोखा दे हैं ।
बिषई जीव को ले भरमै हैं ॥ २९ ॥
बालपने से बिषय कमाये ।
बिद्या पढ़ पढ़ बुद्धि बढ़ाये ॥ ३० ॥

*हटा दिया । † बैराग, बिवेक, षट, सम्पति, और ममोक्षता । ‡ हाथी ।

बुद्धि बिलास किया अब सब ने।
मान बड़ाई मैं लागे खपने ॥ ३१ ॥
देखो न्याव करं मन मैं अपने ।
बुधि से जग को कहते सुपने ॥ ३२ ॥
मन तरंग मैं छिन छिन बहते ।
तब जग को जाग्रत सम करते ॥ ३३ ॥
कोइ उन का ज़रा करे अपमाना ।
या कोइ का वह देखैं माना ॥ ३४ ॥
करैं ईर्षा उसकी भारी ।
क्रोध करैं अति छाती जारी ॥ ३५ ॥
बाहर सूरत बहुत बनावैं ।
अंतर मैं तलवार चलावैं ॥ ३६ ॥
यह उन के है मन की रहनी ।
परख परख मैं सब कह दीनी ॥ ३७ ॥
ज्ञान मते को दाग़* लगाया ।
ऐसा हि मत क्या ब्यास चलाया ॥ ३८ ॥
वह तो भये जोग मत सूरे ।
ज्ञान ध्यान उन पाया पूरे ॥ ३९ ॥

* धब्बा ।

ब्रह्म देश उन बासा कीना ।
मन और सुरत करी वहिँ लीना ॥४०॥
इतना पद उनका है पूरा ।
इनका कहना सब है कूड़ा ॥ ४१ ॥
बिना जोग कोइ ज्ञान बखाने ।
सम दम साधन कैसे आने ॥ ४२ ॥
या ते सुरत जोग अब कीजे ।
सम दम साधन वा ते लीजे ॥ ४३ ॥
बिन सम दम नहिँ आतम नंदा ।
गाँठ खुली नहिँ झूठा धन्धा* ॥ ४४ ॥
जैसे बुलबुल बाँधे पेटी ।
गई बाग़ मैं गुल†पर बैठी ॥ ४५ ॥
छिन मैं खैंच खिलाड़ी लीना ।
मिट गया आनँद दुख भया दूना ॥४६॥
ऐसे ग्रन्थ बग़ीचे माहीँ ।
करैं सैर यह ज्ञानी भाई ॥ ४७ ॥
पढ़ते पढ़ते आनँद भोगैं ।
फिर पीछे मन के बस होवैं ॥ ४८ ॥

* करतूत । † फूल ।

जो कोइ कहे चितावन कारन ।
मिथ्या कह कह मुख से भाखन ॥ ४९ ॥
रोग सोग में हालत बदली ।
जानो गाँठ बँधी नहिं खोली ॥ ५० ॥
ऐसे ज्ञान का नहीं भरोसा ।
फिर साधो मन खाया धोखा ॥ ५१ ॥
सुरत शब्द का साधन करिये ।
तब सम दम छिन माहीं पइये ॥ ५२ ॥
जो मन शब्द में ठहरे नाहीं ।
तब ही जानो सम नहिं भाई ॥ ५३ ॥
जो सम होता उन के हाथा ।
तो छिन में मन शब्द समाता ॥ ५४ ॥
मन चंचल तो ज्ञान भी चंचल ।
क्यों सुख पावे आतम निश्चल ॥ ५५ ॥
आतम सुख की क्या कहुँ महिमा ।
जिन्हें परापत तिनहीं जाना ॥ ५६ ॥
आतम में वह हर दम बरते ।
कहो तुम कितनी विरती धरते ॥ ५७ ॥

जो बिरती आतम नहिँ माने ।
तो सम ही का घाटा* जाने ॥ ५८ ॥
जो बिरती आतम को परसे ।
दिन छिन आनँद बढ़ता दरसे ॥ ५९ ॥
जक्त भोग सब छिन में फैंके ।
बाल दशा होय जग को छेके† ॥ ६० ॥
अंतर बिरती ऐसी रहई ।
बाहर से कुछ काज न सरई ॥ ६१ ॥
आप आप को आप पिछानो ।
कहा और का नेक न मानो ॥ ६२ ॥
ज्ञानी के प्रारब्ध न रहती ।
देही उसकी बिदेही में बरती ॥ ६३ ॥
यह जो गति तुम में नहिँ आई ।
झूठा ज्ञान तुम्हारा भाई ॥ ६४ ॥
बिना जोग ज्ञानी नहिँ होई ।
जनम मरन से छुटे न कोई ॥ ६५ ॥
पिछला जोग कभी नहिँ पाई ।
ता ते सुरत जोग ठहराई ॥ ६६ ॥

* कमी । † दूर करे ।

संत मता अब धारो नीका* ।
सुरत शब्द यह सब का टीका ॥ ६७ ॥
वह तो धर्म जुगन पिछले का ।
इस जीवन का बल नहिं बूता ॥ ६८ ॥
जब थे जिव सब ईश्वर कोटी ।
अब जीवों की बुधि है खोटी ॥ ६९ ॥
जीव कोट में इनकी गिन्ती ।
यह नहिं धारें उनकी जुक्ती ॥ ७० ॥
या ते ज्ञान जोग दोउ खंडन ।
भक्ति भाव संतन कियो मंडन† ॥ ७१ ॥
सुरत शब्द की अब करो करनी ।
तौ उनकी सी हो जाय रहनी ॥ ७२ ॥
ईश्वर पद जब घट में पाओ ।
ईश्वर कोटी तुम हो जाओ ॥ ७३ ॥
जब वह ज्ञान सुफल होय तुम को ।
नहिं अधिकार ज्ञान का सब को ॥७४॥
जब लग निश्चल चित्त न होई ।
ज्ञान बचन को सुनो न कोई ॥ ७५ ॥

* अच्छे तौर से । † स्थापित ।

बिन उपाशना चित नहिँ ठहरे ।
शब्द बिना कोइ उपास न है रे ॥७६॥
जो उपाशना कहे हम कीन्ही ।
पिछले जन्म भुगत हम लीन्ही ॥७७॥
तौ मन निश्चल आतम माहीँ ।
होना चहिये अचरज नाहीँ ॥ ७८ ॥
जो मन आतम रंग न राचा* ।
तौ जानो सब कहना काचा ॥ ७९ ॥
अब चहिये फिर करैँ उपासन ।
जासे कटैँ सभी मन बासन† ॥ ८० ॥
जो तुम कहो कदाचित ऐसी ।
ज्ञानी को करनी नहिँ रहती ॥ ८१ ॥
लक्ष‡ गियानी की यह बातैँ ।
बाचक को सोभा नहिँ या ते ॥ ८२ ॥
अब मन मैँ तुम खूब बिचारो ।
बाचक तुमही हो अस धारो ॥ ८३ ॥
धोखा मत खाओ पढ़ पोथी ।
क्योँ ऐसी बातैँ करो थोथी ॥ ८४ ॥

* भीना हुआ । † बासना । ‡ प्रत्यक्ष ।

भक्ति भाव को मन में धारो ।
कलजुग का यह धर्म सम्हारो ॥ ८५ ॥
सत्तपुरुष ने धारा रूपा ।
संत स्वरूप भये जग भूपा ॥ ८६ ॥
हुक्म दिया क़तई अब ऐसा ।
भक्ति बिना तरना कहो कैसा ॥ ८७ ॥
गुरु भक्ती बिन तरे न कोई ।
बिन गुरु ज्ञान पार नहिँ होई ॥ ८८ ॥
शब्द ज्ञान गुरु ज्ञान पिछानो ।
और गुरू सब झूठे जानो ॥ ८९ ॥
धुन का नाम शब्द है भाई ।
द्वार दसम से जो नित आई ॥ ९० ॥
जब तक सुरत न पकड़े धुन को ।
मार न सक्ता कोई मन को ॥ ९१ ॥
बिन मन मारे कभी न तरना ।
जनम जनम भौसागर पड़ना ॥ ९२ ॥
सुरत शब्द से मन को मारो ।
और जतन कोई मत धारो ॥ ९३ ॥

काल पड़ा जीवन के पाछे ।
दूध छिपाय पिलावे छाछे* ॥ ९४ ॥
षट शास्तर और चारौं वेदा ।
यह संतन ने किये निषेधा ॥ ९५ ॥
बानी अपनी जुदी बनाई ।
मूरख उन से बिधी मिलाई ॥ ९६ ॥
संग पंडितन जिस ने कीन्हा ।
बुद्धि हरी भये काल अधीना ॥ ९७ ॥
काल दूत तुम उन को जानो ।
उन की बात ज़रा मत मानो ॥ ९८ ॥
संतन का मत उन से न्यारा ।
गुरु पूरे सँग करो बिचारा ॥ ९९ ॥
बिन गुरु पूरे हाथ न आवे ।
गुरु पूरा जो शब्द बतावे ॥ १०० ॥
शब्द अर्थ जो और लगावे ।
धुन के बिना झूठ वह गावे ॥ १०१ ॥
शब्द कहो चाहे धुन अनहद ।
और अर्थ नहिँ येही अद्भुत ॥ १०२ ॥

* मट्ठा ।

बार बार मैं कहा बनाई ।
शब्द बिना नहिं और कमाई ॥ १०३ ॥
जो तुम चाहो अपन उधारा ।
पकड़ो शब्द करो मत बारा* ॥ १०४ ॥
मैं अपनी सी सब कह दीनी ।
आगे साहेब मौज अधीनी ॥ ॥ १०५ ॥
जिन पर किरपा उन की होई ।
शब्द भेद जानेगा सोई ॥ १०६ ॥
धुन अंतर मन राखो अपना ।
बार बार कहूँ मानो बचना ॥ १०७ ॥
काल बड़ा बरियार कहावे ।
या से कोई न बचने पावे ॥ १० ॥
बिना संत कभी नाहिं उबारा ।
तीन लोक से होय न पारा ॥ १०९ ॥
चौथा लोक संत दरबारा ।
वहाँ पहुँचे संतन का प्यारा ॥ ११० ॥
सुरत शब्द का मारग लीजे ।
सत्तलोक को प्याना† कीजे ॥ १११ ॥

* देरी । † कूँच, रवानगी ।

और मते सबकाल पसारे ।
हिन्दू मुसलमान सब सारे ॥ ११२ ॥
जैनी और अँगरेज बिचारे ।
ईसा पारसनाथ पुकारे ॥ ११३ ॥
वह ईसा को बेटा मानैं ।
वह तीर्थंकर उनको जानैं ॥ ११४ ॥
यह तो बात सही मैं मानूँ ।
पर इस में इक भेद बखानूँ ॥ ११५ ॥
तिरलोकी का नाथ जो कहिये ।
ईसा उसका बेटा सहिये ॥ ११६ ॥
तीर्थंकर भी उसको जाना ।
नाम निरंजन कहैं निरबाना ॥ ११७ ॥
पद निरबान कहैं हैं जैनी ।
उनके मत की सब हम चीन्ही ॥ ११८ ॥
राम ब्रह्म हिंदू कर बोले ।
अल्ला खुदा मुसल्माँ तोले ॥ ११९ ॥
खुद खुदाय* का मर्म न जाना ।
राम ब्रह्म का बाप छिपाना ॥ १२० ॥

* सच्चे मालिक ।

राम ब्रह्म से वह पद आगे ।
चौथा लोक संत जहँ लागे ॥ १२१ ॥
नानक और कबीर बखाना ।
तुलसी साहेब निज कर जाना ॥ १२२॥
उन की बानी वह पद गावे ।
सच्चखंड सतलोक लखावे ॥ १२३ ॥
अब संसय कुछ करो न भाई ।
सत्तलोक की आसा लाई ॥ १२४ ॥
निश्चय कर आसा दृढ़ राखो ।
सुरत शब्द का मारग ताको ॥ १२५ ॥
सब बिद्या और करमा धरमा ।
दूर बहाओ यह सब भरमा॥ १२६ ॥
जीव उबार न इन से होई ।
सुरत शब्द अब धारो सोई ॥ १२७ ॥
चारों मत को यह उपदेशा ।
पकड़ शब्द जाओ उस देशा ॥ १२८ ॥
चौथा लोक अगम है भाई ।
सोभा वहाँ की बरनी न जाई ॥ १२९ ॥
सत्तपुरुष जहँ सदा बिराजें ।
कँवल सिंघासन ता पर गाजें ॥१३०॥

कोटि सूर और चंद्र कराल्ती ।
रोम रोम प्रति सदा लजाती ॥ १३१ ॥
हंसन दीप जुदे रच राखे ।
अमी अहार सभी नित चाखे ॥ १३२ ॥
अमृत कुंड भरे जहँ भारी ।
सच्च खंड की शोभा न्यारी ॥ १३३ ॥
और बिलास अनेकन भाई ।
भिन्न भिन्न कुछ कहा न जाई ॥ १३४ ॥
हीरे मोती लाल अपारा ।
भरे जहाँ अचरज भंडारा ॥ १३५ ॥
राग रागनी सदा बसंता ।
महिमा कहूँ कहा नहिं अंता ॥ १३६ ॥
अंतवंत तिरलोकी जानो ।
वह अस्थान सदा थिर* मानो ॥ १३७ ॥
शोभा हंसन कहा कहुँ भाई ।
सूर चंद बहु देख लजाई ॥ १३८ ॥
नाना बिधि जहँ उठैं सुगंधा ।
कोटि मलय जहँ मानो सदा ॥ १३९ ॥

* ठहराऊ ।

हंस करैं जहँ सदा बिलासा ।
पुरुष दरस दूजी नहिँ आसा ॥ १४० ॥
हंस करैं जहँ सदा अनंदा ।
काल कष्ट नाहीँ कुछ धन्धा ॥ १४१ ॥
देखैं अचरज भोगैं अचरज ।
कहूँ कहा सब अचरज अचरज ॥१४२॥
बुधिवानौं की बुद्धि हिराई ।
बिद्यावान नहीँ कुछ पाई ॥१४३ ॥
बुधि और बिद्या दोनौं हारैं ।
संत मते पर सिर धुन मारैं ॥ १४४ ॥
बुधि बिचार से समझा चाहैं ।
कभी न पावैं भटका खावैं ॥ १४५ ॥
या ते बुधि बल सबही छोड़ो ।
मन और सुरत शब्द में जोड़ो ॥ १४६ ॥
करो कमाई जिस दिन भाई ।
बुद्धी से कुछ भेद न पाई ॥ १४७ ॥

॥ दोहा ॥

यह करनी का भेद है, नाहीँ बुद्धि बिचार।
बुद्धि छोड़ करनी करो, तौ पावो कुछ सार १४८

॥ शब्द दूसरा ॥

घट कपट दूर कर भाई ॥ टेक ॥
सरधा भाव चरन मैं राखो ।
प्रीत प्रतीत बढ़ाई ॥ १ ॥
मुँह के कहे काज नहिँ होगा ।
जब लग मन मैं प्रेम न आई ॥२॥
बाचक सूर कहैँ अपने को ।
बिन रन देखे करत बड़ाई ॥ ३ ॥
बैरी सन्मुख होत कदाचित ।
ऐसे भागैँ खोज न पाई ॥ ४ ॥
छाया तिमर बुद्धि पर ऐसा ।
अपनी गति की बूझ न लाई ॥५॥
जैसे मूसा बिल का सूरा ।
बिल्ली का भय चित न समाई ॥६॥
बिल मैं बैठे बातैं मारैं ।
बिल्ली को हम मार गिराई ॥ ७ ॥
बिल्ली बिल पर आन पुकारी ।
आओ सूरमा बड़े सिपाही ॥ ८ ॥
सुन कर म्याउँ चयाउँ घबराये ।
इक इक भागे ख़बर न पाई ॥ ६ ॥

ऐसे ज्ञानी बाचक जग मैं ।
निज बैराग की करत बड़ाई ॥१०॥
भागहीन माया नहिँ पूछे ।
मन जाने हम त्याग कराई ॥ ११ ॥
धन वालोँ को ढूँढ़त डोलैं ।
काहू के उपदेश समाई ॥ १२ ॥
जो संजोग बने कहिँ ऐसा ।
बिषय परापत होता जाई ॥ १३ ॥
तौ भोगैँ पूरे बन जावैँ ।
कहवैँ मन का धर्म सुनाई ॥ १४ ॥
अथवा परारब्ध सिर डालैँ ।
तरह तरह की बात बनाई ॥ १५ ॥
राग द्वेष मैँ छिन छिन बरतैँ ।
अब बैराग कहाँ गया भाई ॥ १६॥
अन मिलते के त्यागी जानो ।
ज्ञान लखौटा* कहत सुनाई ॥ १७ ॥
योँ तो सख़्त कड़ा पत्थर सा ।
अग्नी आगे पिघला जाई ॥ १८ ॥

* लाह का ।

सुख से मान अपमान समाना ।
बरतन* मैं निज मानहि चाही ॥१९॥

जो अपमान करे कोइ उनका ।
क्रोध करैं वैरी बन जाई ॥ २० ॥

मान करे मन की सी बोले ।
प्रीत करैं स्वारथ लिपटाई ॥ २१ ॥

और कर्म सबही नित करते ।
भक्ति भाव मैं रहे अलसाई ॥ २२ ॥

जो भक्ती संतन ने भाखी ।
ता का मर्म नेक नहिं पाई ॥ २३ ॥

खान पान बस्तर तन किरिया ।
सब करते इक भक्ति हटाई ॥ २४ ॥

ब्योहारक जग सत्त बतावैं ।
भक्ती का ब्योहार छुड़ाई ॥ २५ ॥

तीरथ बरत नेम षट करमा ।
पूजा पाठ करैं नित आई ॥ २६ ॥

पोथी पुस्तक बिद्या नाना ।
पढ़ैं पढ़ावैं बहु बिधि भाई ॥ २७ ॥

* बरताव करने में

सैर तमाशा देश दिशंतर ।
मेला ठेला जात भ्रमाई ॥ २८ ॥
यह करतूत न छोड़ैं कबही ।
भक्ती से पुन* जन्म बताई ॥ २९ ॥
ज्ञान सता मारग ठहराया ।
जो भक्ती का फल था भाई ॥ ३० ॥
भक्ति दीनता करैं न आदर ।
अपनी भक्ती करन सिखाई ॥ ३१ ॥
धन और माल देय जो कोई ।
तो पाखँड सँग लेत गठाई ॥ ३२ ॥
और ब्यौहार करैं सब जग का ।
इक भक्ती से बिरोध जनाई ॥ ३३ ॥
भक्ती की परवाह न राखैं ।
हानि समझ मानो डरहि लगाई ॥ ३४ ॥
गुरु भक्ती सुपने का सिंघ कहैं ।
ता को छोड़त देर न लाई ॥ ३५ ॥
और कर्म और भोग जक्त के ।
यह नहिँ छोड़ैं बरतैं जाई ॥ ३६ ॥

* पुनर ।

काग बिष्ट सम मुख से कहते ।
सो नहिं छूटे बिष्टा खाई ॥ ३७ ॥
भक्ति भाव को छिन छिन छोड़ा ।
और करम दम साथ निबाही ॥३८॥
जिन बातों सें मन मरता था ।
सो मिथ्या कर दूर कराई ॥ ३९ ॥
और कर्म कोइ किया न मिथ्या ।
सब फ़ैलों में चित्त खपाई ॥ ४० ॥
ऐसे मूरख मन के मौजी ।
निर्भय बरतें ख़ौफ़ न लाई ॥ ४१ ॥
सुरत शब्द मारग नहिं धारें ।
संत बचन परतीत न आई ॥ ४२ ॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
ऐसा मत कोइ गहो न भाई ॥ ४३ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

हे बिद्या तू बड़ी अबिद्या ।
संतन की तैं क़दर न जानी ॥ १ ॥
संत प्रेम के सिंध भरे हैं ।
तैं उलटी बुधि कीचड़ सानी ॥ २ ॥

*कामों ।

संतन प्रेम लगा प्यारे से ।
उनकी सूरत शब्द समानी ॥ ३ ॥
तू धन मान प्रतिष्ठा चाहे ।
और चतुरता में लिपटानी ॥ ४ ॥
कलि में जीव बहुत तैं घेरे ।
बिरले गुरुमुख बचे निदानी ॥ ५ ॥
उन की प्रेम अनुभवी बानी ।
तू बुद्धी सँग रहत खपानी ॥ ६ ॥
बिद्या पढ़ पढ़ बहुत पचे हैं ।
प्रेम बिना कुछ हाथ न आनी ॥७॥
अर्थ संप्रदा कर कर फूले ।
अनुभव की उन सार न जानी ॥८॥
बानी बन में रहे भुलाने ।
पढ़ पढ़ पोथी जन्म बितानी ॥ ९ ॥
घट के भीतर नेक न ठहरैं ।
मन चंचल की गति न पिछानी॥१०॥
बाहर मुखी ग्रन्थ नित पढ़ते ।
घट की पोथी पढ़ैं न पढ़ानी ॥११॥

* टीका ।

घट का भेद कहो जो उन से ।
तौ उन का मन देत न हामी* ॥१२॥
संत गगन में सुरत चढ़ावैं ।
वे सुनते नित व्हाँ की बानी ॥१३॥
उनकी गत मत अगम अपारा ।
तू लोगन को रीझ रिझानी ॥१४॥
प्रेमी जीव न मानैं तेरी ।
तू अपनी सी कहत कहानी ॥१५॥
अस्तुत के भूखे तुम निस दिन ।
मान अस्तुती चाह भरानी ॥१६॥
अपने औगुन आप बिचारो ।
और काढ़न की जुगत कमानी ॥१७॥
धोखे में क्यों जनम बिताओ ।
सुरत शब्द में नित्त चढ़ानी ॥१८॥
बिद्या छोड़ करो यह करनी ।
तौ पावो सतनाम निशानी ॥१९॥
बिद्या पढ़ मन से नहिं जीतो ।
बिरथा थोथे तीर चलानी ॥२०॥

* मानना ।

संत मता बिद्या से न्यारा ।
बिद्या ठगनी जीव ठगानी ॥ २१ ॥
भक्ती भाव प्रेम नहिँ उनके ।
प्रेमी को वे मूरख जानी ॥ २२ ॥
बिद्या के बल रहेँ अभिमानी ।
संतन से उन प्रीत न ठानी ॥ २३ ॥
जीव अकाज सोच नहिँ मन मेँ ।
जक्त बड़ाई मन मेँ समानी ॥ २४ ॥
मुँह से मिथ्या जग को कहते ।
बरतन मेँ सो सच्चा मानी ॥ २५ ॥
मान अपमान समान न कीन्हा ।
बाचक बिद्या रहे भुलानी ॥२६॥
ताते बिद्या सभी भुलाओ ।
संत सरन पकड़ो अब आनी ॥२७॥
बे बिद्या के जो नर प्रेमी ।
सो संतन के सँग लिपटानी ॥२८॥
बिद्यावान एक नहिँ ठहरे ।
ताते बिद्या बिघन पिछानी ॥ २९॥
सन्त न बिद्या पढ़ते कोई ।
उन के अनुभव समुँद समानी ॥३०॥

उन का प्यार लगा प्यारे से ।
विद्या क्योंकर याद रहानी ॥३१॥
तन मन की सब सुध बिसरानी ।
बिद्या बुधि फिर क्यौं ठहरानी॥३२॥
सब परकार प्रेम की महिमा ।
बिद्या अबिद्या दोनौं हानी॥३३॥
जिन का प्रेम शब्द मैं नाहीं ।
उनको बिद्या ख़्वार* करानी॥३४॥
जनम मरन से छुटैं न भाई ।
चौरासी मैं बहैं बहानी ॥ ३५ ॥
बिद्या भूल चढ़ो अब घट मैं ।
सुरत शब्द मैं लाओ तानी ॥ ३६ ॥
बिद्या भी बुधि बिषय पिछानो ।
यह आशक्ती भली न जानी ॥३७॥
कथनी बदनी काम न आवे ।
भक्ति बिना जम के सहे डानी† ॥३८॥
गुरु भक्ती बिन सब जग चूका ।
अनेक सियानप‡ मैं भरमानी ॥३९॥

* ख़राब । † डंड । ‡ चतुरता ।

और जतन मिथ्या सब जानो ।
यही जतन मैं कहा प्रमानी ॥ ४० ॥
शब्द कमाई करो प्रेम से ।
राधास्वामी कहत बखानी ॥ ४१ ॥

****

॥ बचन पच्चीसवाँ ॥

बर्णन मूल बेदान्त मत और बेदान्तियों का जोकि काल पुरुष के लक्ष स्वरूप को अनामी रूप और सिद्धान्त समझ कर उस में समाये और सिन्ध स्वरूप राधा-स्वामी की प्रतीत नहीं करते और उस की ख़बर न पाई ॥

॥ शब्द पहिला ॥

सतगुरु आरत लीन्ह सिँगारी ।
जड़ चेतन से सुरत निकारी ॥ १ ॥
जीव चेतन्य देश अब छोड़ा ।
शब्द चेतन्य देश किया पोढ़ा* ॥ २ ॥
सहसकँवलदल लिया अकाश ।
चढ़ कर पहुँची गिर† कैलाश ॥ ३ ॥

* मज़बूत । † परबत ।

द्वारा सुखमन नाका बंक।
तोड़ा फोड़ा उलटी गंग* ॥ ४ ॥
गंगा जमुना सरस्वती तीन।
धार त्रिबेनी लीन्ही चीन ॥ ५ ॥
त्रिकुट जाय लंका गढ़ घेरा।
रावन ब्रह्म राम मन हेरा ॥ ६ ॥
सीता धुन ले सूरत साधी।
पहुँची जाय अवधपुर† आदी ॥ ७ ॥
राज किया घर अजर बसाया।
रावन सीता राम समाया ॥ ८ ॥
गिर सुमेर परबत कंचन घर।
भान उलट फेरा शशि‡ मंदर ॥ ९ ॥
सुन्न नगर बस्ती जहँ अक्षर।
दीप अचिंत लखा निहअक्षर ॥ १० ॥
अक्षर निहअक्षर धुन पारा।
महासुन्न का ताका द्वारा ॥ ११ ॥
द्वारे धस गई भँवर गुफा मैं।
धारा सोहं सुरत सफ़ा मैं ॥ १२ ॥

* सुरत की धार। † दसवाँ द्वार। ‡ चन्द्रमा।

उलटी पहुँची सत्त नगर में ।
धाई दौड़ी अलख डगर में ॥ १३ ॥
अगम लोक जाय अधर सिधारी ।
अगम पुरुष दीदार करा री ॥१४॥
संतन उनमुन* देश बखाना ।
बिस्मादी† हैरत अस्थान ॥ १५ ॥
सोई अनामी अकह कहाया ।
रूप न रेख न रंग धराया ॥ १६ ॥
यह पद संतन निज कर थापा ।
बिन जाने सब कहते आपा ॥१७॥
इतने ऊँचे जो कोई चढ़े ।
रूप रंग रेखा ते टरे ॥ १८ ॥
सत्त लोक तिरलोकी चारी ।
रूप रंग रेखा सब धारी ॥ १९ ॥
चार लोक के जो होय पार ।
रूप रंग रेखा तज न्यार ॥ २० ॥
सिंध बुन्द तज आतम आया ।
पिंड अंड ब्रह्मण्ड समाया ॥ २१ ॥

*अपने में आप मगन । † अचरज रूपी ।

आतम लक्ष जान लिया जिस ने ।
रूप रंग रेखा नहिँ तिस मैं ॥ २२ ॥
बुंद ज्ञान लिरपत हुए मन मैं ।
सिंध ज्ञान पाया नहिँ सुपने ॥ २३ ॥
बुंद देश है अति ही नीचा ।
सिंध देश है सब से ऊँचा ॥ २४ ॥
बुंद सिंध को एक मिलावैं ।
बुंद देश को सिन्ध बतावैं ॥ २५ ॥
सिंध देश जहँ संत बखाने ।
संत बचन परतीत न आने ॥ २६ ॥
रूप रंग रेखा से न्यारा ।
सिंध देश को सन्त पुकारा ॥ २७ ॥
बुन्द माहिँ रँग रूप न रेखा ।
बीज रूप था इन नहिँ देखा ॥२८॥
यह पद वह पद एक न होई ।
बुधि से बिधी* मिलावैं सोई ॥ २९ ॥
मेरे मत मूरख यह ज्ञानी ।
कैसे इन को कहूँ बखानी ॥ ३० ॥

---
* मेल ।

यह परमान बेद का मानैं ।
सन्तन की परतीत न आनैं ॥ ३१ ॥
सन्त देश इन सुना न देखा ।
सब को दिया काल ने धोखा ॥ ३२ ॥
सिन्ध छिपाय बुंद दिखलाई ।
बुन्द देख सब गये भुलाई ॥ ३३ ॥
सिन्ध भेद जो सन्त बतावें ।
बुन्द माँहिं ले सभी घटावें ॥ ३४ ॥
अब इन को क्योंकर समझाऊँ ।
हार मान अब चुप रहाऊँ ॥ ३५ ॥
आरत करूँ और प्रेम बढ़ाऊँ ।
इन का झगड़ा अब नहिं गाऊँ ॥३६॥
सुरत शब्द ले खैंच चढ़ाऊँ ।
सिन्ध माहिँ अब सहज समाऊँ ॥३७॥
राधास्वामी सतगुरु पाये ।
महिमा उनकी अगम अथाये ॥३८॥
बार बार जाऊँ बलिहारी ।
चरन सरन पर तन मन वारी ॥ ३९॥

सोरठा

वार पार का भेद, आदि अंत सबहीलखा।
पाया अगम अभेद, मूलभरमसबहीथका ४०

॥ शब्द दूसरा ॥

जग जाग्रत भी दुख मूल
सुपना भी दुख सुख सूल* ॥ १ ॥
सुषपति कुछ घर आराम।
वह भी नहिँ ठहरन धाम ॥ २ ॥
तीनों मैं भरमत आठों जाम।
पूरा नहीँ कहीँ बिसराम ॥ ३ ॥
अब करिये कौन उपाय।
का से अब पूछूँ जाय ॥ ४ ॥
तड़पूँ और तरसूँ निस दिन।
बिरह अग्नि जलूँ मैं दिन दिन ॥ ५ ॥
कोइ राह न सुख की गावे।
सब करम भरम भरमावैं ॥ ६ ॥
कोइ तीरथ बरत बतावे।
कोइ जप तप माहिँ लगावे ॥ ७ ॥

* कष्ट।

निज भेद कहे नहिँ कोई ।
बिरथा नर देही खोई ॥ ८ ॥
यह सोच करा मैं भारी ।
तब सतगुरु आन सम्हारी ॥ ९ ॥
कर दया भेद बतलाया ।
तुरिया* पद मारग गाया ॥ १० ॥
तुरिया से आगे बरना ।
फिर उससे आगे चलना ॥ ११ ॥
तिस के भी परे लखाया ।
उस के भी पार सुनाया ॥ १२ ॥
तिस परे और समझाया ।
कुछ आगे और बुझाया ॥ १३ ॥
वहाँ से पुनि आगे भाषा ।
निज धाम मुख्य यह राखा ॥ १४ ॥
संतन गति अगम सुनाई ।
जहँ बेद कतेब न जाई ॥ १५ ॥
तुरिया मैं सब थक बैठे ।
आगे कोइ मर्म न देखे ॥ १६ ॥

* सहसदल कँवल ।

इतने पद संत बताई ।
बिन सुरत शब्द नहिं पाई ॥ १७ ॥
सतगुरु फिर भेद बतावैं ।
अब खुल कर तोहि सुनावैं ॥ १८ ॥
तुरिया पद सहसकँवल सैं ।
तिस आगे चढ़ त्रिकुटी मैं ॥ १९ ॥
दस द्वारा सुन मैं खोलो ।
फिर महासुन्न चढ़ तोलो ॥ २० ॥
चढ़ भँवरगुफा तब आई ।
फिर सत्तनाम पद पाई ॥ २१ ॥
व्हाँ से भी चली अगाड़ी ।
हुइ अलख पुरुष दरबारी ॥ २२ ॥
जाय अगम लोक को लीन्हा ।
लीला सब व्हाँ की चीन्हा ॥ २३ ॥
राधास्वामी धाम लखाया ।
अब यही ठीक घर पाया ॥ २४ ॥
वह तुरिया भी नहिं पावैं ।
बातौं की तुरिया गावैं ॥ २५ ॥

* जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति ।

तीनों* में चेतन बरते ।
वाही को तुरिया कहते ॥ २६ ॥
बाचक यह बड़े अन्याई ।
अवस्था चौथी सोऊ गँवाई ॥ २७ ॥
जोगेश्वर ज्ञानी पिछले ।
चढ़ सूरधनी* घट खेले ॥ २८ ॥
उन चार अवस्था गाई ।
पंचम कहा चेतन भाई ॥ २९ ॥
चारों से न्यारा गाया ।
ताहि आतम भाष सुनाया ॥ ३० ॥
इन सूरधनी घर त्यागा ।
मन अकाश आतम कह भाषा ॥ ३१ ॥
क्योंकर इन कहूँ बुझाई ।
इन बहुतहि धोखा खाई ॥ ३२ ॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
तुम बचियो इन से भाई ॥ ३३ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

सुरत मेरी दुबिधा† आन छली ।
बान अस मारा काल बली ॥ १ ॥

* ओङ्कार पद । † संशय ।

कौन उपाव करूँ अब सजनी।
संशय अगिन सें जाल जली॥ २॥
इक गुरु ज्ञान बेदान्त सुनावें।
इक गुरु भाखैं शब्द गली॥ ३॥
मैं अजान कुछ मर्म न जानूँ।
कौन राह को गहूँ भली॥ ४॥
शब्द कमाई होय न मो से।
यही खटक अब चित्त खली* ॥ ५॥
ज्ञान बचन भी समझ न आवे।
दोउ में एक न मोहिं मिली॥ ६॥
अब क्या करूँ हार कर बैठी।
मौज बिना क्या पेश चली॥ ७॥
राधास्वामी कहत बुझाई।
छोड़ो दुबिधा शब्द पिली॥ ८॥
ज्ञान मता यह काल पसारा।
सब जीवन को खात दली†॥ ९॥
सुरत शब्द मत दयाल सुनाया।
पकड़ गहूँ अब नाहिं टली॥ १०॥

* दुख देती रही। †टुकड़े करके।

॥ बचन छब्बीसवाँ ॥

॥ सुरत सम्बाद ॥

जिस मेँ कुल भेद संत याने राधास्वामी मत का और और मतोँ का जो संसार मेँ प्रवृत्त हैँ और जुक्ति उसमेँ सुरत शब्द मारग की और निज भेद मुक़ामात का बर्णन किया है ॥

॥ प्रश्न पहिला ॥

अब सूरत पूछे स्वामी से ।
भेद कहो अपना तुम मो से ॥ १ ॥
बास तुम्हारा कौन लोक मेँ ।
यहाँ आये तुम कौन मौज मेँ ॥ २ ॥
देस तुम्हारा कितनी दूर ।
खोजे सुरत न पावे सूर* ॥ ३ ॥
मैँ बिछुड़ी तुम से कहो कैसे ।
देस पराये आई जैसे ॥ ४ ॥
मेरा हाल भिन्न कर गाओ ।
देस आपना मोहिँ लखाओ ॥ ५ ॥

* मूल ।

मन तन संग पड़ी मैं कब से ।
दुख पाये बहुतक मैं जब से ॥ ६ ॥
क्यों भूली मैं देस तुम्हारा ।
आय पड़ी परदेस निहारा ॥ ७ ॥
पाताल बसो कि मृत्यु लोक में ।
स्वर्ग बसो कि ब्रह्म लोक में ॥ ८ ॥
बिष्णु लोक बैकुण्ठ धाम में ।
इन्द्रपुरी या शिव सुक़ाम में ॥ ६ ॥
कृष्ण लोक या राम लोक में ।
प्रकृत लोक या पुरुष लोक में ॥ १० ॥
या तुम ब्यापक सभी लोक में ।
चार खान चर अचर* थोक† में ॥ ११ ॥
क्यों मोहिं डाला काल लोक में ।
अति भरमाया हर्ष शोक में ॥ १२ ॥
अब क्यों आये मोहिं चितावन ।
रूप धरा तुम अति मन भावन ॥ १३ ॥
मैं दासी तुम चरन निहारे ।
भेद देव तुम अपने सारे ॥ १४ ॥

* चेतन्य और जड़ । † भंडार ।

॥ उत्तर अंग पहिला ॥

तब हँस शब्द सुवामी बोले ।
सुनो सुरत तुम मैं कहुँ खोले ॥ १५ ॥
जो तू पूछे भेद हमारा ।
कहूँ सभी अब कर बिस्तारा ॥ १६ ॥
मैं हूँ अगम अलाम अमाया ।
रहूँ मौज में अधर समाया ॥ १७ ॥
मेरा भेद न कोई पावे ।
मैं ही कहूँ तो कहन में आवे ॥ १८ ॥
पिरथम अगम रूप मैं धारा ।
दूसर अलख पुरुष हुआ न्यारा ॥१९॥
तीसर सत्त पुरुष मैं भया ।
सत्तलोक मैं ही रच लिया ॥ २० ॥
इन तीनों में मेरा रूप ।
यहाँ से उतरीं कला अनूप* ॥ २१ ॥
यहाँ तक निज कर मुझ को जानो ।
पूरन रूप मुझे पहिचानो ॥ २२ ॥
अंस दोय सतपुरुष निकारी ।
जोत निरंजन नाम धरा री ॥ २३ ॥

* जिस की उपमा न कर सकें ।

यह दो कला उलट कर आईं ।
भँभरी दीप में आन समाईं ॥ २४ ॥
यहाँ बैठ तिरलोकी रची ।
पाँच तीन की धूम अब मची ॥ २५ ॥
तीन लोक से मैं रहुँ न्यारा ।
चार पाँच छः में बिस्तारा ॥ २६ ॥
तीन लोक इक बुन्द पसारा ।
सिंध रूप मैं अगम अपारा ॥ २७ ॥
मैं न पताल स्वर्ग नहिं मिरता* ।
ब्रह्मा बिष्णु महेश न जुगता† ॥ २८ ॥
नहिँ गोलोक नहीं साकेत‡ ।
इन्द्रपुरी नहिँ ब्रह्म समेत ॥ २९ ॥
तीन लोक व्यापक मैं नहीँ ।
बुन्द एक मेरी रहाँ रही ॥ ३० ॥
उसी बुन्द का सकल पसारा ।
बेद ताहि कहे ब्रह्म अपारा ॥ ३१ ॥
बेदान्ती याहि ब्रह्म बखानैं ।
सिद्धान्ती याहि शुद्ध पुकारैं ॥ ३२ ॥

*मृत्यु लोक । †माया । ‡राम लोक ।

इस के आगे भेद न पाया ।
सतगुरु बिन उन धोखा खाया ॥ ३३ ॥
जितने मत हैं जग के माहीं ।
इसी बुन्द को सिंध बताहीं ॥ ३४ ॥
सिंध असल रहा इन से न्यारा ।
बेद कतेब न ताहि सम्हारा ॥ ३५ ॥
ब्रह्मादिक सब बेद भुलाये ।
ऋषि मुनि करम भरम लिपटाये ॥३६॥
पीर पैग़म्बर क़ुतुब औलिया ।
बुन्द भेद पूरा नहिं मिलिया ॥ ३७ ॥

॥ उत्तर अंग दूसरा ॥

सुनो सुरत तुम अपना भेद ।
तुम हम में यों सदा अभेद ॥ ३८ ॥
काल करी हम सेवा भारी ।
सेवा बस होय कुछ न बिचारी ॥३९ ॥
तुम को माँगा हम से उसने ।
सौंप दिया तुम्हें सेवा बस में ॥ ४० ॥
काल लाय तन मन में घेरा ।
दुख सुख पाया तुम बहुतेरा ॥ ४१ ॥

दुख मैं देखा तुम को जबही ।
दया उठी हम आये तबही ॥ ४२ ॥
आय किया हम शब्द उपदेशा ।
शब्द माहिँ तुम करो प्रवेशा ॥ ४३ ॥
शब्द शब्द पौड़ी* हम रची ।
चढ़ चढ पहुँचो नगरी सची ॥ ४४ ॥
बुन्द देस को छोड़ो अबही ।
सिंध देश चल खेलो तबही ॥ ४५ ॥
बुन्द देस तिरलोकी जानो ।
रचन मुरक्कब† यहाँ पहिचानो ॥ ४६ ॥
मुफ़रद‡ रचना तुम्हरे देस ।
सत्त सत्त जहँ सत्त सँदेस ॥ ४७ ॥
यहाँ रचना तरकीबी† हुई ।
सो मैं खोल सुनाऊँ सही ॥ ४८ ॥
मुफ़रद बुन्द हमारी आई ।
दूसर माया आन मिलाई ॥ ४९ ॥
पाँच तत्व तीनों गुन मिले ।
यह सब दस आपस मैं रले ॥ ५० ॥

* सीढ़ी चढ़ने की । † मिलौनी की । ‡ बे मिलौनी की ।

रल मिल कर इन रचना ठानी।
तीन लोक और चारौं खानी ॥ ५१ ॥

॥ उत्तर अंग तीसरा ॥

बेदान्ती अब किया बिचार।
नौ* को छाँट लिया दस सार ॥ ५२ ॥
दसवाँ वही बुन्द मम अंस।
छाँट ताहि लीन्हा होय हंस ॥ ५३ ॥
जहाँ मिलौनी तहाँ बिचार।
एक एक में कहा बिचार ॥ ५४ ॥
हमरे देस एक सतनाम।
वहाँ बिचार का कुछ नाहिँ काम॥५५॥
कर बिचार इन धोखा खाया।
बुन्द माहिँ यह जाय समाया ॥ ५६ ॥
चलना चढ़ना इन के नाहीँ।
ता ते सिंध न पाया इनहीँ ॥ ५७ ॥
सिंध भेद जो इन से कहते।
तौ परतीत न चित में धरते ॥ ५८ ॥
करें दलील बुद्धि से भारी।
हँसी उड़ावें बचन न धारी ॥ ५९ ॥

*याने पाँच तत्व तीन गुन और माया।

बुधि बल से वह करते तोल ।
कभी न पावैं डावाँ डोल ॥ ६० ॥
यह मारग है प्रेम भक्ति का ।
चलना चढ़ना सुरत शब्द का ॥ ६१ ॥
सन्त मते पर नहिँ परतीत ।
सुरत शब्द नहिँ धारैं चीत ॥ ६२ ॥
पाँच शब्द मारग नहिँ चले ।
सिन्ध पता कहो कैसे मिले ॥ ६३ ॥

॥ उत्तर अंग चौथा ॥

बिद्या पढ़ जो करैं बिचार ।
बुंद भेद भी मिला न सार ॥ ६४ ॥
सार बुन्द है त्रिकुटी पार ।
जोगेश्वर चढ़ करैं बिचार ॥ ६५ ॥
प्राण जोग कर पहुँचे तहाँ ।
बुन्द ज्ञान उन पाया वहाँ ॥ ६६ ॥
आगे का गुरु मिला न उन को ।
वहाँ का ज्ञान सुनाया सब को ॥ ६७ ॥
जोग बिना बिद्या पढ़ कहते ।
बिद्या बुधि से तिरपत रहते ॥ ६८ ॥

यह तो निपट अहंकार में भूले ।
इधर न उधर जमपुरी झूले॥ ६८ ॥
तू तो सुरत अब सुन मम बचन ।
चढ़ और चल सुन सुन्न की धुन ॥७०॥
सुन सुन धुन चल देस हमारे ।
हम तुझ को अब किया अपना रे॥७१॥

॥ प्रश्न दूसरा ॥

यह कि जो सुरत अपने देश को लौट जावे तो फिर काल देश में आवेगी या नहीं।

चलने की तो करी तयारी ।
स्वामी से यों बचन उचारी ॥ ७२ ॥
संशय एक उठा मोहिं भारी ।
सो निरवार कहो बिस्तारी ॥ ७३ ॥

॥ दोहा ॥

सेवा बस तुम काल को, सौंप दिया जब मोहिं ।
तो अब कौन भरोस है, फिर भी ऐसा होय॥७४॥

॥ उत्तर ॥

तब स्वामी हँस कर यों बोले ।
कहूँ बचन मैं तुम से खोले ॥ ७५ ॥

जान बूझ हम लीला ठानी ।
मौज हमारी हुइ सुन बानी ॥ ७६ ॥
काल रचा हम समझ बूझ के ।
बिना काल नहिँ ख़ौफ़ जीव के ॥ ७७ ॥
क़दर* ध्याल नहिँ बिना काल के ।
मौज उठी तब अस दयाल के ॥ ७८ ॥
दिया निकाल काल को व्हाँ से ।
दख़ल काल अब कभी न वहाँ से ॥ ७९ ॥
मैं समरथ हूँ सब बिध जान ।
बचन मोर तू निश्चय मान ॥ ८० ॥
काल न पहुँचे उसी लोक में ।
अब न करूँ कभी ऐसी मौज मैं ॥ ८१ ॥
एक बार यह मौज ज़रूर ।
अब मतलब नहिँ डाली दूर ॥ ८२ ॥
तू शंका अब मत कर चित में ।
चलो देस हमरे रहो सुख में ॥ ८३ ॥

॥ प्रश्न तीसरा ॥

यह कि जो जीव सन्त मारग पर नहीं

---

* महिमा ।

चलते और कर्म और भर्म में पड़े हैं उन को इस करनी का क्या फल प्राप्त होगा।

॥ अंग पहिला ॥

सुन कर सुरत मगन होय बोली।
निश्चय किया बचन हम तोली ॥८४॥
मेरे मन अब दया समाई।
प्रश्न करूँ जीवन हित लाई ॥ ८५ ॥
जग में सुरत अनेकन आईं।
काल जाल में गईं भुलाईं ॥ ८६ ॥
कोइ करे जप कोइ तीरथ दाना।
कोइ सूरत कोइ तप अभिमाना ॥ ८७॥
कोइ अचार कोइ नेमी धरमी।
कोइ बिद्या पढ़ करते करनी ॥ ८८ ॥
कोइ बैराग त्याग सब देते।
बन परबत में जाकर रहते ॥ ८९ ॥

॥ अंग दूसरा ॥

प्राण योग कर मुद्रा साधें।
पाँच मुद्रा धरें समाधें ॥ ९० ॥

चाचरी भूचरी खेचरी भाई ।
और अगोचरी उनमुन लाई ॥ ८१ ॥
चक्र बेध घट खैंचैं प्राण ।
सहसकँवल चढ़ लावैं ध्यान ॥ ८२ ॥

॥ अंग तीसरा ॥

कोइ ज्ञानी बाचक कोइ लक्ष ।
कोइ षट शास्तर करते पक्ष ॥ ८३ ॥
मीमान्सा बैशेषिक न्याय ।
पातंजली जोग ठहराय॰ ॥ ८४ ॥
सांख्य करे नित॰ अनित† बिचार ।
बेदान्ती मिथ्या संसार ॥ ८५ ॥
व्यापक सतचित आनँद रूप ।
जीव ब्रह्म दोउ एक स्वरूप ॥ ८६ ॥
जीव बाच‡ त्रैदेह बतावैं ।
ईश्वर बाच ब्रह्मण्ड सुनावैं ॥ ८७ ॥
बिश्व§ नाम तेजस|| और प्राग** ।
जाग्रत स्वप्न सुषोपति भाग ॥ ८८ ॥
बैराट हिरनगर्भ और अव्याकृत ।
तीन नाम ईश्वर कहैं कल्पित ॥ ८९ ॥

॰ठहराऊ । †नाशमान । ‡परघट स्वरूप । §जाग्रत । ||स्वप्न । **सुषुप्ति ।

बाच बाच्छ दोउ मिथ्या मान ।
व्यापक लक्ष* एक कर जान ॥ १०० ॥
बिवर्तबाद इन कीन्ही सिद्ध ।
कोइ अवछेद† अजात‡ बिरुद्ध ॥ १०१ ॥
पर सिद्धान्त सबन का एक ।
व्यापक निश्चय बाँधी टेक ॥ १०२ ॥
पाँच शास्त्र इन किये निषेद ।
छठा शास्त्र माना मत बेद ॥ १०३ ॥
चेतन को यह एक बतावें ।
और कुछ रचना जड़ गावें ॥ १०४ ॥
चेतन ज्ञान मगन होय फिरते ।
सब को कल्पित§ उस में कहते ॥ १०५ ॥
कुछ करनी करतूत न रखते ।
चढ़ना चलना सब भ्रम कहते ॥ १०६ ॥
आना जाना भी कुछ नहीं ।
चेतन ही चेतन इक सही ॥ १०७ ॥
पर इक मतलब की उन धारी ।
व्योहारक जग सत्य कहा री ॥ १०८ ॥

* गुप्त स्वरूप । †जिसका टुकड़ा नहीं हुआ । ‡जो जनमा नहीं । §खयाली ।

कोइ कोइ परारब्ध सत मानैं ।
भोग चुकैं तब असत बखानैं ॥ १०९ ॥
अब चेतन चेतन ही रहा ।
जग त्रैकाल* कभी नहिँ हुआ ॥ ११० ॥
मैं भी चेतन तू भी चेतन ।
मैं तू का यह भर्म मिटावन ॥ १११ ॥
चेतन को पकड़ा मज़बूत ।
छोड़ा जग को मिथ्या कूत† ॥११२॥
सुरत अंस का भेद न पाया ।
जो सतपुरुष से आन समाया ॥ ११३ ॥
यह तो भेद संत कोइ जाना ।
और कोई नहिँ परख पिछाना ॥११४॥
बुद्धी की गम उस में नाहीँ ।
वह रही चेतन चेतन माहीँ ॥ ११५ ॥
चेतन चेतन करत बखाना ।
सुरत चेतन्य का मर्म न जाना ॥ ११६ ॥
सब मत ऐसा धोखा खाया ।
सुरत भेद काहू नहिँ पाया ॥ ११७ ॥

*भूत यानी जो हो गया, भविष्य जो होवेगा, वर्तमान जो हो रहा है।
† तोल कर ।

॥ अङ्ग चौथा ॥

मुसल्मान हिंदू और जैनी ।
ईसाई क्या जानैं कहनी ॥ ११८ ॥
कोइ नमाज़ कोइ रोज़ा रखते ।
कोइ मसजिद कोइ काबा* फिरते॥ ११९॥
कोइ क़ुरान पढ़ हाफ़िज़† होते ।
पढ़ैं वज़ीफ़ा‡ रात न सोते ॥ १२० ॥
कोइ चिल्ला कर मुल्ला§ बनते ।
कोई आबिद‖ कोइ ज़ाहिद** रहते१२१
कोई मशायख़†† क़ाले हाल के ।
कोइ सरोद‡‡ कोइ रागो ताल के १२२।
कोई शरीअत§§ कोई तरीक़त‖‖ ।
कोई माफ़ूत*** कोई हक़ीक़त††† ॥१२३॥

॥ अङ्ग पाँचवाँ ॥

जैन धर्म संजम बहु करते ।
भूख प्यास को अति ही सहते ॥१२४॥

---

* मक्का । † जिन को क़ुरान याद हो । ‡ जाप । § बाँग देने वाला । ‖ पुजारी । ** प्रेमी । †† विद्यावान । ‡‡ राग । §§ कर्म कांड । ‖‖ उपासना । *** ज्ञान । ††† विज्ञान ।

बेला* तेला‡ चौला§ साधैं ।
तीर्थंकर कुलकर आराधैं ॥ १२५ ॥
जीव दया भी अति कर पालैं ।
दातन करैं न दीवा बालैं ॥ १२६ ॥
मुख पर बस्तर बाँधे बोलैं ।
सूत मोरछल लेकर डोलैं ॥ १२७ ॥
हरी|| सियागैं पत्थर पूजैं ।
कोइ निर्बान पद आतम बूझैं ॥ १२८ ॥

॥ अङ्ग छठवाँ ॥

अब ईसाई का भाखूँ वृत्तन्त** ।
पढ़ किताब गिरजा जा पूजा ॥ १२९ ॥
इक सम होकर सब से बरतैं ।
नीच ऊँच जाती नहिं धरते ॥ १३० ॥
पूजैं जल्पा और सलेब†† ।
मन के छोड़ैं सबही ऐब ॥ १३१ ॥
हज़रत ईसा को यह मानैं ।
पुत्र खुदा का उस को जानैं ॥ १३२ ॥

*दो दिन का व्रत । ‡ तीन दिन का व्रत ॥ § चार दिन का व्रत । || साग फल आदि का । ** बयान । †† सूली ।

वह बख़्शावें हम को इक दिन ।
करें भरोसा उनका निस दिन ॥१३३॥
यह भी मत है काल के घर का ।
इन से भी मेरा मन फड़का ॥ १३४ ॥

॥ अंग सातवाँ ॥

और अनेक मते जग माहीं ।
सबही जानो काल की छाहीं ॥१३५॥
यह पूछूँ मैं तुम से बात ।
स्वामी कहो खोल बिख्यात* ॥ १३६ ॥
इन जीवन को क्या फल होई ।
भिन्न भिन्न कर भाखो सोई ॥ १३७ ॥

॥ उत्तर ॥

सुन अब सुरत कहूँ मैं तो से ।
यह तो भूले हैं सब मो से ॥ १३८ ॥
करमी भरई† हैं यह जीव ।
सतगुरु बिन नहिं पावें पीव‡ ॥ १३९ ॥
कोइ राजा कोइ पंडित होवे ।
कोइ धनवान सुखी जग सोवे ॥ १४० ॥

*प्रगट । †कर्मकाण्डी । ‡पति ।

कोई स्वर्ग जा करे बिलास ।
कोइ एराफ़* बहिश्त निवास ॥१४१॥
कोइ सइयद कोइ शेख मौलवी ।
कोइ आमिल† सिफ़ली‡ कोइ उलवी§ १४२
कोइ तारागन मण्डल पावे ।
कोइ चाँद सूर्य के लोक समावे ॥१४३॥
कोइ सुमेर पर करे बसेरा ।
कोइ कैलाश हिमांचल डेरा ॥ १४४ ॥
कोइ गन्धर्व लोक कोइ इन्द्रपुरी में ।
कोइ पित्रलोक कोइ विष्णुपुरी में ॥१४५॥
कोइ शक्ति लोक कोइ ईश धाम में ।
कोइ ओंकार कोइ रंग नाम में ॥१४६॥
उत्पति अस्थित परलै माहीं ।
यह सब रहे काल की छाहीं ॥१४७॥
काल हद्द से परे न कोई ।
देश दयाल कोई नहिं जोई ॥ १४८ ॥
आवागवन न काहू छूटा ।
देर अबेर सभी जम लूटा ॥ १४९ ॥

*स्वर्ग और नर्क के दरमियान में जो मुक़ाम है †अभ्यासी ‡ नीचे मुक़ामों का ।
§ब्रह्माण्डी ।

सतगुरु बिना न कोई बाचा ।
सत्तनाम पद मिला न साँचा ॥१५० ॥
फल करनी तो सब ने पाया ।
सुखी हुए पर फिर भरमाया ॥ १५१॥
ताते सतगुरु पद को सेवो ।
बिन सतलोक न छूटे फेरो ॥ १५२ ॥
सुरत शब्द के मारग चलो ।
सत्त शब्द से चढ़ कर मिलो ॥ १५३ ॥

॥ प्रश्न चौथा ॥

यह कि सन्तों के अस्थान और उस के मारग का भेद क्या है ।

तब सुरत पूछे इक बाता ।
स्वामी देव भेद बिख्याला* ॥ १५४ ॥

॥ उत्तर ॥

तब स्वामी ने बचन सुनाया ।
मारग का याँ भेद लखाया ॥ १५५ ॥
पाँच नाम का सुमिरन करो ।
श्याम सेत मेँ सूरत धरो ॥ १५६ ॥

* प्रगट ।

प्रथमे सुनो गगन मैं बाजा ।
घंटा संख छाँट धुन गाजा ॥ १५७ ॥
सहस कँवल दल जोत लखाई ।
बंकनाल मैं जाय समाई ॥ १५८ ॥
बंक पार त्रिकुटी मैं गई ।
ओंकार और राद* धुन लई ॥ १५९ ॥
आगे पहुँची सुन्न सँझार ।
ररंकार धुन सुनी पुकार ॥ १६० ॥
किँगरी और सारंगी सुनी ।
मान सरोवर चढ़ चढ़ गुनी ॥ १६१ ॥
आगे महासुन्न मैदाना ।
जहाँ चार धुन तिमिर† समाना ॥ १६२ ॥
भँवरगुफा ता ऊपर देखी ।
सोहं बंसी बजती पेखी‡ ॥ १६३ ॥
ता के परे धाम सत नामा ।
बीन बजे सतलोक ठिकाना ॥ १६४ ॥
सुनत सुरत फिर आगे चढ़ी ।
अलख लोक मैं जा कर धरी ॥ १६५ ॥

* बादल की गरज । †अंधेरा ‡परख लिया ।

कोटन अरब सूर उजियारा ।
अलख पुरुष छबि अद्भुत धारा ॥१६६॥
तहँ से अगम लोक को चली ।
अगम पुरुष से जाकर मिली ॥ १६७ ॥
खरबन सूर चाँद परकाशा ।
धुन का वहाँ की अगम बिलासा ॥१६८॥
धुन का बर्नन कैसे गाऊँ ।
जग में कोइ दृष्टान्त न पाऊँ ॥ १६९ ॥
ता के आगे रहत अनामी ।
निज घर संतन बरना स्वामी ॥ १७० ॥
सुन कर सूरत अति हरषानी ।
चलो सुवामी मैं सब जानी ॥ १७१ ॥
बिन सतगुरु कोइ भेद न पावे ।
सतगुरु सो यह देस लखावे ॥ १७२ ॥
सतगुरु की महिमा अति भारी ।
कोई न जाने पच पच हारी ॥ १७३ ॥
जा पर कृपा दृष्टि वे करैं।
वह जाने और निश्चय धरे ॥ १७४ ॥
कोइ कोइ जीव करैं बिस्वासा ।
कर प्रतीत वे धारैं आसा ॥ १७५ ॥

संत बचन जो सच्चा मानैं ।
इस बानी को सो सच जानैं ॥ १७६ ॥

॥ प्रश्न पाँचवाँ ॥

यह कि संत और साध और भेष और पाखंडी की पहिचान क्या है ।

इक संशय मेरे मन आई ।
सो निरनय कर कहो सुनाई ॥ १७७ ॥
संत नाम तुम किसका गावो ।
साध भेष दोउ भेद बतावो ॥ १७८ ॥

॥ उत्तर अङ्ग पहिला ॥

॥ पहिचान संत की ॥

तब स्वामी बोले सुन लीजे ।
कान लगाय चित्त अब दीजे ॥ १७९ ॥
संत कहैं हम उन को भाई ।
सत्तलोक जिन सुरत समाई ॥ १८० ॥
चौथा लोक तीन के पारा ।
सत्तनाम सतगुरु दरबारा ॥ १८१ ॥
संत सुरत व्हाँ करे बिलास ।
सत्तपुरुष सत शब्द निवास ॥ १८२ ॥

तिरलोकी के आगे सुन्न ।
सुन्न के आगे है महासुन्न ॥ १८३ ॥
महासुन्न के पार ठिकाना ।
भँवरगुफा ताहि करत बखाना ॥१८४॥
ता के परे लोक है चौथा ।
बिन वहाँ पहुँचे सब है थोथा ॥ १८५ ॥
संत बिना कोइ वहाँ न पहुँचा ।
बिन वहाँ पहुँचे संत न होता ॥१८६ ॥

॥ अङ्ग दूसरा ॥

॥ पहिचान साध की ॥

संत भेद सब निरनय कीन्हा ।
साध भेद अब तुम लो चीन्हा ॥१८७॥
संत मते का निश्चय करे ।
सुरत शब्द के मारग चले ॥ १८८॥
जाय त्रिबेनी मंजन* करे ।
सुन्न सरोवर त्रिकुटी परे ॥ १८९ ॥
साध नाम हम या को गाई ।
बिन साधे यह साध न भाई ॥ १९० ॥

* स्नान ।

॥ अङ्ग तीसरा ॥

॥ पहिचान भेष की ॥

भेष संत अब बर्न सुनाऊँ ।
यह भी छान तोहि समझाऊँ ॥ १८१ ॥
संतन की बानी जो पढ़ते ।
सुरत शब्द का निश्चय करते ॥ १८२ ॥
संत सरन जिन दृढ़ कर पकड़ी ।
कर बिश्वास सुरत निज जकड़ी ॥ १८३ ॥
बिना संत नहिं और भरोसा ।
करम भरम तज चित को पोसा ॥ १८४ ॥
सुरत शब्द मारग कुछ साधैं ।
जितना बने उतना आराधैं ॥ १८५ ॥
इन का नाम भेष तुम जानो ।
प्रीत करो इन सेवा ठानो ॥ १८६ ॥
चहे बस्तर रँग घर को छोड़ैं ।
चाहे घर रहैं मन को मोड़ैं ॥ १८७ ॥

॥ अङ्ग चौथा ॥

॥ पहिचान पखंडी की ॥

जिन की नहीं धारना ऐसी ।
घर को छोड़ैं होयँ परदेसी ॥ १८८ ॥

कपड़े रँग बातैं बहु सीखी ।
जग को ठगैं कहावैं भेषी ॥ १९९ ॥
कर्म लिखी वह भोगैं अपनी ॥
भरमत फिरैं पहिर कर कफ़नी* ॥२००॥
उनका नाम भेष नहिँ होई ।
वह पाखंडी जानो सोई ॥ २०१ ॥
दीन गँवाया दुनिया खोई ।
ना गिरही ना त्यागी दोई ॥ २०२ ॥
जम के द्वारे धक्के खावैं ।
नर्क पड़ैं चौरासी जावैं ॥ २०३ ॥
गिरही जीवन बहुत सतावैं ।
खावैं पीवैं और धमकावैं ॥ २०४ ॥
पूजा अपनी बहुत करावैं ।
धन खैंचैं ब्योपार बढ़ावैं ॥ २०५ ॥
साध संत अपने को कहैं ।
गृहस्त बिचारे उन की सहैं ॥ २०६ ॥
यह भी निरनय तोहि सुनाया ।
साध संत और भेष लखाया ॥ २०७ ॥

* साधू का कपड़ा ।

चौथे पाखंडी कह गाये ।
जिन जग मैं बहु फंद लगाये ॥ २०८ ॥

॥ उपदेश ॥

सुनो सुरत अब कहूँ बखानी ।
खोजो साध संत तुम जानी ॥ २०९ ॥
सतगुरु कर उन सेवा ठानो ।
चित्त लगाय चरन मैं आनो ॥ २१० ॥
चरनामृत परशादी लेना ।
दर्शन पर तन मन सब देना ॥ २११ ॥
उनकी सेवा फल अति देई ।
सत्तलोक तू इक दिन लेई ॥ २१२ ॥
सतसँग उनका तुम नित करना ।
बचन सुनो और चित मैं धरना ॥ २१३ ॥
तीन लोक सब माया चेले ।
ब्रह्मा बिष्णु महादेव पेले ॥ २१४ ॥
तीन लोक अंतर और बाहर ।
काल बियापा देखा ज़ाहिर* ॥ २१५ ॥

*प्रगट ।

॥ दोहा ॥

बिनसतगुरुसतनामबिन, कोई नबाचे जीव।
सत्तलोकचढ़कर चलो, तजोकालकीसीव*२१६

बर्णन भेद पाँच नाम याने पाँच शब्द का बिस्तार करके मय नाम और रूप और लीला और धाम एक एक शब्द के।

॥ शब्द स्थान पहिला ॥

सुन री सखी तोहि भेद बताऊँ।
प्रथम अस्थान खोल कर गाऊँ ॥ १ ॥
सहसकँवलदल नाम सुनाऊँ।
जोत निरंजन बास लखाऊँ ॥ २ ॥
करता तीन लोक यह ठाऊँ† ।
बेद चार इन रचे जनाऊँ ॥ ३ ॥
ब्रह्मा बिष्णु महादेव तीनों।
पुत्र इन्हीं के हैं यह चीन्हो ॥ ४ ॥
कुल बैराट रचा इन मिलके।
जीवन घेर लिया इन पिलके ॥ ५ ॥
जाल बिछाया जग में भारी।
इनकी पूजा जीव सुखारी ॥ ६ ॥

* सीमा। † स्थान।

फसे जाल में पचे करम में ।
धोखा खाया पड़े भरम में ॥ ७ ॥
अब जो इन को कोइ समझावे ।
सत्तपुरुष का भेद लखावे ॥ ८ ॥
तो नहिं मानें झगड़ा ठानें ।
पक्षपात* कर ढिंग नहिं आवें ॥ ९ ॥
या ते मैं तो को समझाऊँ ।
यह सब ठग खुलकर जतलाऊँ† ॥ १० ॥
इन के मारग तू मत जाय ।
तू संतन की सरन समाय ॥ ११ ॥
सतगुरु कहें सोई तुम मानो ।
इनका बचन न कर परमानो ॥ १२ ॥
राह रकाना‡ देउँ दरसाई ।
पता भेद अब कहूँ जनाई ॥ १३ ॥
मन और सुरत जमाओ तिल पर ।
घेर घुमर घट आओ घिल§ कर ॥ १४ ॥
निरखो खिड़की देखो चौका ।
चित्त लगाओ राखो रोका ॥ १५ ॥

* तरफ़दारी । † चतलाऊँ । ‡ भेद । § घस कर ।

पचरंगी फुलवारी निरखो ।
दीपदान घट भीतर परखो ॥ १६ ॥
कोइ दिन ऐसी लीला देखो ।
नील चक्र ता आगे पेखो ॥ १७ ॥
बिरह प्रेम बल ता को फोड़ो ।
जोत निहारो मन को मोड़ो ॥ १८ ॥
अनहद घंटा सुन सुन रीझो ।
संख बजाओ रस में भीजो ॥ १९ ॥
यह पहिला अस्थान बताया ।
राधास्वामी बरन सुनाया ॥ २० ॥

॥ शब्द स्थान दूसरा ॥

अब चलो सजनी दूसर धाम ।
निरखो त्रिकुटी गुरु का ठाम* ॥ १ ॥
ओंकार धुन जहँ बिसराम ।
गरजे बादल और घनश्याम ॥ २ ॥
सूरज मंडल लाल मुक़ाम ।
गुरु ने बताया गुरु का नाम ॥ ३ ॥
पंचम बेद नाद यहि गाया ।
चहुदल कँवल संत बतलाया ॥ ४ ॥

* स्थान ।

घंटा संख तजी धुन दोई ।
गरज मृदंग सुनाई सोई ॥ ५ ॥
सुरत चली और खोला द्वार ।
बंकनाल धस हो गइ पार ॥ ६ ॥
ऊँची नीची घाटी उतरी ।
तिल की उलटी फेरी पुतरी ॥ ७ ॥
गढ़ भीतर जाय कीन्हा राज ।
भक्ति भाव का पाया साज ॥ ८ ॥
करम बीज अब दिया जलाई ।
आगे को फिर सुरत बढ़ाई ॥ ९ ॥
नौबत झड़ती आठौं जाम ।
सुरत पाया सूल कलाम* ॥ १० ॥
महाकाल और कुरम† बखाना ।
उत्पति बीजा यहाँ से जाना ॥ ११ ॥
सूरज चाँद अनेकन देखे ।
तारा मंडल बहु बिधि पेखे ॥ १२ ॥
पिंड अंड से न्यारी खेली ।
ब्रह्मण्ड पार चली अलबेली‡ ॥ १३ ॥

* शब्द । † कछुवा । ‡ सुरत मतवाली ।

बन और परबत बाग़ दिखाई ।
चमन चमन फुलवारी छाई ॥ १४ ॥
नहरें नदियाँ निरमल धारा ।
समुँदर पुल चढ़ हो गइ पारा ॥ १५ ॥
मेर सुमेर देख कैलाशा ।
गई सुरत जहँ बिमल बिलासा ॥ १६ ॥
राधास्वामी कहत पुकारी ।
दूसर मंज़िल कर ली पारी ॥ १७ ॥

॥ शब्द स्थान तीसरा ॥

अब चली तीसर परदा खोल ।
सुन्न मंडल का सुन लिया बोल ॥ १ ॥
दसवाँ द्वार तेज परकाश ।
छोड़े नीचे गगन अकाश ॥ २ ॥
मानसरोवर किये अश्नान ।
हंस मंडली जाय समान ॥ ३ ॥
सुन्न शिखर चढ़ी सूरत घूम ।
किँगरी सारँगी डाली धूम ॥ ४ ॥
सुन सुन सूरत हो गइ सार ।
पहुँची जाय त्रिबेनी पार ॥ ५ ॥

महासुन्न का नाका लीन्ह ।
गुप्त भेद जाय लीन्हा चीन्ह ॥ ६ ॥
अंध घोर जहँ भारी फेर ।
सत्तर पालँग* जा का घेर ॥ ७ ॥
बानी चार गुप्त जहँ उठती ।
सुरत रागिनी नइ नइ सुन्ती ॥ ८ ॥
झन्कारैं अद्भुत कहा बरनूँ ।
सुन सुन धुन मन मैं अति हरषूँ ॥ ९ ॥
पाँच अंड रचना तहँ कीन्ही ।
ब्रह्म पाँच ता मैं कुर लीनी ॥ १० ॥
अंडन सोभा बरनूँ कैसी ।
सब्ज़ सेत कोइ पीत बरन सी ॥ ११ ॥
लख लख अरब तासु परमाना ।
यह अंडा अति तुच्छ दिखाना ॥ १२ ॥
या मैं ब्रह्म बियापक जोई ।
ता की गति कहो कितनी होई ॥ १३ ॥
ता का ज्ञान पाय यह ज्ञानी ।
फूलैं मन मैं होय अभिमानी ॥ १४ ॥

* यह तिरलोकी एक पालंग के बराबर है ।

सैंडक सी गत इन की जानी ।
कूप समुद्र जान मगनानी ॥ १५ ॥
कहा करैं यह हैं लाचार ।
वह तो देश न देखा सार ॥ १६ ॥
बिन देखे कैसे परतीत ।
उन नहिँ जानी अचरज रीत ॥ १७ ॥
इसी ब्रह्म को जान अपार ।
भूले मारग करैं बिचार ॥ १८ ॥
अब इनको कैसे समझाऊँ ।
वह नहिँ मानैं चुप्प रहाऊँ ॥ १९ ॥
राधास्वामी कही सुनाय ।
तीनौं परदे दिये लखाय ॥ २० ॥

॥ शब्द स्थान चौथा ॥

अब चौथे की करी तयारी ।
चल री सुरत तू शब्द सम्हारी ॥ १ ॥
नाल हंसिनी घाटा फाँदा ।
रुकमिन नाल सुरत को साधा ॥ २ ॥
पाँजी* निरखी जहँ गंभीर ।
सुरत निरत दोउ धारी धीर ॥ ३ ॥

* रास्ता

दायें रचे दीप परचंड ।
बायें रचाये बहुतक खंड ॥ ४ ॥
मोती महल और रतन अटारी ।
हीरे लाल जड़े जहँ भारी ॥ ५ ॥
गुप्त भेद यह दिया जनाई ।
जानेंगे कोइ संत सिपाही ॥ ६ ॥
भँवरगुफा का परबत निरखा ।
सोहं शब्द जाय जहँ परखा ॥ ७ ॥
धुन मुरली जहँ उठत करारी* ।
सेत सूर सूरत निरखा री ॥ ८ ॥
तेज पुंज† वह देश भला री ।
धुन अपार तहँ होत सदा री ॥ ९ ॥
हंस अखाड़ा‡ लीला चौक ।
भक्त मंडली खेलें थोक§ ॥ १० ॥
लोक अनंत भक्त जहँ बसें ।
नाम अधार अमीरस रसें ॥ ११ ॥
राधास्वामी यह भी गाई ।
चौथा परदा लीन्हा जाई ॥ १२ ॥

* तेज । † समूह । ‡ झुण्ड । § इकट्ठा ।

॥ शब्द स्थान पाँचवाँ ॥

पंचम क़िला तख़्त सुल्तानी ।
बादशाह सच्चा निज जानी ॥ १ ॥
चली सुरत देखा मैदाना ।
अजब शहर* अद्भुत चौगाना† ॥ २ ॥
अमृत कुण्ड असी की खाई ।
महल सुनहरी रचे बनाई ॥ ३ ॥
चौक चाँदनी दीप अनूपा ।
हंसन सोभा अचरज रूपा ॥ ४ ॥
षोड़स‡ भान चंद्र उजियारा ।
सुरत चढ़ी देखा निज द्वारा ॥ ५ ॥
द्वारपाल जहँ बैठे हंस ।
कहिँ कहिँ अंस कहीँ कहिँ बंस ॥ ६ ॥
सहज सुरत तहँ बचन सुनाये ।
कहो भेद तुम यहँ कस आये ॥ ७ ॥
सुरत नवीन कही तब बानी ।
संत मिले उन कही निशानी ॥ ८ ॥

* दूसरे एडिशन यानी सन् १८९७ ई० के छापे में शहर की जगह "सैर" है।
† चौक। ‡ सोलह।

इतना कह तब भीतर धसी ।
सत्तनाम दर्शन कर हँसी ॥ ९ ॥
पुहप* मध्य से उठी अवाज़ा ।
को तुम हो आये केहि काजा ॥ १० ॥
सतगुरु मिले भेद सब दीन्हा ।
तिन की कृपा दरस हम लीन्हा ॥ ११ ॥
दरशन कर अति कर मगनानी ।
सत्तपुरुष तब बोले बानी ॥ १२ ॥
अलख लोक का भेद सुनाया ।
बल अपना दे सुरत पठाया ॥ १३ ॥
अलख पुरुष का रूप अनूपा ।
अगम पुरुष निरखा कुल भूपा ॥ १४ ॥
देखा अचरज कहा न जाई ।
क्या क्या सोभा बरनूँ भाई ॥ १५ ॥
तीन पुरुष और तीनों लोक ।
देखे सूरत पाया जोग ॥ १६ ॥
प्रेम बिलास जहाँ अति भारी ।
राधास्वामी कहत पुकारी ॥ १७ ॥

* फूल, कँवल ।

॥ बचन सत्ताईसवाँ ॥

बर्णन हाल बिरह और खोज सतगुरु का और उनके सतसङ्ग का ।

॥ शब्द पहिला ॥

मैं सतगुरु सँग करूँगी आरती ।
मो बिरहिन को कोइ मत हटको* ॥१॥
जिगर† जले का दीपक बारूँ ।
मन बट कर मैं बाती डारूँ ॥ २ ॥
जोत जगाऊँ दर्द प्रेम की ।
आरत फेरूँ सोज़‡ मरम की ॥ ३ ॥
बेदन§ मेरी सतगुरु जानें ।
बिन दीदार नहीं मन मानें ॥ ४ ॥
दुष्ट दूत अब अधिक सतावें ।
दर्शन राधास्वामी नाहिं दिखावें ॥५॥
कौन उपाव करूँ मैं सजनी ।
ज़ोर ज़ुलम इन कब लग सहनी ॥६॥
जल बल ख़ाक किया मैं अङ्गा ।
जस जोती पर जले पतंगा ॥ ७ ॥

* मना करो । † कलेजा । ‡ तपन । § कष्ट ।

कौन सुने मेरी किस पै रोऊँ ।
जैसी बिथा मेरी मैं ही सहऊँ ॥ ८ ॥
आह आह कर निस दिन देहूँ* ।
सबर न आवे फिर पछतैहूँ ॥ ९ ॥
बिन राधास्वामी अब कोइ नहिं मेरा ।
दुक्ख दर्द ने अति कर घेरा ॥ १० ॥
अब घबराय करूँ मैं बिनती ।
पल पल राधास्वामी चित में धरती ॥११॥
दाद† फ़र्याद सुनो मेरी सतगुरु ।
कँवल बिना जैसे तड़पे मधुकर‡ ॥१२॥
मैं तड़पूँ जस जल बिन मीना ।
जिगर फटे को कैसे सीना ॥ १३ ॥
तुम सब बिधि हो समरथ स्वामी ।
तुमहिं जतन करो अन्तरजामी ॥१४॥
मैं अजान कुछ जानत नाहीं ।
जैसे बने तैसे काटो फाही§ ॥ १५ ॥
तब सतगुरु इक जुक्ति बताई ।
सुरत शब्द की करो कमाई ॥ १६ ॥

* तपूँगी। † इन्साफ। ‡ भँवरा । §बन्धन।

और आरत यह नित प्रति गाओ ।
घर में बैठो सुरत लगाओ ॥ १७ ॥
मौज निहारो करो बिस्वासा ।
इक दिन होगी पूरन आसा ॥ १८ ॥
अस अस सतगुरु दीन्ह दिलासा ।
अब मन अंतर होत हुलासा ॥ १९ ॥
यह अरज़ी अब मानो मेरी ।
मैं दुखिया तुम चरनन चेरी ॥ २० ॥
उमँग उमँग कर आरत गाई ।
नित्त करूँ अस आरत आई ॥ २१ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

दर्द दुखी मैं बिरहिन भारी ।
दर्शन की मोहिं प्यास करारी ॥ १ ॥
दर्शन राधास्वामी छिन छिन चाहूँ ।
बार बार उन पर बल जाऊँ ॥ २ ॥
वह तो ताड़ मार फटकारें* ।
मैं चरनन पर सीस चढ़ाऊँ ॥ ३ ॥
निरधन निरबल क्रोधिन मानी ।
मैं गुन अपने अब पहिचानी ॥ ४ ॥

* धिधकार करें ।

स्वामी दीन दयाल हमारे ।
मो सी अधम को लीन्ह उबारे ॥ ५ ॥
मैं ज़िद्दन* दम दम हठ करती ।
मौज हुक्म में चित नहिं धरती ॥ ६ ॥
दया करो राधास्वामी प्यारे ।
औगुन बख़्शो लेव उबारे ॥ ७ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

कैसे करूँ कसक† उठी भारी ।
मेरी लगी गुरू सँग यारी ॥ १ ॥
दम दम तड़पूँ छिन छिन तरसूँ ।
चढ़ रही मन में बिरह ख़ुमारी‡ ॥ २ ॥
सुलगत जिगर फटत नित छाती ।
उठन लगी हिये से चिनगारी ॥ ३ ॥
नैनन नीर बहत जस नदियाँ ।
डूब मरी माया मतवारी ॥ ४ ॥
ठंडी आह उठे पल पल में ।
छाय गई अब प्रीत करारी ॥ ५ ॥
तोड़ी न टूटे छोड़ी न छूटे ।
काल करम पच हारी ॥ ६ ॥

* हठ करने वाली । † पीर । ‡ नशा ।

सुरत निरत दोउ क़ासिद* कीन्हे ।
बिथा† लिखूँ अब सारी ॥ ७ ॥
पतियाँ भेजूँ गुरु दरबारा ।
अब लो ख़बर हमारी ॥ ८ ॥
नगर उजाड़ देश सब सूना ।
तुम बिन जग अँधियारी ॥ ९ ॥
कौन सुने और कौन सम्हारे ।
सब मोहिं दीन निकारी ॥ १० ॥
बही जात नइया मँझ धारा ।
तुम बिन कौन उबारी ॥ ११ ॥
खेवटिया क्यों देर लगाई ।
क्योंकर करूँ पुकारी ॥ १२ ॥
मैं मरी जाउँ जिऊँ अब कैसे ।
तुम मेरी सुधि न सम्हारी ॥ १३ ॥
डालो जान देव सरजीवन‡ ।
मैं तुम पर बलिहारी ॥ १४ ॥
बचन सुनाओ दरस दिखाओ ।
हरो पीर मेरी सारी ॥ १५ ॥

* दूत । † तकलीफ़ । ‡ अमृत बूटी ।

राधास्वामी सुनो हमारी ।
मैं तुम्हरे आधारी ॥ १६ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

पिया बिन कैसे जिऊँ मैं प्यारी ।
मेरा तन मन जात फुकारी ॥ १ ॥
कोई सन्त मिलैं अब भारी ।
जो पिया को मिलावैं आ री ॥ २ ॥
मैं चढ़ूँ गगन मैं सारी ।
दिन रात लगे मेरी तारी ॥ ३ ॥
मैं बिरहिन लगी कटारी ।
मैं घायल फिरूँ उजाड़ी ॥ ४ ॥
सतगुरु अब करैं सम्हारी ।
तब हिरदे घाव पुरा री ॥ ५ ॥
मोहिं नाम देहिं निज सारी ।
यह मरहम* नित्त लगा री ॥ ६ ॥
राधास्वामी करैं दवा री ।
मैं उनपै जाऊँ बलिहारी ॥ ७ ॥

* घाव में लगाने का लेप ।

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

दर्द दुखी जियरा नित तरसे ।
तन मन मैं पीर घनेरी ॥ १ ॥
कोइ सतगुरु संत दया कर हेरैं ।
तो मिटे बिथा घट मेरी ॥ २ ॥
मैं अति दीन अनाथ अचेती ।
उन बिन को मोहिं गहे री ॥ ३ ॥
क्या क्या कहूँ काल जस कसियाँ* ।
फसियाँ आन अँधेरी ॥ ४ ॥
मन की बात मनहिं पुनि जाने ।
मुख से क्यों कहत बने री ॥ ५ ॥
अन्तरजामी बैद मिलैं जब ।
तब दुख दूर टले री ॥ ६ ॥
आपहि आप रोग मेरा बूझैं ।
आपहि दें कुछ दवा भली री ॥ ७ ॥
मैं तो अजान निपट कर मूढ़ा ।
भूला गैल गली री ॥ ८ ॥
तुम दयाल कस ढील करोगे ।
जल्दी से अब कर्म दले री ॥ ९ ॥

* बाँधा ।

सतसँग सार न बूझे चंचल ।
ठहरत नहिँ छिन एक पली री ॥१०॥
राधास्वामी अचरज धामी ।
आन मिले सब पीर हरी री ॥ ११ ॥

॥ शब्द छटवाँ ॥

चुनर मेरी मैली भई ।
अब का पै जाउँ धुलान ॥ १ ॥
घाट घाट मैं खोजत हारी ।
धुबिया मिला न सुजान ॥ २ ॥
नइहर* रहुँ कस पिया घर जाऊँ ।
बहुत मरे मेरे मान ॥ ३ ॥
नित नित तरसूँ पल पल तड़पूँ ।
कोइ धोवे मेरी चूनर आन ॥ ४ ॥
काम दुष्ट और मन अपराधी ।
और लगावें कीचड़ सान ॥ ५
का से कहूँ सुने नहिँ कोई ।
सब मिल करते मेरी हान ॥ ६ ॥
सखी सहेली सब जुड़ आईं ॥
लगीं भेद बतलान ॥ ७ ॥

* मा का घर।

राधास्वामी धुविया भारी ।
प्रगटे आय जहान ॥ ८ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

सुत चली धुलावन काज ।
चुनरिया मैल भरी ॥ १ ॥
गई सतसँग के घाट ।
सुरत गुरु चरन धरी ॥ २ ॥
पाया शब्द अगाध ।
हुई घट बीच खरी* ॥ ३ ॥
चली सुरत आकाश ।
उड़ी ज्यों उड़त परी ॥ ४ ॥
हुआ काम बल छीन ।
तिरश्ना सकल जरी ॥ ५ ॥
पाया प्रथम ठिकान ।
मिली पद आन हरी† ॥ ६ ॥
खोला बंक दुवार ।
सुफल हुइ देह नरी ॥ ७ ॥
सुन्न सरोवर पाय ।
सेत हुइ अब चुनरी ॥ ८ ॥

* निर्मल । † निरंजन ।

महा सुन्न के पार ।
लगी झाँकन झँझरी ॥ ९ ॥
भँवर गुफा ढिंग पहुँच ।
सुनी बंसी मधुरी ॥ १० ॥
परसे पुरुष पुरान ।
गई अमरा नगरी ॥ ११ ॥
खोला अलख दुवार ।
अमी संग भरी गगरी ॥ १२ ॥
अगम पुरुष दरबार ।
देख लीला सगरी ॥ १३ ॥
राधास्वामी महल दिखान ।
हुई सुत अज अजरी ॥ १४ ॥

॥ बचन अट्ठाईसवाँ ॥

बर्णन आनंद बिलास प्राप्ती सतगुरु का

॥ शब्द पहिला ॥

जाग री उठ खेल सुहागिन ।
पिया मिले बड़े भाग॥ १ ॥
लाग री उन चरनन ।
फिर न मिले अस दाव ॥ २ ॥

सखी सहेली सब जुड़ आईं ।
गावत मंगल राग ॥ ३ ॥
सोभा भारी रूप निहारी ।
बढ़ा प्रेम अनुराग ॥ ४ ॥
बजी बधाई हर्ष समाई ।
भाग चला बैराग ॥ ५ ॥
भक्ति भावनी निरमल करनी ।
खेलत निजकर फाग ॥ ६ ॥
सत्त सरोवर मंजन कीन्हा ।
धोये कलमल दाग़ ॥ ७ ॥
सतगुरु सरन हंस होय बैठी ।
छूटी संगत काग़ ॥ ८ ॥
राधास्वामी मगन हुए जब ।
दुरमत दीन्ही त्याग ॥ ९ ॥

॥शब्द दूसरा ॥

सोया भाग मेरा जागा आज सखि
सोया भाग मेरा जागा ।
परम पुरुष गुरु पाया ॥ १ ॥
कर्म कला सब फूँक जलाई ।
सुरत शब्द हम पाया ॥ २ ॥

सतगुरु दया द्वार घट खोला।
सुषमन जाय बसाया ॥ ३ ॥
नाल काल तज शब्द समानी।
सुन्न सरोवर न्हाया ॥ ४ ॥
माया ममता सब घर खाई।
सुन्न शिखर चढ़ आया ॥ ५ ॥
गुरु दयाल मोहिं हिम्मत दीन्ही।
महासुन्न के पार कराया ॥ ६ ॥
भँवरगुफा रस अगम पिलाया।
शब्द घोर जहँ अधिक सुनाया ॥७॥
सत्तलोक सतपुरुष रूप लख।
अलख अगम दरसाया ॥ ८ ॥
राधास्वामी धाम अजब गत।
काहू भेद न गाया ॥ ९ ॥
बेद पुरान क़ुरान न जाने।
वह गति अगम अथाया ॥१० ॥
जोत निरंजन मर्म न जाने।
अक्षर लग सब वार रहाया ॥ ११ ॥
ज्ञानी जोगी सब थक बैठे।
वह पद किनहुँ न पाया ॥ १२ ॥

यह पद सार भेद निज सारा ।
विरले संत जनाया ॥ १३ ॥
ब्रह्मा विष्णु महादेव गोरख ।
इन को माया खाया ॥ १४ ॥
इस पद का कोइ भेद न जाने ।
राधास्वामी अब प्रगटाया ॥ १५ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

मोहिं मिला सुहाग गुरू का ।
मैं पाया नाम गुरू का ॥ १ ॥
मैं सरना लिया गुरू का ।
मैं किंकर हुआ गुरू का ॥ २ ॥
मेरे मस्तक हाथ गुरू का ।
मैं हुआ गुलाम गुरू का ॥ ३ ॥
मैं पाया अधार गुरू का ।
मैं पकड़ा चरन गुरू का ॥ ४ ॥
मैं सरबस हुआ गुरू का ।
मैं होगया अपने गुरू का ॥ ५ ॥
कोइ और न मुझ सा गुरू का ।
गुरू का मैं गुरू का गुरू का ॥ ६ ॥

राधास्वामी नाम यह धुर का ।
  मैं पाया धाम उधर का ॥ ७ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

आज घड़ी अति पावन भावन ।
  राधास्वामी आये जक्त चितावन ॥१॥
जाके गिरह* प्रेम पग धारन ।
  तिन जीवन का करें उबारन ॥ २॥
आनँद मंगल हर्ष सुहावन ।
  जुड़ मिल हंस लगे गुन गावन ॥३॥
शोभा अधिक न जाय बखानन ।
  कहँ लग कहूँ वार नहिं पारन ॥४॥
राधास्वामी शब्द मनावन† ।
  सुरत चढ़ी देखा घट चाँदन ॥ ५ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

गुरु चरन गिरह मेरे आये ।
  भाग मेरे सोते हिये जगाये ॥ १ ॥
पौद* मेरी सूखी हरी कराये ।
  देश मेरा सूना आन बसाये ॥ २ ॥

* घर । † मनाते हैं ।

कहूँ क्या आनँद उर न समाये।
फूलती फिरूँ देह बिसराये ॥ ३ ॥
गुरू सँग सतसंगी चल आये।
हंस आकाशी देख लजाये ॥ ४ ॥
अजब यह औसर कहा न जाये।
देव और मुनि जन गये लुभाये ॥ ५ ॥
कोट तेतीसौं रहे पछताये।
दरस नहिँ पाया रहे भुलाये ॥ ६ ॥
आरती ऐसी कौन सुनाये।
अगम गत संत कौन कह गाये ॥ ७ ॥
निरंजन जोत थके गुन गाये।
ओं और अक्षर भेद न पाये ॥ ८ ॥
सोहं सतनाम राह में आये।
अलख और अगम द्वार पर छाये ॥ ९ ॥
महल राधास्वामी ऊँच दिखाये।
कहन में शोभा बरनी न जाये ॥ १० ॥
बिना गुरु भेदी कौन लखाये।
सुरत बिन शब्द कभी नहिँ जाये ॥ ११ ॥

* छोटा पेड़।

पलँग पर बैठे सतगुरु आये ।
आरती अद्भुत लीन सजाये ॥१२॥
द्वार सब घट के गये खुलाये ।
बिहंगी* सुरत चढ़ी गुन गाये ॥१३॥
दया अस कीन्ही राधास्वामी आये ।
पड़ी मैं उनके चरनन धाये ॥१४॥
प्रेम और प्रीत लगी अधिकाये ।
नहीँ सुध तन मन गई भुलाये ॥१५॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

कौन करे आरत सतगुरु की ॥ टेक ॥
ब्रह्मादिक सब तरस रहे हैं ।
मिली नहीँ यह पदवी ॥ १ ॥
कोट तेतीसों राग बैरागी ।
इंद्र मुनिंदर भटकी ॥ २ ॥
सतगुरु बिना खोज नहिँ पाया ।
करम भरम बिच अटकी ॥ ३ ॥
बड़े भाग जानो अब उन के ।
जिन को सरन परापत गुरु की ॥ ४ ॥

* पच्छी की सी गति है जिस की ।

गुरु समान समरथ नहिं कोई ।
जिन धुर घर की आन खबर दी ॥५॥
मेरे भाग बड़े अब जागे ।
मिल सतगुरु सँग आरत करती ॥६॥
भाव भक्ति क्या क्या दिखलाऊँ ।
मैं सतगुरु बिन और न रखती ॥७॥
गुरु की दया सहसदल पाया ।
त्रिकुटी चढ़ कर सुन्न परखती ॥८॥
महासुन्न और भँवरगुफा लख ।
सतलोक चढ़ अधिक हरषती ॥ ९॥
अलख अगम दरसे पद दोनों ।
आगे राधास्वामी चरन परसती ॥१०॥

******

॥ वचन उनतालीसवाँ
प्रार्थना सतगुरु के चरन कँवल में ॥

॥ शब्द पहिला ॥

सतगुरु सँग आरत करना ।
अब मैं क्यों दुख सुख सहना ॥ १ ॥
मन चित का थाल सजाऊँ ।
सब सुरत जोत जगवाऊँ ॥ २ ॥

चढ़ अधर गगन पर धाऊँ ।
अनहद धुन सदा बजाऊँ ॥ ३ ॥
गुरु किरपा करो बनाई ।
अब मुझ पे रहो सहाई ॥ ४ ॥
मैं दुखिया बहु दुख पाई ।
तन मन को रोग सताई ॥ ५ ॥
सतसँग भी किया न जाई ।
ज़ुलमी* बहु ज़ोर चलाई ॥ ६ ॥
अब मेरी कुछ न बसाई ।
कोइ चले न मोर उपाई ॥ ७ ॥
तुम दाता समरथ दाना† ।
जो चाहो करो निदाना ॥ ८ ॥
मोहिं निश्चय टेक तुम्हारी ।
तुम करिहो भौजल पारी ॥ ९ ॥
इक बिनती सुनो हमारी ।
मोहिं लीजे सरन सम्हारी ॥ १० ॥
गुन गाऊँ चरन धियाऊँ ।
तुम बिन कोइ और न गाऊँ ॥ ११ ॥

*दुख देने वाला याने काल । † अन्तरजामी ।

मैं अधम दीन गति मेरी ।
तुम चरन गहे होय चेरी ॥ १२ ॥
अब छिन छिन मुझे सम्हारो ।
मन भटक भटक अब हारो ॥ १३ ॥
भक्ती की रीत सिखाओ ।
घट में मेरे प्रेम बढ़ाओ ॥ १४ ॥
दृढ़ पकडूँ चरन तुम्हारे ।
तुम बिन नहिं और अधारे ॥ १५ ॥
मेरे मन आसा भारी ।
मुझको भी लेहु उबारी ॥ १६ ॥
राधास्वामी गुरू हमारे ।
कर दया दास भव तारे ॥ १७ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

मेरी पकड़ो बाँह हे सतगुरु ।
नहिं बह्यो धार भवसागर ॥ १ ॥
मैं बचूँ जाल से क्योंकर ।
तुम बिन कोइ और न आसर* ॥ २ ॥
अब मिला अजायब औसर ।
जम काल बड़ा है फनधर* ॥ ३ ॥

* सहारा ।

कोइ मंत्र सिखाओ आकर ।
लो चरन ओट किरपा कर ॥ ४ ॥
मैं थका चौरासी फिर फिर ।
अब कैसे मिले अमर घर ॥ ५ ॥
तब सतगुरु कहा दया कर ।
अब सुरत चढ़ाओ गगन पर ॥ ६ ॥
वह घाटी है अति अड़बड़[†] ।
मन इन्द्री खैंच उधर धर ॥ ७ ॥
तब मिले शब्द तोहि अस्थिर ।
तन मन धन आज अरप धर ॥ ८ ॥
गुरु प्रीत करो चित सम कर ।
यह आरत करो अधर चढ़ ॥ ९ ॥
राधास्वामी सरन तू दृढ़ कर ।
फिर छोड़ न कभी उमर भर ॥ १० ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

गुरू मैं गुनहगार[‡] अति भारी ॥ टेक ॥
काम क्रोध और छल चतुराई ।
इन सँग है मेरी यारी ॥ १ ॥

* साँप । † ऊँची नीची । ‡ पापी ।

लोभ मोह अहंकार ईर्षा ।
मान बड़ाई धारी ॥ २ ॥
कपटी लम्पट झूठा हिंसक ।
अस अस पाप करा री ॥ ३ ॥
दुक्ख निरादर सहा न जाई ।
सुख आदर अभिलाष भरा री ॥ ४ ॥
बिंजन स्वाद अधिक रस चाहे ।
मन रसना यहि चाट पड़ा री ॥ ५ ॥
धन और कामिन चित्त बसाये ।
पुत्र कलित्तर* आस भरा री ॥ ६ ॥
नाना बिधि दुख पावत पापी ।
तौ भी यह करतूत न छाँड़ी ॥ ७ ॥
यह मन दुष्ट काल का चेरा ।
नित भरमावत निडर हुआ री ॥ ८ ॥
जब जब चोट पड़ी दुक्खन की ।
तब डर डर कर भजन करा री ॥ ९ ॥
देखो दया मेहर सतगुरु की ।
उसी भजन को मान लिया री ॥ १० ॥

* स्त्री ।

बुध चतुराई बचन बनावट।
हार जीत की चरचा धारी ॥ ११ ॥
भेखी बहुत प्रीत नहिँ अंतर ।
भोले भक्तन धोख दिया री ॥ १२॥
नर नारी बहुतक बस कीन्हे ।
मान प्रतिष्ठा भोग किया री ॥ १३ ॥
गुरु सँग प्रीत कपट कुछ डर की ।
कभी थोड़ी कभी बहुत किया री ॥१४॥
कहँ लग औगुन बरनूँ अपने ।
याद न आवत भूल गया री ॥ १५ ॥
चोर चुग़ल* इन्द्री रस माता ।
मतलब की सब बात बिचारी ॥ १६ ॥
खुद मतलबी निर्दई मानी ।
बहुतन का अपमान किया री ॥ १७ ॥
कोटन पाप किये बहुतेरे ।
कहूँ कहाँ लग वार न पारी ॥ १८ ॥
हे सतगुरु अब दया बिचारो ।
क्या मुख ले मैं करूँ पुकारी ॥ १९ ॥

* निन्दक ।

नहिँ परतीत प्रीत नहिँ रंचक* ।
कस कस मेरा करो उबारी ॥ २० ॥
मो सा कुटिल और नहिँ जग मैं ।
तुम सतगुरु मोहिँ लेव सुधारी ॥ २१ ॥
जतन करूँ तो बन नहिँ आवत ।
हार हार अब सरन पड़ा री ॥ २२ ॥
यह भी बात कही मैं मुँह से ।
मन से सरना कठिन भया री ॥ २३ ॥
सरना लेना यह भी कहना ।
झूठ हुआ मुँह का कहना री ॥ २४ ॥
तुम्हरी गति मति तुमहीँ जानो ।
जस तस मेरा करो उबारी ॥ २५ ॥
मैं तो नीच निपट संशय रत ।
लगे न चरनन प्रीत करारी ॥ २६ ॥
मेरे रोग असाध भरे हैं ।
तुम बिन को अस करे दवा री ॥ २७ ॥
जब चाहो जब छिन में टारो ।
मेहर दया की मौज निरारी ॥ २८ ॥

* कुछ ।

बारम्बार करूँ मैं बिनती ।
और प्रार्थना करूँ तुम्हारी ॥ २९ ॥
तुम बिन और न कोई दीखे ।
तुम्हीं हो मेरे रखवारी ॥ ३० ॥
बुरा बुरा फिर बुरा बुरा हूँ ।
जैसा तैसा आन पड़ा री ॥ ३१ ॥
अब तो लाज तुम्हें है मेरी ।
राधास्वामी खेवो बला* री ॥ ३२ ॥

॥ बचन तीसवाँ ॥

आरती सतगुरु के चरण कँवल में ॥

॥ शब्द पहिला ॥

आरत गाऊँ स्वामी अगम अनामी ।
सत्तपुरुष सतगुरु राधास्वामी ॥ १ ॥
सहज का थाल अचिंत की गादी† ।
कँवल कटोरी घिय अमी डराई ॥ २ ॥
मूल नाम की जोत जगाई ।
दोउ हाथ ले सन्मुख आई ॥ ३ ॥
टोपी कमरी‡ धोती पटका§ ।
सुख पोशन रूमाल चढ़ाई ॥ ४ ॥

* आफ़त । † गद्दी । ‡ मिरज़ई । § जो कमर से बाँधा जाय ।

केसर तिलक माल फूलन की ।
धूप दीप* और भोग धराई ॥ ५ ॥
अब आरत ले फेरन लागी ।
सुन्न मँडल अनहद धुन आई ॥ ६ ॥
दृष्टि जोड़ चित चरन लगाई ।
कृपा दृष्टि गुरु कीन्ह बनाई ॥ ७ ॥
भान चंद्र छबि घट उजियारी ।
देखत देखत दृष्टि समाई ॥ ८ ॥
सब हंसन मिल आरत गाई ।
समरथ सब को लिया अपनाई ॥ ९ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

आरत गाऊँ पूरे गुरु की ।
महिमा बरनूँ गगन शिखर की ॥ १ ॥
धुन पकड़ूँ मैं अनहद घर की ।
सैर करूँ मैं सुन्न नगर की ॥ २ ॥
बात कहूँ मैं अगम डगर की ।
पीर हरूँ मैं अपने जिगर की ॥ ३ ॥
दीद† करूँ मैं पुरुष अधर की ।
दूर करूँ मैं ममता घर‡ की ॥ ४ ॥

* दीपक । † दर्शन । ‡ देह ।

जोति जगाऊँ प्रेम बिरह की ।
थाली धारूँ सुरत निरत की ॥ ५ ॥
मैं तो छोटा यह पद मोटा ।
कैसे चढ़ूँ स्वामी यह मन खोटा ॥ ६ ॥
कृपा दृष्टि का दीजे झोटा* ।
तो जावे बुधि बल का टोटा† ॥ ७ ॥
अब मन तुम चरनन पर लोटा ।
काल करम सिर मारा सोंटा‡ ॥ ८ ॥
खेल कूद सब मैंने छोड़ा ।
चित्त चरन में निस दिन जोड़ा ॥ ९ ॥
अब कीजे मो पै दया अपारी ।
मैं जाऊँ स्वामी तुम बलिहारी ॥ १० ॥
मैं किंकर हूँ दीन अधीना ।
नहिं अब तक मैं तुम को चीन्हा ॥ ११ ॥
क्या आरत मैं करने जोगा ।
अपनी दया से मो को पोषा ॥ १२ ॥
अब रक्षा मेरी तुम कीजे ।
बिछुड़ुँ न कभी सरन में लीजे ॥ १३ ॥

* झूले का झोका । † नुक़सान, घाटा । ‡ डंडा ।

दामन* तुम्हरा पकड़ा स्वामी ।
तुम हो अगम अपार अनामी ॥ १४ ॥
प्रेम भक्ति और सेवा ध्याना ।
यह सब दीजे मुझ को दाना ॥ १५ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी गाऊँ।
नाम पदारथ नाम पदारथ
नाम पदारथ पाऊँ ॥ १ ॥
जोत जगाय दृष्टि भर देखूँ ।
अगम अगाध रूप हिये पेखूँ ॥ २ ॥
महिमा ता की बरनी न जाई ।
प्रत्यक्ष सतगुरु दिया दिखाई ॥ ३ ॥
चरन सरन बर माँगूँ दाता ।
हो मेरे तुम पित और माता ॥ ४ ॥
करी आरती हित चित लाई ।
अमृत सर अस्नान कराई ॥ ५ ॥
सुन्न महल जाय बासा कीन्हा ।
धुन किंगरी सुन मन हुआ लीना ॥ ६ ॥

* पल्ला याने आसरा ।

सुरत सखी जहँ करे बिलासा ।
हंस मंडली अजब तमाशा ॥ ७ ॥
लीला देखी यहँ अति भारी ।
आगे की अब करी तयारी ॥ ८ ॥
महासुन्न में लगन लगाई ।
गुप्त भेद ले सुरत चढ़ाई ॥ ९ ॥
घाटा* भारी सो अब तोड़ा ।
भँवरगुफा सुनी सोहं घोरा† ॥ १० ॥
सत्तनाम धुन निज कर पाई ।
राधास्वामी भेद जनाई ॥ ११ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

गुरु आरत मैं करने आई ।
दुक्ख भरम सब दूर नसाई ॥ १ ॥
थाल लिया मैं सील छिमा का ।
पाया भेद मैं गुरु महिमा का ॥ २ ॥
जोत जगाई बिरह अगिन की ।
करी आरती प्रेम उमँग की ॥ ३ ॥
भोग लगाया अपने भाव का ।
फल पाया हम देह दाव का ॥ ४ ॥

* घाटी । † आवाज़ ।

दृष्टि जोड़ कर सन्मुख ठाढ़ी* ।
सतगुरु दया दृष्टि जब डारी ॥ ५ ॥
राधा राधा नित नित गाऊँ ।
स्वामी स्वामी सदा मनाऊँ ॥ ६ ॥
राधास्वामी फिर दोउ एका ।
जुगल† रूप की निस दिन टेका ॥ ७ ॥
कहँ लग बरनूँ सोभा उन की ।
कोटि सूर चँद छबि इक अँग की ॥ ८ ॥
देखत देखत मन बिगसाना ।
कँवल सूर जस प्रीत पुराना ॥ ९ ॥
कहँ लग आरत करूँ बनाई ।
मन नहिँ माने चित न अघाई ॥ १० ॥
प्रेम उमँग अपनी अब रोकूँ ।
पूरन आरत कर हिया पोखूँ ॥ ११ ॥
राधास्वामी मगन होयकर ।
दें परशादी लेउँ गोद भर ॥ १२ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

गाऊँ आरती लेकर थाली ।
गगन शिखर सूरत मेरी चाली ॥ १ ॥

* खड़ी हुई । † दोनों

उलट दृष्टि देखूँ मैं जोती ।
छिन छिन मन को तहाँ परोती ॥ २ ॥
सुरत निरत कर सुनती बाजा ।
बना आरती का सब साजा ॥ ३ ॥
कर आरत लीन्हा फल पूरा ।
उदय हुआ घट में अब सूरा ॥ ४ ॥
सूर चाँद दोउ देख उजाली ।
शब्द पौद सींचे मन माली ॥ ५ ॥
कँवलन क्यारी जाय सम्हारी ।
सुरत मालिनी फूल सँवारी ॥ ६ ॥
गूँथ गूँथ स्वामी ढिंग लाई ।
आरत कर गल हार चढ़ाई ॥ ७ ॥
फूल फूल कर सन्मुख ठाढ़ी ।
आरत फेरूँ दृष्टि निहारी ॥ ८ ॥
चाह चमेली मन किया मरुवा* ।
भरा अमी से तन का चरुआ† ॥ ९ ॥
मोह जाल का धागा तोड़ा ।
रोग सोग संशय अब छोड़ा ॥ १० ॥

* एक फूल का नाम । † बड़ा मटका ।

खैंच खाँच मन चरनन जोड़ा ।
ज्यौं त्यौं कर यह जग से मोड़ा ॥११॥
तन सीतल और मन भया सीतल ।
नहिँ भावे कुछ काँसा पीतल ॥ १२ ॥
प्रेम प्रीत स्वामी से लागी ।
और काम सब दीन्हा त्यागी ॥ १३ ॥
आरत पूरन कीन्ही अबही ।
राधास्वामी दया करी पुनि जबही ॥१४॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

आरत गावे स्वामी दास तुम्हारा ।
प्रेम प्रीत का थाल सँवारा ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान का दीपक बारा ।
भक्ति जोग धुन सुन झनकारा ॥ २ ॥
झुनक झुनक झनकार झुमावा* ।
सुरत शब्द धुन आन समावा ॥ ३ ॥
अब आरत स्वामी मानो मेरी ।
गुनहगार भूला बहुतेरी ॥ ४ ॥
छिमा करो अपराध सुवामी ।
आगे न चूकूँ पाइ हैरानी ॥ ५ ॥

* घुमाया ।

दया करो दाता प्रभु मेरे ।
मैं सेवक निज चरनन चेरे ॥ ६ ॥
दृष्टि करो भरपूर अपारा ।
पद पाऊँ जा का वार न पारा ॥ ७॥
नाम तुम्हार धुन्ध* उजियारा ।
गुन गाऊँ धुन अगम अपारा ॥ ८ ॥
दया करो अब राधास्वामी ।
देव प्रसाद मोहिं अंतरजामी ॥ ९ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

गुरु मेरे दाता मैं भई दासी ।
जनम जनम की काटी फाँसी ॥ १ ॥
दुर्लभ नर देही अब पाई ।
करूँ भक्ति गुरु लेउँ रिझाई ॥ २ ॥
रटना नाम करूँ मैं निस दिन ।
गुन गाऊँ अब स्वामी छिन छिन ॥ ३ ॥
दर्शन पाऊँ मन उमगाऊँ ।
नैन जोड़ कर सुरत लगाऊँ ॥ ४ ॥
तब अनहद धुन अद्भुत पाऊँ ।
गगन मँडल में जाय समाऊँ ॥ ५ ॥

* अंधेरा ।

त्रिकुटी जाय सिँघासन बैठी ।
करे राज घट घट मेँ पैठी ॥ ६ ॥
आरत बिधि अब कीन्हा साजा ।
धुन घघकार गगन का बाजा ॥ ७ ॥
धुन आई इक धुर से भारी ।
अधर पदारथ पाया सारी ॥ ८ ॥
बरसे अमी की धार अखंडा ।
भीँजे सुरत तजा नौखंडा* ॥ ९ ॥
हंस चाल अब चली सरोवर ।
पहुँची जाय अचिंत बरोबर ॥ १० ॥
अगम† निगम‡ से होगइ पारा ।
फोड़ा जाय सत्त का द्वारा ॥ ११ ॥
सत्तनाम पद पाया नूरा ।
काल देख अब छिन छिन भूरा ॥१२॥
मैँ भी भई नाम रस माती ।
आरत सतगुरु नित प्रति गाती ॥ १३ ॥
तुम दयाल देवो मोहिँ दाना ।
चित्त रहे तुम चरन समाना ॥ १४ ॥

* पिंड ब्रह्मंड । † दसवाँ द्वारा । ‡ महासुन्न ।

कभी न बिछड़ूँ ज्यौं जल मीना ।
बार बार तुम चरन अधीना ॥ १५ ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

आरत गाऊँ पाँच कड़ी की ।
पाँच तत्व* सँग आन पची री ॥ १ ॥
पाँच प्राण† की डोर बँधी री ।
पाँच दुष्ट‡ सँग आन अड़ी री ॥ २ ॥
सतगुरु पूरे दया करी री ।
खुली गाँठ और गगन चढ़ी री ॥ ३ ॥
काया मट्ठ खूब लड़ी री ।
धुन के मोती पोये लड़ी री ॥ ४ ॥
सुन्न मँडल की धुन पकड़ी री ।
राधास्वामी चरनन आन पड़ी री ॥ ५ ॥

॥ शब्द नवाँ ॥

सात कड़ी की आरत फेरूँ ।
सुरत चढ़ाय शब्द सँग घेरूँ ॥ १ ॥
मन को मोड़ गगन को फोड़ूँ ।
चित को रोक चरन मैं जोड़ूँ ॥ २ ॥

* पृथ्वी, जल, अग्नि, पवन, आकाश। †पाँच वायु याने अपान, व्यान, समान, प्राण, उदान। ‡ काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार।

सतगुरु मुखड़ा छिन छिन निरखूँ ।
बिबिध भाँत अनहद धुन परखूँ ॥ ३ ॥
मैं मृगनी सुनी नाद गुरू की ।
सुनत नाद तन मन सुध बिसरी ॥ ४ ॥
इंद्री पाँच सुरत मन दोई ।
सातौं सँग ले गगन समोई* ॥ ५ ॥
आँख दिखाऊँ और झुँझलाऊँ ।
सतगुरु के बल ज़ोर चलाऊँ ॥ ६ ॥
यह आरत मैं नित्त करूँगी ।
अब नहिँ रूठूँ† सच्च कहूँगी ॥ ७ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

आरत गाऊँ सत्तनाम की ।
जोत जगाऊँ अधर नाम की ॥ १ ॥
लीला देखूँ कंज श्याम की ।
सैर करूँ मैं सेत धाम की ॥ २ ॥
जड़ काटूँ अब दुष्ट काम की ।
मैं चेरी गुरु बिना दाम की ॥ ३ ॥
सेवा धारूँ आठ जाम‡ की ।
त्याग दई धुन दिशा बाम§ की ॥ ४ ॥

* प्रवेश किया । † ख़फ़ा हूँ । ‡ पहर । § बाँया ।

प्रीत लगी जस अलिफ़ लाम* की ।
नाद सुनी चढ़ लामुक़ाम† की ॥ ५ ॥
संगत छोड़ी ख़ासो आम की ।
रही न लज्जा नंगो नाम‡ की ॥ ६ ॥
सोभा देखी गगन बाम§ की ।
हुइ मस्तानी अजर जाम‖ की ॥ ७ ॥
जगह नहीं अब कुछ कलाम** की ।
आरत राधास्वामी अब तमाम की ॥ ८ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

दया गुरू की अब हुइ भारी ।
म भी आरत करन बिचारी ॥ १ ॥
ज्ञान गुरू का थाल सिँगारी ।
भक्ति जोत ले कर†† मेँ धारी ॥ २ ॥
खड़ी हुई जब गुरु के आगे ।
मद और मोह काम उठ भागे ॥ ३ ॥
दृष्टि लकुटिया‡‡ गुरु की लागी ।
ममता कुतिया भौंकत भागी ॥ ४ ॥

* प्रीत जो कभी न टूटे । † अधामी । ‡ बदनामी और नेकनामी ।
§ अटारी । ‖ प्याला । ** वचन । †† हाथ । ‡‡ लकड़ी ।

मंत्र बताया गुरु ने ऐसा ।
लोभ भूत छोड़ा तन देसा ॥ ५ ॥
सुरत चढ़ी अब गगन मँडल में ।
नौ छोड़े गइ अष्ट कँवल में ॥ ६ ॥
राधास्वामी नाम सम्हारा ।
रूप अनूप हृदे में धारा ॥ ७ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

एक आरती और बनाऊँ ।
राधास्वामी आगे आन सुनाऊँ ॥ १ ॥
जुक्ति जतन कर बिरह जगाऊँ ।
प्रेम प्रीत का थाल सजाऊँ ॥ २ ॥
कुल कुटुम्ब से नाता तोड़ा ।
चरन कँवल में मन को जोड़ा ॥ ३ ॥
काल चक्र डाला बहुतेरा ।
छोड़ दिया सब मेरा तेरा ॥ ४ ॥
मन उमँगा चरनन में भारी ।
सुध नहिँ को नर है को नारी ॥ ५ ॥
शब्द भेद जो गुरू दरसाया ।
सुरत चढ़ाय द्वार पर आया ॥ ६ ॥

गगन माहिँ घर दास कहाया ।
स्वामी चरन लिपट लिपटाया ॥ ७ ॥
घट मैं दर्शन सतगुरु पाया ।
रूप अनूप देख हरखाया ॥ ८ ॥
गुंजत भँवर सरोज* सेत मैं ।
लेत सुगंध और मगन हेत† मैं ॥ ९ ॥
धुन की ख़बर जनावत न्यारी ।
लगी सुरत जहँ अधिक करारी ॥ १०॥
राधास्वामी दया बिचारी ।
मो सी अधम को लिया उबारी ॥११॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

अगम आरती राधास्वामी गाऊँ ।
तन मन धन सब भेंट चढ़ाऊँ ॥ १ ॥
छत्त बुहारूँ छज्जे झाड़ूँ‡ ।
नीच नीच मैं सेवा धारूँ ॥ २ ॥
दया करो अब स्वामी मेरे ।
जन्म जन्म पड़ी काल के घेरे ॥ ३ ॥
अब दयाल ने मुहर§ लगाई ।
कंटक काल सब दूर पराई ॥ ४ ॥

* कँवल । † प्यार । ‡ झाड़ू लगाऊँ । § छाप ।

देव प्रसाद मोहिं राधास्वामी ।
पद पाऊँ सतनाम अनामी ॥ ५ ॥
मैं चेरी स्वामी तुम्हरे घर की ।
साफ़ करूँ बुधि मायाबर* की ॥ ६ ॥

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

घामर घूमर† करूँ आरती ।
स्वामी हुए दयाल जी ॥ १ ॥
खाऊँ परशादी ओढूँ परशादी ।
नाम तुम्हारा लिये जाऊँगी ॥ २ ॥
देखो चाहे मत देखो स्वामी ।
मैं अपनी सी करे जाऊँगी ॥ ३ ॥
देऊँ परिकर्मा पिऊँ चरनामृत ।
बँदगी कर कर चरन गहूँगी ॥ ४ ॥
काल करम का माथा फोड़ूँ ।
सुरत चरन में जोड़ रहूँगी ॥ ५ ॥
ऐसी दुर्लभ भक्ति कमाऊँ ।
उमँग उमँग गुन गाऊँगी ॥ ६ ॥
पूजा भेट धरूँ नहिं कौड़ी ।
आरत गाऊँ नौड़ी नौड़ी‡ ॥ ७ ॥

* माया का पति याने काल । † परकरमा देकर । ‡ झुक कर ।

ख़फ़ा होव तो रूसूँ नाहीं ।
चरन तुम्हारे पकड़ रहूँगी ॥ ८ ॥

॥ शब्द पंद्रहवाँ ॥

करे आरता सेवक भोला ।
नेह* नगर का फाटक खोला ॥ १ ॥
चौक अकाश साफ़ अब कीन्हा ।
शब्द गुरू का दर्शन लीन्हा ॥ २ ॥
कर कर दरस मगन हुआ मन में ।
सुरत सखी पहुँची इक छिन में ॥ ३ ॥
लगन लगी और प्रीत अब जागी ।
राधास्वामी दर्शन सूरत पागी ॥ ४ ॥
पाँच तत्व फुलवारी देखी ।
प्रकृत पचीसों क्यारी पेखी ॥ ५ ॥
सहन† चौतरा सुन्न मँझारा ।
तहँ राधास्वामी सिंहासन धारा ॥ ६ ॥
हिया परात हाथ अब लीन्ही ।
बाला जोता‡ धुन्ध टलीनी ॥ ७ ॥
अगम नगर ला भेंट चढ़ाया ।
अमी सजीवन बूटी लाया ॥ ८ ॥

* प्रीति । † आँगन । ‡ बड़ी जोत ।

किया आरता उमँग प्रेम का ।
फोड़ा माथा काल अधम का ॥ ९ ॥
धारा राधास्वामी नाम बिहंगम* ।
दम दम तोड़े दाँत धरमजम† ॥ १० ॥
फूल पान और केसर टीका ।
भोग भाव धरा प्रीत रीत का ॥ ११ ॥
पाउँ प्रसाद अब राधास्वामी का ।
गाउँ गीत पल पल प्रीतम का ॥ १२ ॥
किया आरता पूरा आज ।
जन्म अष्टमी पाया साज ॥ १३ ॥

॥ शब्द सोलहवाँ ॥

जाग रे मन छोड़ बखेड़ा ।
त्याग रे मन जक्त अँधेरा ॥ १ ॥
अब खोजो साँझ सबेरा ।
फिर क़ाबू‡ चले न तेरा ॥ २ ॥
तब सतगुरु करें निबेड़ा§ ।
तू करे न भौजल फेरा ॥ ३ ॥
काल यह डाला घेरा ।
सब खायँ जीव भटभेड़ा‖ ॥ ४ ॥

* पक्षी । † धर्मराय । ‡ उपाय । § निस्तार । ‖ भटकना

सतगुरु पद सेवो मेरा ।
छूटे सब मेरा तेरा ॥ ५ ॥
मत कर तू बहुल अबेरा ।
अब बाँध अगम का बेड़ा* ॥ ६ ॥
घाट घट भीतर हेरा ।
पद मिला आज बहु नेड़ा† ॥ ७ ॥
मैं किया गगन में डेरा ।
जहँ संत करें नित फेरा ॥ ८ ॥
तसकर‡ सब मारे घेरा ।
सुख पाया आज घनेरा ॥ ९ ॥
संतन का चौकी पहरा ।
मैं करूँ अचिंत बसेरा ॥ १० ॥
आरत की उमँग उठाऊँ ।
सामान कहाँ से लाऊँ ॥ ११ ॥
मन भूखा सूरत भूखी ।
इन्द्री तन भीतर सूखी ॥ १२ ॥
तब सतगुरु दीन्ही टेरा ।
तू चढ़ आ छोड़ अँधेरा ॥ १३ ॥

* नाव । † पास । ‡ चोर । § दूसरे और तीसरे एडिशन में "छोड़ अँधेरा" की जगह "कर सुलझेरा" का पाठ है ।

त्रिकुटी का देख उजेरा ।
धुन से कर व्हाँ की नेहरा ॥ १४ ॥
सुन में जाय चौकी डारी ।
अब मिल गइ सामाँ भारी ॥ १५ ॥
अब आरत करूँ सिँगारी ।
सतगुरु पै जाउँ बलिहारी ॥ १६ ॥
उमँगी अब सुरत करारी ।
यहि कर में लीन्ही थारी ॥ १७ ॥
जहँ सीतल जोत जगाई ।
झारी भर अमृत लाई ॥ १८ ॥
असी सूर का भोग धराई ।
कँवलन गल हार पहराई ॥ १९ ॥
सतगुरु की सोभा भारी ।
मैं निरखूँ दृष्टि पसारी ॥ २० ॥
महासुन्न ग़लीचा डारा ।
जहँ गगन धरन नहिँ तारा ॥ २१ ॥
जहँ दीप रचे अति भारी ।
हंसन गति क्या कहुँ न्यारी ॥ २२ ॥

---

* प्रीत ।

भक्तन के जूथ* बसाये ।
उपमा उन कही न जाये ॥ २३ ॥
आरत बिधि देखन आये ।
सब भँवरगुफा ढिंग छाये ॥ २४ ॥
सचखंड बना सिंघासन ।
सतपुरुष किया तहँ आसन ॥ २५ ॥
अनहद धुन बीन बजाई ।
हंसन मिल आरत गाई ॥ २६ ॥
जहँ आरत कीन्ही भारी ।
फिर अलख लोक पग धारी ॥ २७ ॥
आरत की धूम समाई ।
धुर अगम लोक तक आई ॥ २८ ॥
यह आरत बहुत बढ़ाई ।
परताप कहा नहिं जाई ॥ २९ ॥
राधास्वामी घर सें आई ।
क्या भाग सराहूँ भाई ॥ ३० ॥
आरत अब होगइ पूरी ।
मैं राधास्वामी चरनन धूरी ॥ ३१ ॥

* झुंड।

॥ शब्द सत्रहवाँ ॥

दम्पत* आरत करूँ राधास्वामी ।
प्रेम सहित गाऊँ गुन नामी ॥ १ ॥
कर पकवान मिष्ठान भोग धर ।
और बस्तर गोटन के सज कर ॥ २ ॥
लाय भेट स्वामी के राखे ।
तब स्वामी अस अज्ञा भाखे ॥ ३ ॥
करो आरती प्रेम सिँगारी ।
बार बार अस आरत धारी ॥ ४ ॥
हम भी आरत करें बनाई ।
राधास्वामी रहो सहाई ॥ ५ ॥
सुरत शब्द भाँवर† अब लीन्ही ।
सदा सुहाग अचल गुरु दीन्ही ॥ ६ ॥
गुरु दयाल तो कुल्ल दयाला ।
सतगुरु पूरे करें निहाला ॥ ७ ॥
उन चरनन पर जाऊँ बलिहारी ।
उन बिन कौन करे उपकारी ॥ ८ ॥
मैं किंकर तुम चरन अधारा ।
तुम बिन को अब करे उबारा ॥ ९ ॥

* जोड़ा । † परिक्रमा ।

मस्तक हाथ धरो अब हमरे ।
प्रीत लगे अब चरनन तुम्हरे ॥ १० ॥
ऐसी कृपा करो राधास्वामी ।
भक्ति जुक्ति मोहिं देव अनामी ॥ ११ ॥
मन और सुरत दोउ मिल आये ।
नूर तुम्हार हिये में लाये ॥ १२ ॥
अब दोनों को लेकर सरना ।
मारग अगम लखावो अपना ॥ १३ ॥
सुरत चढ़ावो सहसकँवल में ।
रूप निहारूँ जोत अब तिल में ॥ १४ ॥
फिर आगे को चढ़ूँ बंक में ।
लखूँ तिरकुटी धाम उमँग में ॥ १५ ॥
सुन्न शिखर चढ़ पहुँचूँ छिन में ।
महासुन्न का धारूँ पन* में ॥ १६ ॥
भँवरगुफा बैठूँ सुन धुन में ।
बीन बजाऊँ जा सतपुर में ॥ १७ ॥
अलख अगम की दया समाई ।
राधास्वामी नाम सुनाई ॥ १८ ॥

* इरादा, प्रतिज्ञा ।

सुनूँ नाम और धारूँ चित में ।
करम भरम काटूँ इक पल में ॥ १९ ॥
कर सतसंग सुलिनता नासी ।
घट में चेतन कीन्ह प्रकासी ॥ २० ॥
अंध घोर अज्ञान नसाना* ।
घोर अनाहद मिला ठिकाना ॥ २१ ॥
सुन सुन धुन मगनानी ऐसी ।
मीन मगन रहे जल में जैसी ॥ २२ ॥
दासी दास जुगल सरनाये ।
करके ब्याह आरती लाये ॥ २३ ॥
भेट चढ़ावें अब अति गहरी ।
तन मन धन लो तुच्छ भये री ॥ २४ ॥
मैं अजान कुछ मर्म न जानूँ ।
राधास्वामी नाम बखानूँ ॥ २५ ॥
तुम दयाल मेरी आरत मानो ।
हम अजान तुम गति न पिछानो ॥ २६ ॥
राधास्वामी दरस भाग से पाया ।
राधास्वामी सरन चित्त अब आया ॥ २७ ॥

*नाश हुआ ।

॥ शब्द अट्ठारहवाँ ॥

आज आरती करूँ सुहावन ।
भावन पावन मन ललचावन ॥ १ ॥
गावन लावन प्रीत बढ़ावन ।
छावन उमँग हटावन धावन* ॥ २ ॥
सुरत चलावन शब्द मिलावन ।
सहज समावन रंग चढ़ावन ॥ ३ ॥
अघ† रावण कुल नाश करावन ।
सीता राम अजुध्या लावन ॥ ४ ॥
सुरत सिया मन राम कहावन ।
दसवाँ द्वार अजुध्या गावन ॥ ५ ॥
मान सरोवर घाट अन्हावन ।
महासुन्न मैं जाय चढ़ावन ॥ ६ ॥
भँवरगुफा लीला दरसावन ।
सत्तलोक गति बीन सुनावन ॥ ७ ॥
अलख अगम जा शब्द जगावन ।
राधास्वामी धाम दिखावन ॥ ८ ॥

* चंचलता । † पाप ।

॥ शब्द उन्नीसवाँ ॥

उठी अभिलाषा इक मन मोर ।
करूँ अब आरत गुरु की जोर ॥ १ ॥
प्रेम की थाली लूँगी हाथ ।
शब्द की जोत जगाऊँ साथ ॥ २ ॥
सुरत को बाँधूँगी अब तान ।
रूप गुरु निरखूँगी अब आन ॥ ३ ॥
बचन कर महिमा करूँ बखान ।
चरन गुरु हिरदे लाऊँ ध्यान ॥ ४ ॥
गुरू बिन और न काहू मान ।
सरन मैं उनके पड़ी निदान ॥ ५ ॥
करें गुरु खेवा मेरा पार ।
बचावें डूबत हूँ मँझ धार ॥ ६ ॥
पकड़ अब लेना भुजा पसार ।
जक्त का मेटो सभी गुबार ॥ ७ ॥
सुरत को लीजे आज सम्हार ।
चढ़ूँ और झाँकूँ नभ का द्वार ॥ ८ ॥
निरंजन जोत लखूँ उजियार ।
सहसदल छोड़ बंक के पार ॥ ९ ॥

घाट फिर त्रिकुटी लेउँ निहार ।
सुन्न चढ़ खोलूँ बज्र किवाड़ ॥ १० ॥
महासुन पहुँचूँ सतगुरु लार ।
भँवर चढ़ पकड़ूँ बंसी धार ॥ ११ ॥
सच्चखँड आई बीन सम्हार ।
अलख और अगम किया दरबार ॥१२॥
किया राधास्वामी मुझ से प्यार ।
हुई मैं उन पर अब बलिहार ॥ १३ ॥
करूँ मैं आरत लूँ आनंद ।
मिला मोहिं आज परमानंद ॥ १४ ॥

॥ शब्द बीसवाँ ॥

क्योंकर करूँ आरती सतगुरु ।
बल नहिं धरूँ प्रेम का निज उर ॥१॥
तुम हो दीन दयाल कृपाला ।
बंधन काट करो प्रतिपाला ॥ २ ॥
मैं किंकर अति अधम उदासी ।
तुम्हरी गति सब पर अबिनासी ॥३॥
मैं क्या जानूँ भेद तुम्हारा ।
बिषय भोग मेरा सदा अहारा ॥ ४ ॥

काल कला की धारा भारी ।
या ते पार उतारो तारी ॥ ५ ॥
मन तन मोर करत नहिँ काजा ।
सेवा भजन करत करे लाजा ॥ ६ ॥
संत समागम दुर्लभ भाई ।
सो किरपा से मिल्यो मोहिँ आई ॥७॥
कौन भाग अब उदय हमारा ।
या ते दर्शन पायो तुम्हारा ॥ ८ ॥
दूर देश से चल कर आयो ।
और काल बहु बिघन लगायो ॥ ९ ॥
मन उचाट कर चित भरमावत ।
बारम्बार देश को धावत ॥ १० ॥
सतसँग मेँ रहना नहिँ चाहत ।
धन तिरिया की याद बढ़ावत ॥ ११ ॥
ताते सतगुरु मत को फेरो ।
तुम चरनन कर निस दिन चेरो ॥१२॥
सुरत चढ़ावो गगन शब्द मेँ ।
निरत जमावो धुनन अवध मेँ ॥ १३ ॥
सहसकँवल त्रिकुटी लख लीला ।
सुन्न महासुन खेलत सीला ॥ १४ ॥

भँवरगुफा सतलोक दिखाई ।
अलख अगम की छवि चित भाई ॥१५॥
राधास्वामी दीन अवाज़ा ।
चलो सुरत घर अपना पा जा ॥ १६ ॥

॥ शब्द इक्कीसवाँ ॥

धूम धाम से आइ इक सजनी ।
पति* को संग पुत्र दोउ† सगनी ॥ १ ॥
आय सरन सतगुरु की लीन्ही ।
तन मन सहित प्रीत परबीनी ॥ २ ॥
आरत करन बिचारत गुरु की ।
उमँग प्रेम दिखलावत उर की ॥ ३ ॥
गुरु सँग प्रीत करी नहिँ थोड़ी ।
सुरत निरत निज चरनन जोड़ी ॥४॥
प्रेम जगावत कर्म सुलावत ।
भजन भक्ति में धीर बढ़ावत ॥ ५ ॥
नित्त नवीन प्रीत अधिकाई ।
सोभा गुरु देखत मुसकाई ॥ ६ ॥
गुरु की महिमा कही न जाई ।
कोटिन सूर इक रोम लजाई ॥ ७ ॥

* मन । † वैराग, अनुराग ।

गति उनकी उनहीं की जानी ।
कौन कहे यह अकथ कहानी ॥ ८ ॥
सतसँग उनका जो कोइ पावे ।
शब्द माहिं वह छिन छिन धावे ॥ ९ ॥
ता ते सरन गही राधास्वामी ।
तुमही रक्षा करो निदानी ॥ १० ॥
मैं आरत कुछ करन न जानी ।
अपनी दया से लगन लगानी ॥११॥

॥ शब्द बाईसवाँ ॥

सतगुरु की अब करूँ आरती ।
जगा भाग और रहूँ जागती ॥ १ ॥
दिन दिन प्रीत पदारथ लाती ।
बढ़ी उमँग अब कहाँ छिपाती ॥ २ ॥
देख सारदा* निपट लजाती ।
सतगुरु महिमा कही न जाती ॥ ३ ॥
जब जब दरस गुरू का पाती ।
तन मन धन सब अर्प धराती ॥ ४ ॥
अस आरत मैं करूँ बनाई ।
संत सरन मैं निज कर पाई ॥ ५ ॥

* सरस्वती ।

काल दुष्ट इक बिघन लगाई ।
उलटी मो को देश पठाई ॥ ६ ॥
मैं गुरु मूरत हिरदे धारी ।
पल पल छिन छिन करूँ अधारी ॥७॥
तब तो काल रहे मुरझाई ।
बिरह प्रेम बल मार गिराई ॥ ८ ॥
दूर रहूँ सतगुरु उर धारूँ ।
काल बिघन सब दूर निकारूँ ॥ ९ ॥
मैं सतगुरु बल लीन्हा हाथा ।
फोड़ूँ काल करम का माथा ॥ १० ॥
अब छिन यह आरत गाऊँ ।
सतगुरु चरनन नित बल जाऊँ ॥ ११ ॥
तन तो रहे देश के माहीं ।
मन तो रहे चरन की छाहीं ॥ १२ ॥
यों दम दम गुरु पास बसानी ।
अब क्या बिघन करे मेरी हानी ॥१३॥
राधास्वामी मूरत हिरदे धारी ।
छिन छिन देखूँ नैन उघारी ॥ १४ ॥

॥ शब्द तेईसवाँ ॥

करूँ री इक आरत अद्भुत भारी ।
चरन गुरु सेऊँ होकर न्यारी ॥ १ ॥
सुरत मेरी लागी धुन में पागी ।
निरत मेरी जागी ममता भागी ॥ २ ॥
हंस गति पाई पानी त्यागी ।
रही मैं अब तक बहुत अभागी ॥ ३ ॥
गुरु ने अब दीन्हा मोहिं सुहागी ।
मैं गुरु के चरन की हुई अनुरागी ॥ ४ ॥
भोग सब छूटे चित बैरागी ।
गाऊँ अब निस दिन सतगुरु रागी ॥ ५ ॥
कहूँ कहा मैं अब बड़ भागी ।
शब्द माहिं सुरत मेरी लागी ॥ ६ ॥
करम धरम बिच दीन्ही आगी ।
मान अपमान दोऊ मैं त्यागी ॥ ७ ॥
सतगुरु चरन हुई मैं दागी ।
नाम दान सतगुरु से माँगी ॥ ८ ॥
गगन चढ़ूँ देखूँ पद आगी ।
सत्त शब्द में सुरत समागी* ॥ ९ ॥

* समा गई धस गई ।

छूट गई संगत सब कागी ।
हंसन साथ रला मेरा भागी ॥ १० ॥
मन को जीता ममता भागी ।
राधास्वामी चरन परस परसागी ॥११॥

॥ शब्द चौबीसवाँ ॥

गुरु के चरन पर चित बलिहारी ।
मन परतीत करूँ दृढ़ सारी ॥ १ ॥
कर अभिलाख दूर से आयो ।
अचरज दरस नैन भर पायो ॥ २ ॥
काल करी अपनी ठगियाई ।
मन बिच नाना भरम उठाई ॥ ३ ॥
कभी प्रतीत प्रीत दृढ़ताई ।
कभी सरन से देत कचाई ॥ ४ ॥
कभी झकोले मोह दिखाई ।
कुटँब देस की याद कराई ॥ ५ ॥
चरन गुरू ज्यों त्यों दृढ़ करता ।
फिर भरमाय जक्त में धरता ॥ ६ ॥
क्या क्या कहूँ काल की लीला ।
तपन उठावत खोवत सीला ॥ ७ ॥

लीक पुरानी कुल मरजादा ।
तीरथ बर्त धर्म को साधा ॥ ८ ॥
भरम उठावत अस अस भारी ।
दूर हटावत प्रेम बिचारी* ॥ ९ ॥
मैं बलहीन दीन सरनागत ।
जस जानो तस टारो आफ़त ॥ १० ॥
यह मन चोर कठोर हमारो ।
लोभ लहर में बहतो सारो ॥ ११ ॥
आस भरोस और बिस्वासा ।
गुरु चरनन में करे न बासा ॥ १२ ॥
क्योंकर इस मन को समझाऊँ ।
गुरु की दया बिन ठौर न पाऊँ ॥१३॥
ता ते बिनती करूँ तुम्हारी ।
ज्यों त्यों मन को लेव सुधारी ॥१४॥
तुम चरनन में रहूँ सदा री ।
कभी न छोड़ूँ दृढ़ क़रारी† ॥१५ ॥
चरन भेद गुरु दिया बताई ।
नैन निरख जहँ सुरत लगाई ॥ १६ ॥

* विचार । † दृढ़ता ।

दो तिल छूट एक तिल दरसा ।
जोत निरंजन का पद परसा ॥ १७ ॥
आगे सुषमन घाट सुहाई ।
द्वार बंक में जाय समाई ॥ १८ ॥
घंटा संख रही लौ लाई ।
छोड़ ताहि फिर त्रिकुटी आई ॥ १९ ॥
गरजा बादल मृदंग सुनाई ।
ओंकार गुरु शब्द जनाई ॥ २० ॥
लीला देख सुरत हरखाई ।
आगे सुन्न सरोवर धाई ॥ २१ ॥
हंसन साथ उमंग बढ़ाई ।
मानसरोवर बिमल अन्हाई ॥ २२ ॥
महासुन्न की करी चढ़ाई ।
सतगुरु संग खेप निभआई* ॥ २३ ॥
तिमर छाँट परकाश दिखाई ।
भँवरगुफा बंसी सुन पाई ॥ २४ ॥
सच्चखंड सत शब्द लखाई ।
धुन अनंत और बीन बजाई ॥ २५ ॥

* निरविघ्न पार हुई ।

अलख अगम दर्शन दरसाई ।
राधास्वामी धाम समाई ॥ २६ ॥
आरत कर लीन्हा घट भेदा ।
भई परापत सर्व उमेदा ॥ २७ ॥
सकल मनोरथ पूरन हुए ।
रतन पदारथ राधास्वामी दिये ॥२८॥

॥ शब्द पच्चीसवाँ ॥

आरत आगे राधास्वामी के कीजे ।
बिमल प्रकाश अमी रस पीजे ॥१॥
चित कर चंदन हित कर माला ।
आन चढ़ाऊँ स्वामी दीन दयाला॥२॥
गगन का थाल सुरत की बाती ।
शब्द की जोत जगे दिन राती ॥ ३ ॥
सहसकँवल दल घंटा बाजे ।
बंकनाल धुन संख सुनीजे ॥ ४ ॥
ओंकार धुन त्रिकुटी बाजे ।
सुन्न सिखर अक्षर धुन गाजे ॥ ५ ॥
भँवरगुफा ढिँग सोहं बासा ।
सत्तलोक सतनाम निवासा ॥ ६ ॥

दास तुम्हारे स्वामी आरत गावैं ।
चरन कँवल में बासा पावैं ॥ ७ ॥

*****

॥ वचन इकतीसवाँ ॥

बर्णन मन और इन्द्रियों के विकार और काल के बिघ्नों का अभ्यास की हालत में

॥ शब्द पहिला ॥

घट औघट झाँका री सजनी ॥ टेक ॥
मन मतिमंद कहन नहिँ माने ।
शब्द सुरत नहिँ ताका री ॥ १ ॥
घर घर फिरे स्वान मति लीये ।
झूठ झूठ बिष खाता री ॥ २ ॥
धन संपत सुख चाह उठाई ।
मान मनी मद माता री ॥ ३ ॥
कुल कुटंब जग झूठ पसारा ।
तिन सँग बाँधा नाता री ॥ ४ ॥
घाट बाट सतगुरु नहिँ चीन्हे ।
खान चार नित जाता री ॥ ५ ॥
क्योंकर कहूँ बूझ नहिँ माने ।
फिर फिर भरम भुलाता री ॥६॥

छल और कपट ईर्षा निंदा ।
दम दम पाप बढ़ाता री ॥ ७ ॥
गुरु का बचन सात्विकी* रहनी ।
इन में चित न समाता री ॥ ८ ॥
कहँ लग कहूँ हार अब मानी ।
गुरु बिन कौन बचाता री ॥ ९ ॥
गुरु चरनन पर प्रेम बढ़ाओ ।
पिरथम सीढ़ी गाता री ॥ १० ॥
दूसर सीढ़ी सुरत शब्द की ।
मन अंतरगत न्हाता री ॥ ११ ॥
राधास्वामी कहत बुझाई ।
जीवन काज सुनाता री ॥ १२ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

छूटूँ मैं कैसे इस मन से ।
सुरत यह कहती निज मन से ॥ १ ॥
जाल इन डाला बहु रस से ।
लुटाया मोहिं धुर घर से ॥ २ ॥
बँधी मैं आय इन दस† से ।
किया परपंच‡ इन मुझ से ॥ ३ ॥

* सतोगुनी । † दस इन्द्री । ‡ उपाधि ।

द्वार मैं आन नौ परसे।
गिराया मोहिं दस दर* से ॥ ४ ॥
लगी अब लाग भोगन से।
छुटूँ क्यौं हाय इस फंद से ॥ ५ ॥
गुरू बिन कोइ नहीं दरसे।
निकाले मोहिं इस बन से ॥ ६ ॥
काँपती मैं फिरूँ जम से।
छुड़ावे कौन इस डर से ॥ ७ ॥
पशू सम हो गई नर से।
करी नहिं प्रीत मैं गुरु से ॥ ८ ॥
डार ज्यों टूट गइ जड़ से।
पड़ी मैं दूर निज घर से ॥ ९ ॥
करूँ फ़र्याद सतगुरु से।
लगाओ मोहिं चरनन से ॥ १० ॥
दूर करो मैल सतसँग से।
होय फिर भिन्न इस तन से ॥ ११ ॥
मिले तब जाय सुन धुन से।
अमी रस पाय तब सरसे† ॥ १२ ॥

* द्वार। † खुश हो।

शब्द से जाय कर परसे ।
मिटे दुख फिर नहीं तरसे* ॥ १३ ॥
लगूँ मैं आय राधा से ।
करूँ मैं प्रीत स्वामी से ॥ १४ ॥
करो राधास्वामी तुम अपना ।
पड़ी मैं आय तुम सरना ॥ १५ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

गई आज सोच में ॥ टेक ॥
मेरी सुरत कुचालन चाल ।
गई आज सोच में ॥ १ ॥
अनहद बाजे बजें गगन में ।
धरे न धुन पर ख़्याल ॥ २ ॥
सतगुरु पूरे भेद बतावें ।
यह भरमे भौ जाल ॥ ३ ॥
सतसँग सार निकार न जाने ।
पड़ी बहुत जंजाल ॥ ४ ॥
कैसे कहूँ बूझ नहिं लावे ।
अति भरमाया काल ॥ ५ ॥

* तृष्णा करे ।

बिन सतगुरु बिन नाम सम्हारे ।
कौन करे प्रतिपाल ॥ ६ ॥
छिन छिन फाँसी पड़े गुनन की ।
कोइ काटैं दीन दयाल ॥ ७ ॥
काम क्रोध आसा और तृष्णा ।
यह घट भारी पाल* ॥ ८ ॥
बिरह अगिन उठ उठ बुझ जावे ।
क्योंकर करूँ सम्हाल ॥ ९ ॥
दूत दुष्ट अब मोहिं सतावैं ।
अपनी छाया डाल ॥ १० ॥
सुरत शब्द मारग बिन पाये ।
कैसे होय निहाल ॥ ११ ॥
सहसकँवल चढ़ त्रिकुटी आवे ।
न्हाय मानसर ताल ॥ १२ ॥
महासुन्न चढ़ भँवरगुफा तक ।
सत्तनाम पावे निज माल ॥ १३ ॥
दया करो अब राधास्वामी ।
मेटो यह दुख साल ॥ १४ ॥

* परदा ।

॥ शब्द चौथा ॥

मन चंचल कहा न माने ।
मैं कौन उपाय करूँ ॥ १॥
गुरु नित समझावें साध बुझावें ।
सतसँग में चित जोड़ धरूँ ॥ २ ॥
सुन सुन बचन बहुत पछताऊँ ।
बहुर भुलावे भर्म रहूँ ॥ ३ ॥
अपनी सी बहु जुक्ति सम्हारी ।
कैसे मन को मार सकूँ ॥ ४ ॥
सुरत शब्द का घाट न पाया ।
फिर क्योंकर मैं गगन चढ़ूँ ॥ ५ ॥
डाँवाँडोल रहे संशय में ।
जक्त आस से नाहिं टरूँ ॥ ६ ॥
सतगुरु सरन पकड़ कर बैठूँ ।
तो इस मन की व्याध हरूँ ॥ ७ ॥
जक्त जाल यह अति दुखदाई ।
इसी अगिन में नित्त जरूँ ॥ ८ ॥
बिना मेहर कुछ काज न सरिहै ।
अब राधास्वामी की सरन पड़ूँ ॥ ९ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

चमरिया* चाह बसी घट माहिँ ।
गुरू अब कैसे धारँ पायँ ॥ १ ॥
दुक्ख सुख नितही आवैं जायँ ।
करम फल भोगत मन के माहिँ ॥२॥
शुद्धता सबही भागी जायँ ।
प्रेम और भक्ति नहीं ठहरायँ ॥ ३ ॥
बिरह अनुराग निकासे जायँ ।
करूँ क्या कोइ जतन अब नाहिँ ॥४॥
बहुर फिर गुरू ही लेयँ बचाय ।
नाम बिन करे न कोइ सहाय ॥ ५ ॥
करूँ अब सतसँग सरन समाय ।
शब्द में निस दिन लगन लगाय ॥६॥
राधास्वामी कीन्ही दृष्टि घुमाय† ।
चमरिया घट से भागी जाय ॥ ७ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

गुज़र मेरी कैसे होय सहेली ।
इस मन साथ ॥ १ ॥

*चमड़े से जिसकी प्रीत है । † घुमाकर ।

यह तो चोर चुग़ल छल कपटी ।
कभी न आवे हाथ ॥ २ ॥
गुरु समझावें मैं समझाऊँ ।
पुन पुन करता अपनी घात ॥ ३ ॥
काम न छोड़े क्रोध न छोड़े ।
लोभ मोह सँग अति दुख पात ॥४॥
मान बड़ाई जक्त बासना ।
नित्त बढ़ावत जात ॥ ५ ॥
खान पान और भोग बिलासा ।
इन में सदा फँसात ॥ ६ ॥
सतगुरु दाता शब्द लखावें ।
सो नहिं लेता दात ॥ ७ ॥
ऐसा दुष्ट कहा नहिं माने ।
छोड़त नहिं उतपात ॥ ८ ॥
जम नगरी के दुक्ख सुनाऊँ ।
तो भी भय नहिं खात ॥ ९ ॥
सत्तलोक के सुख दरसाऊँ ।
सो भी कुछ परतीत न लात ॥ १० ॥
कहूँ कहाँ लग नेक न माने ।
मैं तो हारा जात ॥ ११ ॥

कैसी करूँ उपाव न सूझे।
नहिं या ते बसियात* ॥ १२ ॥
जो कुछ करें करें राधास्वामी।
और न कोई दृष्टी आत ॥ १३ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

हुआ मन आज दुखदाई।
कहूँ मैं चाल इस गाई ॥ १ ॥
न डर गुरु का न भय जम का।
गिरे नित पाप में जाई ॥ २ ॥
करे सतसँग सुने बानी।
समझ तौ भी नहीं लाई ॥ ३ ॥
स्वान की पूँछ ज्यों जानो।
कभी छोड़े न टेढ़ाई ॥ ४ ॥
मिरग सम होय सदा चंचल।
कभी लेवे न थिरताई ॥ ५ ॥
नाद घट में धुरे† निस दिन।
सुने नहिं एक छिन भाई ॥ ६ ॥
कर्म और भर्म में पचता।
भोग में रहे लौ लाई ॥ ७ ॥

* बस चलता। † बजे।

भोग और रोग में खपता ।
नाम रस लेत नहिं आई ॥ ८ ॥
रहे अभिमान में भूला ।
गुरू सँग करत चतुराई ॥ ९ ॥
कही राधास्वामी गत मन की ।
दया बिन हाथ नहिं आई ॥ १० ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

गुरू को ऊपर ऊपर गाता ।
गुरू को दिल भीतर नहिं लाता ॥१॥
गुरू का दर्शन बाहर करता ।
चित्त में दर्शन कभी न धरता ॥ २ ॥
काज तेरा कैसे होवे भाई ।
ऊपरी गुरु सँग लगन लगाई ॥ ३ ॥
भीतरी धन और मान बिराजा ।
ऊपरी नाम ग़रीबी साजा ॥ ४ ॥
भीतरी काम और क्रोध बसाये ।
ऊपरी सील छिमा दिखलाये ॥ ५ ॥
भीतरी लगन न गुरु से लागी ।
ऊपरी लगन करे क्या पाजी ॥ ६ ॥

गुरू कस तेरे होयँ सहाई ।
शब्द की प्रीत न अंतर आई ॥ ७ ॥
कौन बिधि कहूँ तोहि समझाई ।
भाग कुछ ओछा ही तैं पाई ॥ ८ ॥
तमोगुन छाय रहा घट तेरे ।
सतोगुन कभी न आवे नेरे* ॥ ९ ॥
भजन तू करे न कबही सच्चा ।
सरन में गुरु की है तू कच्चा ॥ १० ॥
ज़रा सी ताड़ मार नहिं सहता ।
निरादर करें जक्त में बहता ॥ ११ ॥
दुखों से डर कर कुछ कुछ लगता ।
गये दुख वोहीं तुर्त फड़कता† ॥ १२ ॥
नाम रस पाया नहिं अबिनासी ।
जक्त से हुआ न कभी उदासी ॥ १३ ॥
जतन कोइ समझ नहीं अब आता ।
गुरू की मेहर बिना क्या पाता ॥१४॥
गुरू की मरज़ी कभी न परखी ।
मेहर कहो आवे कैसे धुर की ॥ १५ ॥

* निकट । † बे रोक टोक बरतता है ।

ख़बर नहिँ पाई तैं निज घर की ।
शब्द में सुरत न तेरी सरकी* ॥ १६ ॥
मरम यह मन का सबही गाया ।
सुनो राधास्वामी कहत सुनाया ॥१७॥

॥ शब्द नवाँ ॥

अरे मन नहिँ आई परतीत ।
गुरू की नहिँ आई परतीत ।
अब तक नहिँ आई परतीत ॥ १ ॥
बहुतक भरमा जक्त भर्म में ।
नहिँ कीन्हा मन मीत ॥ २ ॥
गुरु सँग रहता सतसँग करता ।
चरनामृत पी खाता सीत ॥ ३ ॥
अब जो देखी हालत मन की ।
लगी न गुरु सँग प्रीत ॥ ४ ॥
धोखा देत रहा मन पाजी ।
गही न गुरु की रीत ॥ ५ ॥
गुरु ने परख करी कुछ मन की ।
छोड़ चला संगीत† ॥ ६ ॥

* आगे बढ़ी । † संगत ।

मन मूरख यह कहा न माने ।
सोता रहे कपट नहिँ जीत ॥ ७ ॥
क्योंकर मन को देउँ सचौटी ।
कुटँब जगत की लज्जा कीत ॥ ८ ॥
कुटँब जगत सँग सच्चा बरते ।
झूठा सतसँग लीत* ॥ ९ ॥
जब देखो तब रूखा सूखा ।
गुरु दर्शन में नहिँ हुलसीत ॥ १० ॥
सतसँगियन से हेल मेल नहिँ ।
जग जीवन सँग रखता प्रीत ॥ ११ ॥
दारा सुत परिवार सकल सँग ।
हँस हँस खेलत नीत ॥ १२ ॥
गुरु से सीधे मुँह नहिँ बोले ।
सतसँगियन से टेढ़ा चीत ॥ १३ ॥
गुरु सतसंगी दोउ हितकारी ।
तिन का हित जाने न पलीत† ॥ १४ ॥
जग बिच्छू तिरिया है नागिन ।
इन सँग रहत मिलीत ॥ १५ ॥

* लिया । † नापाक, अपवित्र ।

ज़हर हलाहल* नित ही खावत ।
डंक सहत फिर फिर पछतीत ॥ १६ ॥
गुरु के बचन अमी की धारा ।
तिन में न्हात न हो मगनीत ॥ १७ ॥
ऐसा नीच कुबुद्धी यह मन ।
गुरु को अपना जाने न मीत ॥ १८ ॥
गुरु सँग प्रीत लगावत ऐसी ।
जस धागा कच्चा चटकीत† ॥ १९ ॥
जो कोइ बचन कहैं वे कड़ुवा ।
और करैं अपमान अतीत ॥ २० ॥
तो मन फेरे घर को भागे ।
बैर करे कुछ करे अनीत ॥ २१ ॥
गुरु को दुख पहुँचावन चाहे ।
क्यों नहिं मेरा आदर कीत ॥ २२ ॥
जोरू लड़के गाली देवैं ।
मूछ पकड़ वह खैंच खिंचीत ॥ २३ ॥
उनकी ताड़ मार नित सहता ।
उन से तौ भी मन न फिरीत ॥ २४ ॥

* मार डालने वाला । † टूट जाता है ।

उनकी प्रीत लगी अस दृढ़ होय ।
लोहे की सँगलीत* ॥ २५ ॥
अब तो चेत ज़रा तू हे मन ।
त्याग पशू की रीत ॥ २६ ॥
खान पान और लोभ लहर में ।
क्यों बहता तज भीत ॥ २७ ॥
राधास्वामी कहत बुझाई ।
इस से बढ़ क्या गाऊँ गीत ॥ २८ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

डगर मेरी रोक लई ।
या जुलमी काल ॥ १ ॥
मैं पनिहारी अमी अधारी ।
सतगुरु करो सम्हाल ॥ २ ॥
गगरी सुरत डोर निज करनी ।
छूट गया जंजाल ॥ ३ ॥
उर्धमुखी कुइया चढ़ झाँकी ।
भरत अधर रस हाल ॥ ४ ॥
भेद गुप्त इक सतगुरु दीन्हा
पहुँची हंसन ताल ॥ ५ ॥

* जंजीर ।

राधास्वामी अगम अनामी ।
मुझ पर हुए दयाल ॥ ६ ॥
सुरत शब्द मारग दरसाया ।
काटा मन का जाल ॥ ७ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

गूजरी* चली भरन गगरी ।
श्याम† ने रोकी पनघटवा ॥ १ ॥
सखियन साथ उमँग से जाती ।
खोज लगाती धुन घटवा ॥ २ ॥
अब क्या करूँ ज़ोर नहिं चाले ।
कैसे खोलूँ घट पटवा‡ ॥ ३ ॥
मारग रोक भुलावत सब को ।
कला दिखावत ज्यों नटवा ॥ ४ ॥
घूम घाम कर फिर बगदावत§ ।
ठहरन देत न काहु तटवा ॥ ५ ॥
ऐसा छलिया कान्ह न माने ।
छोड़त नाहीं निज हठवा ।
गुरु बिन कौन बचावे या ते ।
खोल सुनावैं धुन छँटवा‖ ॥ ७ ॥

* सुरत । † काल । ‡ पाट, परदा । § लौटा देता है । ‖ छँटी हुई ।

राधास्वामी खेली लीला ।
दूर हटाया अब झटवा ॥ ८ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

फैल रही सुत बहु बिधि जग में ।
बिन पिया भटक गई या मग में ॥ १॥
इन्द्री रस अधिक सतावें ।
मन तरँग बहुत भरमावें ॥ २ ॥
राधास्वामी दया करावें ।
मन उलट फेर बदलावें ॥ ३ ॥
रस शब्द अधर चखवावें ।
तब तन मन शांति धरावें ॥ ४ ॥

*****

॥ बचन बत्तीसवाँ ॥

प्रार्थना सुरत की मन से और जवाब देना उसका

॥ शब्द पहिला ॥

मन रे मान बचन इक मेरा ॥ टेक ॥
मैं तेरी दासी जनम जनम की ।
तू हुआ स्वामी मेरा ॥ १ ॥

तीन लोक का नाथ कहावे ।
तीन देव तेरा चेरा ॥ २ ॥
ऋषि मुनि सब पर हुक्म चलावे ।
जती सती सब घेरा ॥ ३ ॥
तेरे बस सुर नर और जोगी ।
कोइ तेरा हुक्म न फेरा ॥ ४ ॥
जिस चाहे तिस जक्त फसाए ।
और चाहे तिस करे निबेरा ॥ ५ ॥
ऐसी महिमा सुनी तुम्हारी ।
ता ते तुम पै करूँ निहोरा ॥ ६ ॥
इस तन नगरी तुच्छ देश में ।
क्यों क़ैदी होय पड़े अँधेरा ॥ ७ ॥
सतगुरु मो से कहा बचन इक ।
मन को सँग ले चलो सबेरा ॥ ८ ॥
ता ते तुम पै करूँ बैनती ।
चढ़ो गगन क्यों करो अबेरा ॥ ९ ॥
इन्द्री द्वार बिषय अब त्यागो ।
करो अभी सुलझेरा ॥ १० ॥
तुम सा संगी और न कोई ।
मैं तुम्हरी और तुमही मेरा ॥ ११ ॥

मुझ दासी का कहना मानो ।
गगन मँडल चढ़ बाँधो डेरा ॥ १२ ॥
जैसे थे तैसे फिर होइहो ।
क्यों दुख सुख यहाँ सहो घनेरा ॥१३॥
सतगुरु पूरे भेद बताया ।
मन को सँग ले कर घर फेरा ॥ १४ ॥
मैं हूँ सुरत पड़ी बस तेरे ।
बिन तुम मदद शब्द नहिं हेरा ॥१५॥
जो यह कहन न मानो मेरी ।
तो चौरासी करैं बसेरा ॥ १६ ॥
अब तुम दया करो मेरे ऊपर ।
सुन बिनती खोजो धुन नेरा ॥ १७ ॥
हम तुम दोनों चढ़ें अधर में ।
जाकर बसें पहाड़ सुमेरा ॥ १८ ॥
तुम वहाँ रहना राज कमाना ।
हम पहुँचें जहँ राधास्वामी डेरा ॥१९॥

॥ शब्द दूसरा ॥

मन बोला सुत से फिर ऐसे ।
बिषय स्वाद मो से जात न छोड़ा ॥१॥

कैसी करूँ बचन कस मानूँ ।
मैं इन्द्री बस हुआ न थोड़ा ॥ २ ॥
बल पौरुष मैं सबही हारा ।
अब इन से मेरा चले न ज़ोरा ॥ ३ ॥
मैं चाहूँ छोड़ूँ भोगन को ।
देख भोग बस चले न मोरा ॥ ४ ॥
आगे पीछे बहु पछताऊँ ।
समय पड़े पर होवत चोरा ॥ ५ ॥
कैसे चढ़ूँ गगन को प्यारी ।
मैं चंचल ज्यों दौड़त घोड़ा ॥ ६ ॥
ता ते तो से कहूँ जतन मैं ।
चल सतगुरु पै करो निहोरा ॥ ७ ॥
सरन पड़ें अब मिल कर हम तुम ।
कर सतसंग होयँ कुछ पोढ़ा* ॥ ८ ॥
दया करैं सतगुरु जब अपनी ।
पल पल राखैं मोको मोड़ा ॥ ९ ॥
मैं अपने बल चढ़ूँ न कबही ।
जब लग मिलैं न गुरु बंदीछोड़ा ॥१०॥

* मज़बूत ।

सुन कर सुरत अधिक हरखानी ।
चल जल्दी वह बंधन तोड़ा ॥ ११ ॥
सतसँग सरन गही अब दोनौं ।
भर भर पीवत अमी कटोरा ॥ १२ ॥
दोनौं मिल कर चढ़े गगन को ।
शब्द शब्द रस हुए चटोरा ॥ १३ ॥
दया करी राधास्वामी उन पर ।
हीरा मोती लाल बटोरा ॥ १४ ॥
राधास्वामी ऐसी मौज दिखाई ।
मार लिया अब काल कठोरा ॥ १५ ॥

*****

॥ बचन तैंतीसवाँ ॥

फ़र्याद और पुकार करना सतगुरु से और माँगना मेहर और दया का वास्ते चढ़ने सुरत के और प्राप्ती दर्शन शब्द स्वरूप सतगुरु की

॥ शब्द पहिला ॥

अब मन आतुर दरस पुकारे ।
कल नहिं पकड़े धीर न धारे ॥ १ ॥
दम दम छिन छिन दर्द दिवानी ।
सोऊँ न जागूँ अन्न न पानी ॥ २ ॥

बेकल तड़पूँ पिया तुम कारन।
डस डस खावत चिंता नागिन ॥ ३ ॥
कौन उपाय करूँ अब सजनी।
भौजल से अब काहे को तरनी ॥ ४ ॥
याहि सोच मैं दिन दिन जलती।
कोइ न सम्हारे आली पल २ गलती ॥ ५ ॥
पिया तो बसैं मेरे लोक चतुर मैं।
मैं तो पड़ी आय मृत्यु नगर मैं ॥ ६ ॥
बिन मिलाप प्रीतम दुख भारी।
राह चलूँ नहिं जाल चला री ॥ ७ ॥
घाट बाट जहँ अति अँधियारी।
कोइ न सुने मेरी बहुत पुकारी ॥ ८ ॥
जतन न सूझे हिम्मत हारी।
अपने पिया की मैं ना हुई प्यारी ॥ ९ ॥
जो पिया चाहैं तो दम मैं बुलावैं।
शब्द डोर दे अभी चढ़ावैं ॥ १० ॥
भागहीन मैं धुन नहिं पकड़ी।
काम क्रोध माया रही जकड़ी ॥ ११ ॥
सुरतशब्द मारग जो पाया।
सो भी मुझ से गया न कमाया ॥ १२ ॥

मैं तो सब बिधि हीन अधीनी ।
मन नहिं निर्मल सुरत मलीनी ॥ १३ ॥
तुम समरथ स्वामी अति परवीना ।
मैं तड़पूँ जैसे जल बिन मीना ॥ १४ ॥
काज करो मेरा आज सम्हारी ।
तुम्हरी सरन स्वामी मैं बलिहारी ॥१५॥
हार पड़ी अब तुम्हरे द्वारे ।
तुम बिन अब मोहिं कौन निहारे ॥१६॥
तब स्वामी बोले अस बानी ।
मौज निहारो रहो चुप ठानी ॥ १७ ॥
धीरज धरो करो बिस्वासा ।
अब करूँ पूरन तुम्हरी आसा ॥ १८ ॥
सुनत बचन अब सीतल भई ।
चरन सरन स्वामी निश्चल गही ॥१९॥

॥ शब्द दूसरा ॥

अब मैं कौन कुमति उरझानी ।
देश पराया भई हूँ बिगानी ॥ १ ॥
अब की बार मोहिं लेव सुधारी ।
मैं चरनन पर निस दिन वारी ॥ २ ॥

रहुँ पछताय झुरूँ मन अपने ।
कैसे लगूँ मैं सँग पिया अपने ॥ ३ ॥
मैं धरती पिया बसैं अकासा ।
बिन पाये पिया रहूँ उदासा ॥ ४ ॥
हे सतगुरु सुनो मेरी टेरा ।
काल करम* अब मारो घेरा ॥ ५ ॥
दीन दुखी होय करत पुकारी ।
सुन स्वामी यह बिनती हमारी ॥ ६ ॥
तुम दयाल सब को देओ दाना ।
मैं ही अभागिन भइ दुख खाना ॥७॥
क्या कहुँ अब मैं अपनी पीर की ।
जस कोइ छेदत भाल तीर की ॥ ८ ॥
तब स्वामी ने दियो दिलासा ।
प्रेम पंख ले उड़ो अकासा ॥ ९ ॥
दया हुई अब मिली पिया से ।
हरी पीर दुख दूर जिया से ॥ १० ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

करत हूँ पुकार, आज सुनिये गुहार†
मैं दीन हूँ अधीन, तुम दाता दयार हो॥१॥

* पहिले तीन छापों में "करम" की जगह "चक्र" है । †पुकार ।

अब करिये सम्हार, मेरी नाव है मँझ-धार, मैं दुखिया अति भार, तुम खेवट अगार* हो ॥ २ ॥

दूत और दुष्ट मोहिं, घेर लिया वार, दुख देत हैं अपार, भय दिखावत जम-द्वार, तुम रक्षक हुशियार हो ॥ ३ ॥

लेना अब ख़बर मोर, मैं तो हूँ सरन तोर, काल किया बहुत ज़ोर, धूम धाम करत घोर, तुम सूरन प्रधान हो ॥ ४ ॥

मेरी बुद्धि है मलीन, मन सुरत है अ-लीन†, बल पौरुष सब छीन तुम सतगुरु प्रबीन‡ हो ॥५॥

मोहिं दीजे इक दान, मैं माँगत हूँ निदान§, सुर्त शब्द का निशान, तुम समरथ सुजान हो ॥ ६ ॥

बिरह नाहिं, प्रेम नाहिं, भक्ति भाव चाव नाहिं, सरधा परतील नाहिं, काम क्रोध लोभ माहिं, कैसे करोगे निबाह हो ॥७॥

* सब से भारी। † अपवित्र। ‡ जानकार। § निश्चय।

रोग सोग नित सतायँ, भजन सुमिरन बनत नाहिँ, भोग बास घटत नाहिँ, चिंता डर अधिक दाहिँ*, और कोइ सुनत नाहिँ, तुम ही मेरे बैद हो ॥ ८ ॥

संतन बिन कोइ नाहिँ, सतगुरु बिन ठीक नाहिँ, करम भरम नीक नाहिँ, शब्द बिना सीख नाहिँ, यही भीख दीजिये ॥ ९ ॥

सुरत को चढ़ाओ आज, शब्द का दिखाओ साज, सहसकँवल जाय भाज, देखे व्हाँ का समाज, मन को तब होय लाज, यही काज कीजिये ॥ १० ॥

बंक परे त्रिकुट घाट, खुले फिर सुन्न बाट, महासुन्न खोल पाट, भँवगुफा बाँध ठाट, सत्तशब्द पाय चाट, सतपुर पहुँचाइये ॥ ११ ॥

जहँ से परे अलख देख, लोक एक अगम पेख, राधास्वामी पद अलेख, पंडित न जाने भेष, क़ाज़ी न मुल्ला शेख़, संत बिन न जाइये ॥ १२ ॥

---

*जलाने वाले।

एक कहूँ सीख मान, मन की तू छोड़ ठान, गुरु की गति अगम जान, शब्द भेद ले पहिचान, तेरी बुद्धि है अजान, काम क्रोध त्यागिये ॥ १३ ॥

सतसँग की क़दर जान, नर शरीर दुर्लभ मान, नाम रस करो पान, गुरु स्वरूप धरो ध्यान, इन्द्री मन कसो आन, पर्व पर्व चालिये ॥ १४ ॥

मित्र तेरा कोई नाहिँ, कुल कुटंब लूट खाहिँ, जोबन धन साथ नाहिँ, जक्त भर्म फाँस माहिँ, काल कर्म खोस खाहिँ, खान चार जाइये ॥ १५ ॥

जन्म जन्म नर्क बास, जम दिखावे अधिक त्रास; तड़पे तू स्वाँस स्वाँस, पूजवे न कहीँ आस, पावे न सुख निवास, कष्ट बहु भोगाइये ॥ १६ ॥

जक्त भोग छोड़ चाह, सब से तू हो अचाह, संतन को खोज जाय, सतगुरु की सरन आय, बचन उनके मन समाय, बंद से छुड़ाइये ॥ १७ ॥

गुरु का तू बचन पाल, मन की मति तुर्त टाल, बुद्धि के साँचे मैं ढाल, मनमुख का संग जाल, गुरुमुख की यही चाल, काल हाल जारिये ॥ १८ ॥

सूरत नैना सम्हाल, तिल अकाश फाड़ डाल, निरखो जोती जमाल, द्वारे धस बंकनाल, अनहद पर धरो ख़्याल, गगन मैं चढ़ाइये ॥ १९ ॥

सुन्न शिखर चन्द्र देख, दसम द्वार सेत पेख, सरवर मैं मुक्ति लेख, किंगरी धुन सुन बिशेष, कर्म की मिटाओ, रेख हंस रूप धारिये ॥ २० ॥

महासुन्न अंध घोर, घाट अगम सुगम तोड़, सूरत जहँ कीन पोढ़, सतगुरु सँग चली दौड़, भँवरगुफा सुना शोर, सोहँग मैं समाइये ॥ २१ ॥

आगे की गली लीन्ह, धुन अनन्त शब्द चीन्ह, हंस मिले अति प्रबीन, प्रेम भाव बहुत कीन्ह, सत्तलोक द्वार लीन्ह, बीन धुन बजाइये ॥ २२ ॥

वहाँ से फिर चली पार, अलख लोक जा निहार, अलख पुरुष धुन सम्हार, देखा अचरज उजार, किया जाय धुन अधार, अलख दर्श पाइये ॥ २३ ॥

अगम लोक ख़बर पाय, ऊपर को चढ़ी धाय, अगम पुरुष दर्श पाय, तेज पुंज अजब जाय, अमी सिंध पहुँची आय, अगम रूप धारिये ॥ २४ ॥

यहाँ से भी चली सुर्त, किया जाय वहाँ निर्त, जस समुद्र नदी रलत, चरनन पर सीस धरत राधास्वामी संग मिलत, निज घर अपना पाइये ॥ २५ ॥

कहूँ कहा बहुत कही, यही बात है सही जन्म जन्म भूल रही, चरन धूर धार लई करम भरम सभी बही, राधास्वामी गाइये

लाओ अब प्रेम प्रीत, सतसँग में धरो चीत, पाओ फिर सत्त रीत, गाओ यह अगम गीत, बाज़ी यह लेव जीत, जग में कोइ नाहिँ मीत, मेरी तू कर प्रतीत दिया सब बुझाइये ॥ २७ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

गुरु गहो आज मेरी बहियाँ।
मैं लूँ तुम्हारी छइयाँ ॥ १ ॥
कलमल सब मेरे दहियाँ*
मैं छोड़ी मन परछइयाँ ॥ २ ॥
फिर चलूँ तुम्हारी रहियाँ।
तुम बिन मेरा कोइ न गुसइयाँ ॥ ३ ॥
उजड़ा घर तुमहिँ बसइयाँ।
दुख जन्म जन्म मैं सहियाँ ॥ ४ ॥
अब करूँ सोई तुम कहियाँ।
मेटो जग भूल भुलइयाँ ॥ ५ ॥
करमन से खूँट छुड़इयाँ।
शब्दा रस सार पिलइयाँ ॥ ६ ॥
मैं दुख सुख बहुतक सहियाँ।
कुल लाज तजी नहिँ जइयाँ ॥ ७ ॥
इन्द्री बस आन पड़इयाँ।
भोगन में बहुत फँसइयाँ ॥ ८ ॥
ऐसी कोइ कहत न कहियाँ।
जैसी तुम बात सुनइयाँ ॥ ९ ॥

* जला दिया।

गगना में सुरत चढ़इयाँ ।
मन माया दोऊ पचइयाँ ॥ १० ॥
सतपुरुष भेद बतलइयाँ ।
चौथा पद अगम दिखइयाँ ॥ ११ ॥
नइया मेरी पार लगइयाँ ॥
फिर अलख अगम दरसइयाँ ॥ १२ ॥
राधास्वामी चरन समइयाँ ।
छिन छिन मैं लेउँ बलइयाँ ॥ १३ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

मौत डर छिन छिन ब्यापे आई ।
काल भय पल पल मोहिं सताई ॥ १ ॥
सुरत मन बहुत चढ़ाऊँ भाई ।
गगन में टिके न छिन इक जाई ॥ २ ॥
कहो कस काटूँ बड़ी बलाई ।
गुरू मोहिं कहें नित्त समझाई ॥ ३ ॥
सुरत मन नेक नहीं ठहराई ।
करूँ क्या कैसे पाऊँ राही ॥ ४ ॥
गुरू से यह फ़र्याद सुनाई ।
शब्द में कभी न जाय समाई ॥ ५ ॥

* बारदूँ ।

भरोसा दम का है नहिँ भाई ।
मर्म मैं अब तक कुछ नहिँ पाई ॥ ६ ॥
करूँ क्या चले न कोइ उपाई ।
सरन गुरु गहूँ यही ठहराई ॥ ७ ॥
प्रीत का घाटा बहुत दिखाई ।
सरन भी मो से गही न जाई ॥ ८ ॥
दोऊ में एक न अब बन आई ।
मरूँ क्या अब मैं माहुर* खाई ॥ ९ ॥
गुरू तब बचन सुनाया सार ।
मरे मत बौरी† धीरज धार ॥ १० ॥
नाम रट मन से बारम्बार ।
रूप गुरु धारो हिये मँझार ॥ ११ ॥
करो तुम नित प्रति यह करतूत ।
टलैं तब तेरे घट के दूत ॥ १२ ॥
जुगत से बस कर मन का भूत ।
लगे तब धुन से तेरा सूत ॥ १३ ॥
तजे मत नित कर यह अभ्यास ।
गुरू का सँग कर रह कर पास ॥ १४ ॥

* विष, ज़हर । † पागल ।

मिटे तब जग की तेरी आस ।
लगे तब घट में करन बिलास ॥ १५ ॥
भोग सब त्यागो होहु निरास ।
सुरत तब पावे गगन निवास ॥ १६ ॥
शब्द रस पीवे स्वाँसो स्वाँस ।
महल में जावे पावे बास ॥ १७ ॥
मौज को ताको कर बिस्वास ।
नहीं कुछ जतन नहीं परियास* ॥१८॥
होहु अब राधास्वामी दास ।
करें वह पूरन इक दिन आस ॥ १९ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

नाम दान अब सतगुरु दीजे ।
काल सतावे खाँसा छीजे† ॥ १ ॥
दुख पावत मैं निस दिन भारी ।
गही आय अब ओट तुम्हारी ॥ २ ॥
तुम समान कोइ और न दाता ।
मैं बालक तुम पित और माता ॥ ३ ॥
मो को दुखी आप कस देखो ।
यह अचरज मोहिं होत परेखो‡ ॥ ४॥

* परिश्रम, मिहनत । † घटती है । ‡ विचार करने से ।

मैं हूँ पापी अधम बिकारी।
भूला चूका छिन छिन भारी ॥ ५ ॥
अवगुन अपने कहँ लग बरनूँ।
मेरी बुधि समझे नहिँ मरमूँ ॥ ६ ॥
तुम्हरी गत मत नेक न जानूँ।
अपनी मत अनुसार बखानूँ ॥ ७ ॥
तुम समरथ और अंतरजामी।
क्या क्या कहूँ मैं सतगुरु स्वामी ॥ ८ ॥
मौज करो दुख अंतर हरो।
दया दृष्टि अब मो पै धरो ॥ ९ ॥
माँगूँ नाम न माँगूँ मान।
जस जानो तस देव मोहिँ दान ॥ १० ॥
मैं अति दीन भिखारी भूखा।
प्रेम भाव नहिँ सब बिधि रूखा ॥ ११ ॥
कैसे दोगे नाम अमोला।
मैं अपने को बहु बिधि तोला ॥ १२ ॥
होय निरास सबर कर बैठा।
पर मन धीरज धरे न नेका ॥ १३ ॥
शायद कभी मेहर हो जावे।
तो कहुँ नाम नेक मिल जावे ॥ १४ ॥

बिना मेहर कोइ जतन न सूझे ।
बख़्शिश होय तभी कुछ बूझे ॥ १५ ॥
किनका नाम करे मेरा काज ।
हे सतगुरु मेरी तुम को लाज ॥ १६ ॥
अब तो मन कर चुका पुकार ।
राधास्वामी करो उधार ॥ १७ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

नाम रस पीवो गुरु की दात ।
शब्द सँग भीजो मन कर हाथ ॥ १ ॥
चरन गुरु पकड़ो तन मन साथ ।
मान मद मारो आवे शांत ॥ २ ॥
परख कर समझो गुरु की बात ।
निरख कर चलियो माया घात ॥ ३ ॥
जक्त सब डूबा भौजल जात ।
नाम बिन छुटे न जम का नात* ॥४॥
घाट घट उलटो दिन और रात ।
मोह की बाज़ी होगी मात ॥ ५ ॥
सुरत से करो शब्द बिख्यात† ।
गगन चढ़ देखो जा साक्षात ॥ ६ ॥

* बन्धन, रिश्ता । † परख ।

मिटे फिर मन की सब उतपात।
राधास्वामी परखी और परखात॥७॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

गुरु करो मेहर की दृष्टि
दास पल पल दुख पावत।
मैं आरत करूँ बनाय
रोग सबही घट जावत॥ १ ॥
निज औगुन देखूँ आय
मनहिं मन में पछतावत।
क्योंकर करूँ पुकार
काल अब बहु भरमावत ॥ २ ॥
काम क्रोध अति ज़ोर
जीव इन में झख मारत*।
राधास्वामी लेव बचाय
रहूँ मैं अति घबरावत ॥ ३ ॥
सुनिये दीनदयाल, तुम्हें मैं टेर सुनावत।
तुमकोसमरथजान,कहूँ यहदर्दबुझावत॥४॥
खोलो प्रेम दुआर, नहीं मोहिं कर्म बहावत।
शब्दमाहिंदृढ़ करो, रहूँ छिन २ गुनगावत॥५॥

* अवस रहता है।

रसिकरहूँधुनसाहिँ, औरकछुनाहिँसुहावत
दुखपायेमैंबहुत, नीचमनकहामनावत ॥ ६ ॥
कैसे करूँ पुकार, शब्द मैं नहीं लगावत ।
आज बनेतोबने, बहुरयहदावन पावत ॥७॥
मैं हूँ दीन अधीन, ईर्षा बहुत जरावत ।
मेटो कलह* अपार, काहेकोनित्तबढ़ावत॥८
तुमहींकरोसहाय, मोरकुछ नाहिँ बसावत† ।
डरत रहूँ दिनरात, कालसे जानछिपावत ९
मैं नित करूँपुकार, ख़्यालतुमक्योँनहिँलावत
मर्मनजानूँनेक, मौजतुमकहा करावत ॥ १० ॥
कहँलगकहूँजनाय, नेकमनबसनहिँ आवत ।
सदारहीतुमसाथ, तऊ तुम क्योँनबचावत११
अचरजभारीहोत, समझ मैं नेक न आवत ।
गुरु बिनरक्षकनाहिँकहैंसबयहीकहावत १२
कौन कर्म मैंकिये, नित्तयह भुगतूँ आफ़त ।
हारपड़ीअबद्वार, बहुरमैंतुमहिँमनावत ॥१३
जसतसदीजेदान, औरकोइचितनसमावत ।
राधास्वामीनाम, पहरआठौंअब गावत॥१४

* विघ्न । † बस चलता है ।

॥ शब्द नवाँ ॥

सतगुरु मेरी सुनो पुकार ।
मैं* टेरत बारंबार ॥ १ ॥
दुरमत मेरी दूर निकारो ।
मुझे कर लो चरन अधारो ॥ २ ॥
मोहिं भौजल पार उतारो ।
मेरी पड़ी नाव मँझ धारो ॥ ३ ॥
तुम बिन अब कोइ न सहारो ।
अपना कर मुझे तुम्हारो ॥ ४ ॥
मैं कपटी कुटिल तुम्हारो ।
तुम दाता अपर अपारो ॥ ५ ॥
मैं दीन दुखी अति भारो ।
जब चाहो तब निस्तारो ॥ ६ ॥
मैं आरत करूँ तुम्हारी ।
तन मन धन तुम पर वारी ॥ ७ ॥
अब मिला सहारा भारी ।
मैं नीच अजान अनाड़ी ॥ ८ ॥
घट भेद नाद समझाया ।
मन बैरी स्वाद न पाया ॥ ९ ॥

* प्रार्थना करती हुई ।

दुख सुख में बहु भरमाया ।
जग मान बड़ाई चाहा ॥ १० ॥
उलटूँ मैं इसको क्योंकर ।
बिन दया तुम्हारी सतगुरु ॥ ११ ॥
अब खैंचो राधास्वामी मन को ।
मैं बिनय सुनाऊँ तुम को ॥ १२ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

तुम धुर से चल कर आये ।
अब क्यों ऐसी ढील लगाये ॥ १ ॥
जल्दी से काज सम्हारो ।
तुम दाता देर न धारो ॥ २ ॥
मैं आतुर* तुम्हें पुकारूँ ।
चित में कोइ और न धारूँ ॥ ३ ॥
मेरा जीवन मूर अधारा ।
जस सीपी स्वाँत निहारा ॥ ४ ॥
अब मुक्ता† नाम जमाओ ।
मेरे जी की आस पुराओ ॥ ५ ॥
मन सूरत अधर चढ़ाओ ।
अब के मेरी खेप निबाहो ॥ ६ ॥

* दुखी, घबराई हुई । † मोती ।

भौसागर वार न पारा ।
डूबे सब उसकी धारा ॥ ७ ॥
है मिथ्या झूठ पसारा ।
धोखे को सच्च सा धारा ॥ ८ ॥
सतगुरु बिन धोख न जाई ।
बिन शब्द सुरत भरमाई ॥ ९ ॥
या ते तुम सरना ताकूँ ।
सोवत मैं क्योंकर जागूँ ॥ १० ॥
बिन मेहर जतन सब थाके ।
मैं कर कर बहु बिध त्यागे ॥ ११ ॥
बल पौरुष मोर न चाले ।
मैं पड़ी काल जंजाले ॥ १२ ॥
बिनती अब करूँ बनाई ।
तुम सतगुरु करो सहाई ॥ १३ ॥
मैं दीन अधीन तुम्हारी ।
तुम बिन अब कौन सम्हारी ॥ १४ ॥
कुछ करो दिलासा मेरी ।
भरमों की पड़ी अँधेरी ॥ १५ ॥
परकाश करो घट माना ।
मिटे भर्म तिमर अज्ञाना ॥ १६ ॥

तुम तज अब किस पै जाऊँ ।
मैं कह कह तुम्हें सुनाऊँ ॥ १७ ॥
जब चाहो जब ही देना ।
तुम बिन मोहि किस से लेना ॥ १८ ॥
मैं द्वारे पड़ी तुम्हारे ।
धीरज धर रहूँ सम्हारे ॥ १९ ॥
मन आतुर दुख न सहारे ।
उठ बारंबार पुकारे ॥ २० ॥
मैं सरन दयाल तुम्हारी ।
कर जल्दी लो निस्तारी ॥ २१ ॥
घर तुम्हरे कमी न कोई ।
कहिँ भाग ओछ* मेरा होई ॥ २२ ॥
यह भी सब तुम्हरे हाथा ।
तुम चाहो करो सनाथा ॥ २३ ॥
अब कहँ लग करूँ पुकारी ।
मैं हार हार अब हारी ॥ २४ ॥
तुम दाता दीन दयाला ।
राधास्वामी करो निहाला ॥ २५ ॥

* छोटा ।

मैं आरत कीन्ह अधारी ।
तुम राधास्वामी सब पर भारी ॥ २६ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

माँगूँ इक गुरु से दाना ।
घट शब्द देव पहिचाना ॥ १ ॥
मन साथ सदा भरमाना ।
कर किरपा कर्म छुड़ाना ॥ २ ॥
सुत चढ़े सुने धुन ताना ।
मन मारो कर्म नसाना ॥ ३ ॥
सब छूटे बान कुबाना* ।
सत शब्द मिले दृढ़ थाना ॥ ४ ॥
अब कर दो नाम दिवाना ।
मैं ताकूँ शब्द निशाना ॥ ५ ॥
कोइ करे न मेरी हाना ।
मोहिं तुम पर बल बल जाना ॥ ६ ॥
कल धारा मुझे न बहाना ।
मोहिं देना शब्द ठिकाना ॥ ७ ॥
मन हो गया बहुत निमाना† ।
अब राधास्वामी चरन समाना ॥ ८ ॥

* बुरी आदत । † दीन, अधीन ।

॥ शब्द बारहवाँ ॥

मैं लिखूँ गुरू को पाती ।
मन कीन्ही बहु उतपाती ॥ १ ॥
मेरी धड़के छिन छिन छाती ।
नहिं धीरज बहु दुख पाती ॥ २ ॥
बिरह अगिन मोहिं नित्त जलाती ।
मैं पल पल गुरुगुन गाती ॥ ३ ॥
मेरे दर्द उठा बहु भाँती ।
मैं किस को बरन सुनाती ॥ ४ ॥
अब छोड़ी कुल और ज़ाती ।
गुरु चरन सुरत मेरी राती ॥ ५ ॥
मैं रहूँ लगन बिच माती ।
अब सुरत गगन को जाती ॥ ६ ॥
वहाँ शब्द अमी रस खाती ।
गुरु प्रेम हिये में लाती ॥ ७ ॥
दर्शन बिन होय न शान्ती ।
उलटी फिर तन में आती ॥ ८ ॥
कोइ सुने न मेरी बाती ।
मैं रहूँ सदा घबराती ॥ ९ ॥

मैं रोती दिन और राती ॥
मन मारे बहु बिध लाती ॥ १० ॥
गुरु करो दया की दाती ।
तो टले काल की घाती ॥ ११ ॥
मन आवे मेरे हाथी ।
तो मारे सिंघ* को हाथी† ॥ १२ ॥
मेरे लगी प्रेम की काती‡ ।
हिरदे में धीर न लाती ॥ १३ ॥
अब हर दम उमँग जगाती ।
मैं देखूँ गुरू करांती ॥ १४ ॥
मारूँ अब माया ताती§ ।
गुरु सूरत चित में ध्याती ॥ १५ ॥
अब छूटी सकल भराँती‖ ।
मैं पाई नाम दराँती** ॥ १६ ॥
अब काटूँ कर्म सनाती†† ।
गुरु बिन क्यों और मनाती ॥ १७ ॥
गुरु को सब भेद जनाती ।
मैं पाये दुख बहु भाँती ॥ १८ ॥

* काल । † मन । ‡ कटारी । § अग्नि रूप । ‖ भरम ॥ ** हँसिया काटने वाला । †† पुराना ।

कर मानसरोवर न्हाती ।
मैं उलटी धार बहाती ॥ १९ ॥
जुग बँधे जो गुरु के साथी ।
तो मर्म सभी दरसाती ॥ २० ॥
गुरु चरन सदा परसाती ।
मैं सुरत पतंग उड़ाती ॥ २१ ॥
मन चादर नाम रँगाती ।
घट भीतर नाद बजाती ॥ २२ ॥
जन्म मरन दुख दूर कराती ।
ममता मैं सकल खपाती ॥ २३ ॥
राधास्वामी सरन पराती* ।
राधास्वामी दास कहाती ॥ २४ ॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

गुरु मोहि दीजे अपना धाम ॥ टेक ॥
मैं तो निकाम भर्म बस रहता ।
तुम दयाल लो मो को थाम ॥ १ ॥
ना जानूँ क्या पाप कमाये ।
गहे न सूरत नाम ॥ २ ॥

* प्राप्त हुई या पड़ी ॥

कैसी करूँ ज़ोर नहिँ चाले ।
मन नहिँ पावे दृढ़ बिसराम ॥ ३ ॥
हे दयाल अब दया बिचारो ।
मैं दुख में रहूँ आठौं जाम ॥ ४ ॥
ना सुत चढ़े न मन ठहरावे ।
शब्द महातम नहिँ पतियाम* ॥ ५ ॥
संत मता ऊँचा सुन पकड़ा ।
क्यों नहिँ संत करैं मेरी साम† ॥ ६ ॥
संत मते को लज्जा आवे ।
जो मेरा नहिँ पूरन काम ॥ ७ ॥
अपनी मति ले करूँ पुकारा ।
मौज तुम्हारी मैं नहिँ जाम‡ ॥ ८ ॥
बार बार मैं बिनय पुकारूँ ।
जस जानो तस देव निज नाम ॥ ९ ॥
राधास्वामी कहैं निज नामी ।
दरदी को चहिये आराम ॥ १० ॥

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

सुरत मेरी धोय डालो ।
नहिँ मरिहौं रोय ॥ १ ॥

---

* प्रतीत करती । † सहायता । ‡ जानती ।

कर्म मेरे खोय डालो ।
मैं सरना तोय* ॥ २ ॥
भर्म मेरे सब टारो ।
मैं दासी तोय* ॥ ३ ॥
मर्म अब दे डारो ।
तुम सतगुरु मोय† ॥ ४ ॥
काल को धर मारो ।
तुम सूरा होय ॥ ५ ॥
मन को धर धारो ।
नहिं हरकत‡ होय ॥ ६ ॥
सइ़म§ यह कर डालो ।
जो बख़्शिश होय ॥ ७ ॥
मोह को ले डारो ।
तुम समरथ सोय ॥ ८ ॥
जाल से अब काढ़ो ।
लगी फाँसी मोय ॥ ९ ॥
राधास्वामी गुरु न्यारो ।
अस लखा न कोय ॥ १० ॥

* तुम्हारी । † मेरे । ‡ नुकसान । § श्रम, कोशिश ।

शब्द पंद्रहवाँ ॥

गुरू मोहिं अपना रूप दिखाओ ॥टेक॥
यह तो रूप धरा तुम सरगुन ।
जीव उबार कराओ ॥ १ ॥
रूप तुम्हारा अगम अपारा ।
सोई अब दरसाओ ॥ २ ॥
देखूँ रूप मगन होय बैठूँ ।
अभय दान दिलवाओ ॥ ३ ॥
यह भी रूप पियारा मो को ।
इसही से उसको समझाओ ॥ ४ ॥
बिन इस रूप काज नहिं होई ।
क्योंकर वाहि लखाओ ॥ ५ ॥
ता ते महिमा भारी इसकी ।
पर वह भी लखवाओ ॥ ६ ॥
वह तो रूप सदा तुम धारो ।
या ते जीव जगाओ ॥ ७ ॥
यह भी भेद सुना मैं तुम से ।
सुरत शब्द मारग नित गाओ ॥ ८ ॥
शब्द रूप जो रूप तुम्हारा ।
वा में भी अब सुरत पठाओ ॥ ९ ॥

डरता रहूँ मौत और दुख से ।
निर्भय कर अब मोहिं छुड़ाओ ॥ १० ॥
दीनदयाल जीव हितकारी ।
राधास्वामी काज बनाओ ॥ ११ ॥

॥ शब्द सोलहवाँ ॥

देख पियारे मैं समझाऊँ ।
रूप हमारा न्यारा ॥ १ ॥
वह तो रूप लखे नहिं कोई ।
जब लग देउँ न सहारा ॥ २ ॥
करनी करो मार मन डालो ।
इन्द्री रोक दुआरा ॥ ३ ॥
सुरत चढ़ाय गगन पर धाओ ।
सुन्न शिखर के पारा ॥ ४ ॥
सत्त पुरुष का रूप दिखाऊँ ।
अलख अगम दर सारा ॥ ५ ॥
ता के आगे राधास्वामी ।
वह निज रूप हमारा ॥ ६ ॥
धीरज धरो करो सतसंगत ।
मेहर दया से लेउँ सुधारा ॥ ७ ॥

वह तो रूप दिखाकर छोड़ूँ ।
तुम जल्दी क्यों करो पुकारा ॥ ८ ॥
तुम्हरी चिंता मैं मन धारी ।
तुम अचिंत रह धरो पियारा ॥ ९ ॥
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती ।
और परतीत सँवारा ॥ १० ॥
यह करनी मैं आप कराऊँ ।
और पहुँचाऊँ धुर दरबारा ॥ ११ ॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
जब जब जैसी मौज बिचारा ॥ १२ ॥

॥ शब्द सत्रहवाँ ॥

सुरत की आज लगा दे तारी ।
गगन चढ़ पीऊँ अमृत धारी ॥ १ ॥
शब्द धुन उठती जहाँ करारी* ।
नाम सुन तन मन लिया पखारी ॥२॥
गुरू का रूप निहार निहारी ।
मैं किंकर अधम अनाड़ी† ॥ ३ ॥
तुम सतगुरु पतित उधारी ।
तुम्हरी गति तुमहिँ बिचारी ॥ ४ ॥

* तेज । † मूढ ।

मैं छिन २ पल २ बिषय अहारी ।
तुम किरपा अमृत धार बहारी ॥५॥
अब लीजे मोहिं निस्तारी ।
घट दीजे नाम सम्हारी ॥ ६ ॥
मैं भूला भूल फसा री ।
तुम काढ़ो मोहिं निकारी ॥ ७ ॥
मैं दास दासन पनिहारी ।
मैं तुम चरन जाउँ बलिहारी ॥ ८ ॥
अब मारग देव उघाड़ी* ।
मेरा मन करो शांत सुखारी ॥ ९ ॥
मेरा कोइ नहीं अपना री ।
मेरे तुम हो मैं भी तुम्हारी ॥ १० ॥
क्या क्या कहूँ बरन सुना री ।
मन जैसे नाच नचा री ॥ ११ ॥
इन्द्री मोहिं नित्त सता री ।
भोगन की चाह बढ़ा री ॥ १२ ॥
रोगन मैं सदा गिरसा† री ॥ ।
भव कूप पड़ा गहरा री ॥ १३ ॥

* खोल । † फंसा ।

कस निकसूँ कौन उबारी ।
सुत हुई न शब्द पियारी ॥ १४ ॥
बिन शब्द बहुत भरमा री ॥
जल पत्थर जक्त पुजा री ॥ १५ ॥
इन भर्मन रहा भरमा री ।
तुम मिल अब कौन सुधारी ॥ १६ ॥
राधास्वामी चरन दुलारी ।
अब नाम देव कर न्यारी ॥ १७ ॥

॥ शब्द अठारहवाँ ॥

घट का पट खोल दिखाओ ॥ टेक ॥
यह मन जूझ जूझ कर हारा ।
लगे न एक उपाओ ॥ १ ॥
तुम समरत्थ कहा नहिँ तुम्हरे ।
क्यों इती देर लगाओ ॥ २ ॥
मैं दुख सुख में खाऊँ झकोले* ।
क्यों न पड़ा मेरा अब तक दाओ ॥ ३ ॥
अब ही दया करो मेरे दाता ।
मन और सूरत गगन चढ़ाओ ॥ ४ ॥

* झटका ।

मन तो दुष्ट बिरह नहिं लावे ।
प्रेम प्रीत का दान दिलाओ ॥ ५ ॥
यह तो सुख झूठे ही चाहे ।
सच्चे की परतीत न लाओ ॥ ६ ॥
भोग बिलास जगत के माँगे ।
सुरत शब्द का रस नहिं पाओ ॥ ७ ॥
क्योंकर कहूँ किस बिध समझाऊँ ।
गुरु का बचन न हृदे समाओ ॥ ८ ॥
इस मन की कुछ गढ़त अनोखी ।
शब्द माहिं कुछ प्रेम न भावो ॥ ९ ॥
कैसे बचे पचे चौरासी ।
यह नहिं चढ़ता गुरु की नावो ॥ १० ॥
संसारी के धक्के खावे ।
फिर जमपुर में पिटता जाओ ॥ ११ ॥
ऐसे दुक्ख सहेगा बहुतक ।
अब नहिं माने गया भुलाओ ॥ १२ ॥
सब घट में गुरु तुमहीं प्रेरक ।
मुझ दुखिया को क्यों न बुलाओ ॥ १३ ॥
तुम बिन और न कोई मेरा ।
चार लोक में तुमहिं दिखाओ ॥ १४ ॥

अब तो दया करो राधास्वामी ।
जैसे बने तैसे घाट चढ़ाओ ॥ १५ ॥

॥ शब्द छत्तीसवाँ ॥

सतगुरु से करूँ पुकारी ।
संतन मत कीजे जारी ॥ १ ॥
जीवन का होय उधारी ।
मैं देखूँ यही बहारी ॥ २ ॥
मैं मौज करूँ फिर भारी ।
सब आरत करें तुम्हारी ॥ ३ ॥
मैं हरखूँ खेल निहारी ।
मानो यह अर्ज़ हमारी ॥ ४ ॥
मैं राखूँ पक्ष तुम्हारी ।
अब कीजे दया बिचारी ॥ ५ ॥
मैं बालक सरन अधारी ।
मैं करूँ बेनती भारी ॥ ६ ॥
जो मौज न हो यह न्यारी ।
तो फेरो सुरत हमारी ॥ ७ ॥
घट भीतर होय क़रारी* ।
शब्दारस करे अहारी ॥ ८ ॥

* स्थिर ।

दोउ में से एक सुधारी ।
जो दोनों करो दया री ॥ ९ ॥
मैं राज़ी रज़ा तुम्हारी ।
मैं राधास्वामी गोद पड़ा री ॥ १० ॥

॥ शब्द बीसवाँ ॥

लगाओ मेरी नइया सतगुरु पार ।
मैं बही जात जग धार ॥ १ ॥
तुम बिन नाहीं को कढ़ियार* ।
लगा दो डूबी खेप किनार ॥ २ ॥
सहेली मत तू मन से हार ।
दिखाऊँ जग का वार और पार ॥ ३ ॥
चढ़ाऊँ सूरत उलटी धार ।
शब्द सँग खेय उतारूँ पार ॥ ४ ॥
गुरू को धर ले हिये सम्हार ।
नाम धुन घट में सुन झनकार ॥ ५ ॥
तरंगें उठतीं बारम्बार ।
भँवर जहँ पड़ते बहुत अपार ॥ ६ ॥
मेहर से पहुँची दसवें द्वार ।
राधास्वामी दीन्हा पार उतार ॥ ७ ॥

* निकालने वाला ।

॥ शब्द इक्कीसवाँ ॥

दर्शन की प्यास घनेरी* ।
चित तपन समाई ॥ १ ॥
जग भोग रोग सम दीखैं ।
सतसँग मैं सुरत लगाई ॥ २ ॥
गति अगम तुम्हारी समझी ।
पर दरस बिना तिरपत नहिँ आई॥३॥
गुरुमुखता बन नहिँ पड़ती ।
फिर कैसे प्रत्यक्ष पाई ॥ ४ ॥
तुम गुप्त रहो जीवन से ।
सँग सब के दूर न भाई ॥ ५ ॥
बिन किरपा सतगुरु पूरे ।
निज रूप न तुम दिखलाई॥ ६ ॥
अब तरसूँ तड़पूँ बहु बिधि।
तुम निकट न होत रसाई॥ ७॥
हो समरथ दाता सब के ।
मुझ को भी खैंच बुलाई ॥ ८॥
मैं कैसे देखूँ तुम को ।
कोइ जतन न अब बन आई ॥ ९ ॥

* भारी ।

घट का पट खोलो प्यारे ।
यह बात न कुछ कठिनाई ॥ १० ॥
तुम चाहो तो छिन में कर दो ।
नहिं जन्म जन्म भटकाई ॥ ११ ॥
अब दरस दिखादो जल्दी ।
मैं रहूँ नित्त मुरझाई ॥ १२ ॥
अब दया बिचारो ऐसी ।
मैं रहूँ चरन लौ लाई ॥ १३ ॥
तुम बिन कोइ और न जानूँ ।
तुमहीं से रहूँ लिपटाई ॥ १४ ॥
यह आरत अद्भुत गाई ।
सूरत मेरी शब्द समाई ॥ १५ ॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
मैं दासन दास कहाई ॥ १६ ॥

॥ शब्द बाईसवाँ ॥

सोचत रही री बेचैन, रैन दिन बहु पछतानी
मेरी लगी न प्रीत सँग शब्द,
कहन मेरी सभी कहानी ॥ १ ॥
झुरत रहूँ मन माहिं, कौन से करूँ बखानी ।
सुननहार नहिं सुने, कहो मेरी कहा बसानी२

मौज बिना क्या होय, मौज की सार न जानी।
सबर न आवे चित्त, दर्द में रैन बिहानी* ॥३॥
दिवस करूँ फ़रियाद, गुरू मेरे अंतरजामी।
अपनी चूक बिचार, रहूँ मैं अति घबरानी ॥
दीनानाथ दयाल, सुनो जल्दी मेरी बानी।
चरन पकड़ हठ करूँ, मेहर कर देवो दानी॥५
मैं तो अजान अभाग
कुटिल मोहिँ सब जग जानी।
जो अपना कर लिया
लाज अब तुम्हें समानी ॥ ६ ॥
राधास्वामी कह रहे, यह अचरज बानी।
सौदा पूरा मिले, होय नहिँ तेरी हानी ॥७॥

॥ शब्द तेईसवाँ ॥

धीरज धरो बचन गुरु गहो।
अमृत पियो गगन चढ़ रहो ॥ १ ॥
दूर न जानो सतगुरु पास।
निस दिन करो चरन बिस्वास॥ २ ॥

* बीती।

सागर मेहर दया की मौज ।
राधास्वामी दीन्ही अचरज चोज* ॥३॥
खेल खिलावें बाल समान ।
देखे मात हरष मन आन ॥ ४ ॥
रक्षक शब्द जान और प्रान ।
सो पहलू छोड़े न निदान ॥ ५ ॥
मन की गढ़त करावें दम दम ।
वह हैं मित्र वही हैं हमदम ॥ ६ ॥
भूल चूक बख़्शें† वह छिन छिन ।
संग रहें इसके वह निस दिन ॥ ७ ॥
यह मन कच्चा बूझ न जाने ।
उनकी गति कैसे पहिचाने ॥ ८ ॥
जक्त जाल में रहा भुलाई ।
सुरत शब्द में नहीं जमाई ॥ ९ ॥
या से सोग बिजोग सतावे ।
मन का घाट हाथ नहिं आवे ॥१०॥
गुरु कुंजी जो बिसरे नाहीं ।
घट ताला छिन में खुल जाई ॥ ११ ॥

---

* ख़ूबसूरती, विलास । † क्षमा करें ।

खुले घाट तब सुन में देखे ।
धुन को ख़बर रूप निज पेखे ॥ १२ ॥
चढ़े अधर जब नाम समावे ।
रस पावे सूरत घर आवे ॥ १३ ॥
रतन खान घट में जब खूले ।
दुक्ख दर्द और दुर्मत टले ॥ १४ ॥
मौज निहारो सबर सम्हारो ।
भर्म अँधेरा कौतक* टारो ॥ १५ ॥
अमल अचल पकड़ो गुरु चरना ।
सुक्ख पिरापत दुख सब हरना ॥ १६ ॥
यह संसार अगिन भंडार ।
सीतल जल सतगुरु आधार ॥ १७ ॥
बड़े भाग जिन सतगुरु पाये ।
चौरासी से तुरत हटाये ॥ १८ ॥
दुक्ख सुक्ख जो व्यापत होई ।
पिछले कर्म भोग हैं सोई ॥ १९ ॥
कोइ दिन सोग रोग हट जावें ।
देर नहीं जल्दी भुगतावें ॥ २० ॥

* खेल ।

॥ दोहा ॥

राधास्वामी रक्षक जीवके, जीव न जाने भेद।
गुरु चरित्र जाने नहीं, रहे कर्म के खेद* ॥ २१ ॥
खेद मिटे गुरु दरस से, और न कोई उपाय।
सो दर्शन जल्दी मिलैं, बहुत कहासँ गाय॥२२

॥ दोकड़िया छन्द ॥

धीरज धरना, मत घबराना, चित ठहरना।
रूप समाना, नित गुन गाना, नहीं बहाना।
यही निशाना, ज्यौं पपिहा स्वाँती आस॥२३
घट में रहना, कहीं न बहना, मन मैं सहना,
रस ही लेना, धीरज गहना, मर्म न कहना,
ज्यौं जल मीना, राधास्वामी पास॥ २४ ॥
आगे दया मेहर सतगुरु की।
वहीं दरसावैं वह अब धुर की ॥ २५ ॥
राधास्वामी बचन सुनाया।
जीवन की हठ से लिखवाया ॥ २६ ॥

*****

* दुख।

॥ दोहा ॥

सुरत बसाओ शब्द में, शब्द गगन के माहिँ ।
बिरह बसावो हिये में, हिया तिरकुटी माहिँ १
सुरत शब्द इक अंग कर, देखो बिमल बहार ।
मध्य सुखमना तिल बसे, तिल में जोत अकार २
शब्द स्वरूपी संग हैँ, कभी न होते दूर ।
धीरज रखियो चित्त में, दीखेगा सत नूर ॥ ३ ॥
सत्तनाम सतपुरुष का, सत्तलोक में पूर ।
सुरत चढ़ाओ शब्द में, दर्शन हाल हजूर ॥ ४ ॥
प्रेम प्रीत राखे रहो, कुमति कुटिल से दूर ।
मन सूरत से जूझ कर, रहो शब्द में सूर ॥ ५ ॥

॥ बचन चौतीसवाँ ॥

प्राप्ती मेहर और दया सतगुरु की और पहुँचना सुरत का चढ़कर स्थानों पर और बर्णन महिमा शब्द और सतगुरु की और भेद और लीला स्थानों की ।

॥ शब्द पहिला ॥

जीव चितावन आये राधास्वामी ।
बार बार तिन करूँ प्रनामी ॥ १ ॥
आरत उनकी करूँ सजाई ।
चित्त शुद्ध कर थाल बनाई ॥ २ ॥

अब जीवोँ को चहिये ऐसा ।
चलकर अरपैँ तन मन सीसा ॥ ३ ॥
जोत जगावैँ प्रथम बिरह की ।
बाती जोड़ैँ बिर्त* लगन की ॥ ४ ॥
जब आरत अस लई सँजोई† ।
सतगुरु दया दृष्टि कर जोई‡ ॥ ५ ॥
दीन्हा दीन जान उपदेशा ।
सुरत शब्द मेँ करो प्रवेशा ॥ ६ ॥
खोलो जाकर गगन किवाड़ी ।
श्यामकंज तब लागी ताड़ी ॥ ७ ॥
सेत कँवल फिर मन ठहराना ।
प्रगटी जोत सुन्न मेँ जाना ॥ ८ ॥
सेत श्याम दल दोनोँ छोड़े ।
तीसर दल मेँ मन को जोड़े§ ॥ ९ ॥
बंकनाल का द्वारा सोई ।
तन की सुद्धि वहाँ गइ खोई ॥ १० ॥
मन और सुरत चेत कर जागी ।
त्रिकुटी शब्द गुरू मेँ लागी ॥ ११ ॥

* धार । † तैयार की । ‡ देखा । § पहिले एडिशन मेँ "मोड़े" का पाठ है ।

अब पाया बिसराम ठिकाना ।
आरत पूरन करी बखाना ॥ १२ ॥
इतना धाम सुरत ने पाया ।
राधास्वामी चरन समाया ॥ १३ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

आज काज मेरे कीन्हे पूरे ।
बाजे घट में अनहद तूरे ॥ १ ॥
भाग उदय आज हुए हमारे ।
राधास्वामी चरन सीस पर धारे ॥२॥
बिमल आरती अब मैं गाऊँ ।
परस चरन और बल बल जाऊँ ॥३॥
कोट जन्म से धोखा खाया ।
बिन स्वामी जोनी भरमाया ॥ ४ ॥
दाव पड़ा मेरा अब के ऐसा ।
राधास्वामी चरन आय मैं परसा ॥ ५॥
अब पाया मैंने अजर बिलासा ।
क्या कहुँ महिमा अधिक हुलास ॥ ६ ॥
रोम रोम रग रग मेरी बोली ।
राधास्वामीराधास्वामी घुंडी* खोली॥७॥

* गाँठ ।

रंग रँगी मेरे तन की चोली* ।
सुन सुन धुन अब भइ हूँ अमोली ॥८॥
घूम चली अब गगन अँझारा ।
सुन्न शिखर का झाँका द्वारा ॥ ९ ॥
मानसरोवर किये अश्नाना ।
सतनाम सूँ† लागा ध्याना ॥ १० ॥
महासुन्न घाटी चढ़ भागी ।
सत्तपुरुष के चरनन लागी ॥ ११ ॥
हंसन साथ करूँ अब आरत ।
प्रेम मगन होय दुक्ख वहावत ॥१२॥
अमी अहार किया मैं भारी ।
छिन छिन दर्शन पुरुष निहारी ॥१३॥
सोभा बरनी न जाय अपारी ।
आरत पूरन हो गइ सारी ॥ १४ ॥
धन धन धन धन क्या कहुँ महिमा ।
राधास्वामी २ पल २ कहना ॥ १५ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

भइ है सुरत मेरी आज सुहागिन ।
लगी है सुरत मेरी छिन छिन जागन ॥१॥

---

* पहिनने का कपड़ा । † से ।

स्वामी स्वामी लगी है पुकारन ।
राधा राधा नाम सम्हारन ॥ २ ॥
गगन मँडल अब लागा गर्जन ।
भाग गये मेरे घट से दुर्जन ॥ ३ ॥
तन मन मैं ने कीन्हा अर्पन ।
लगी सुरत अब सतगुरु चरनन ॥ ४ ॥
नाम थाल और बाती सुमिरन ।
जुक्ति जोत बाती मैं निज तन ॥ ५ ॥
आरत फेर चढ़ाया निज मन ।
गगन जाय सुनता अनहद धुन ॥ ६ ॥
संत कृपा पाया पद पूरन ।
करम भरम डाले कर चूरन ॥ ७ ॥
साफ़ किया मैं मन का दर्पन ।
ममता माया कीन्ही मर्दन ॥ ८ ॥
नूर निरंजन जगा सम्हारन ।
सहसकँवल चढ़ कीन्हा दर्शन ॥ ९ ॥
सुई द्वार नाका लगी झाँकन ।
पाप अनंत हुए जहँ खंडन ॥ १० ॥
बंकनाल धस त्रिकुटी धावन ।
ओंकार धुन करी अब सरवन ॥ ११ ॥

सुन्न मँडल धुन पाई रारँग ।
किँगरी सुनी और बाजी सारँग ॥ १२ ॥
चंद्र चौक जहँ देखा चाँदन ।
हंसन रूप धरे मन भावन ॥ १३ ॥
महासुन्न सागर चली न्हावन ।
सूरत मिली जाय महा चेतन ॥ १४ ॥
भँवरगुफा द्वारा अति पावन* ।
धुन मुरली जहँ बजत सुहावन ॥ १५ ॥
हंसन सोभा मन बिगसावन† ।
सुन सुन धुन अति प्रेम बढ़ावन ॥ १६ ॥
चौक अगाध साध कर चालन ।
गइ सतपुर लगी पुरुष मनावन ॥ १७ ॥
चौथा लोक त्रिलोकी कारन ।
संत बसैं जिव करैं उबारन ॥ १८ ॥
अलख लोक इक पुरुष बिराजन ।
बैठे अचरज धार सिँघासन ॥ १९ ॥
तिस आगे फिर अगम निहारन ।
अगमपुरुष ढिँग सोभा पावन ॥ २० ॥

* पवित्र । † प्रफुल्लित करने वाली ।

लगी सुरत निज भेद सुनावन।
मिल गये राधास्वामी पतित उधारन॥२१॥
अब अनाम का क्या करूँ छानन।
सैन कही यह अकह अपारन॥ २२ ॥
भई आरती अब संपूरन।
छोड़ दई मैं सभी गुनावन* ॥ २३ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

संत दास की आरती, सुनो राधास्वामी।
मैं अति दीन अधीन हूँ, सेवक बिन दामी॥१॥
जन्म जन्म सरनागती, तुम पुरुष अनामी।
दया करो अपना करो, मुझे अंतर जामी॥२॥
मैं अनसमझ अबूझ हूँ, तुम चरन नमामी।
तुम दाता पद अधर के, मैं दास निकामी† ३
तुम्हरी गत मत को कहे, तुम अगम ठिकानी।
मुझ पर अस किरपा करी कुछ मिली निशानी ४
अनहद धुन बाजे बजें, मन होय अकामी।
सरन गही सतगुरू की, तज लाज लोकानी‡॥५॥
त्रिकुटी घाट सुरत चढ़ी, मिला पद निरबानी।
अब आगे का भेद यह, सुन अचरज बानी॥६॥

* चिन्ता। † नीच। ‡ लोक याने सन्सार की।

मानसरोवर घाट, करैं हंसा बिसरामी ।
धुनकिंगरीऔर सारँगीतामेंसुरतसमानी ७
यह पद है निज ब्रह्मका, लक्ष बाच प्रमानी ।
पारब्रह्म तिस ऊपरे, महासुन्न पुरानी ॥८॥
भँवरगुफा सतलोक को सब संत बखानी ।
दो पद आगे और हैं, सो गुप्त कहानी ॥९॥
ता पर अगल अगाध है, तिस रूप न नामी ।
संत बिना नहिं पाइये, यह भेद सुदामी* १०
अब आरत फेरन लगा, धर धीरज थाला ।
दृष्टि जोड़ सन्मुख खड़ा, काटा जंजाला ॥११॥
बिरहजोतजगमगहुई, औरकाल निकाला ।
दया करी राधास्वामी, अगम कर दिया निहाला ॥ १२ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

सतगुरु संत मिले राधास्वामी ।
आरत करने की बिधि ठानी ॥ १ ॥
अधर थाल और अक्षर जोती ।
प्रेम सुरत से दृष्टि परोती ॥ २ ॥

*अविनाशी ।

निरत नाम धुन माला डारूँ ।
सीतल तिलक केसरी धारूँ ॥ ३ ॥
बस्तर भाव प्रीत पहिराऊँ ।
अमी सूर सध* भोग धराऊँ ॥ ४ ॥
तन मन निज मन भेट चढ़ाऊँ ।
नौ निध नौछावर करवाऊँ ॥ ५ ॥
नओ द्वार पर नीत बिठाऊँ ।
चित्त जोड़ सुख आरत गाऊँ ॥ ६ ॥
मैं अति हीन अधम तुम दासा ।
आरत देखन उपजी आसा ॥ ७ ॥
दूर देश से आयो अबही ।
आरत करूँ रिझाऊँ गुरु ही ॥ ८ ॥
मो पर कृपा दृष्टि अब कीजे ।
दीनबंधु मोहिँ सरना लीजे ॥ ९ ॥
भेद तुम्हारा अति कर सारा ।
सुरत शब्द मारग मैं धारा ॥ १० ॥
पकड़ूँ शब्द चढ़ाऊँ सूरत ।
नम निरखूँ और देखूँ मूरत ॥ ११ ॥

* सहित ।

सहसकँवल धस घंट बजाऊँ ।
बंकनाल चढ़ सब्द सुनाऊँ ॥ १२ ॥
त्रिकुटी घाट किया जाय फेरा ।
ओंकार धुन से मन घेरा ॥ १३ ॥
मन हुआ लीन सुरत अब चीन्ही ।
कान पड़ी धुन झीनी झीनी ॥ १४ ॥
मानसरोवर पैठ अन्हाई ।
निर्मल होय निर्मल पद पाई ॥ १५ ॥
सुन्न सिखर जाय फेरा दीन्हा ।
कोट महासुन चढ़ कर लीन्हा ॥ १६ ॥
भँवरगुफा सोहं धुन सुनी ।
सत्तनाम धुन छिन छिन गुनी ॥ १७ ॥
सत्तलोक जाय बैठक पाई ।
सत्त सुरत सत शब्द समाई ॥ १८ ॥
अलख अगम के पार अनामी ।
यह भी पद दरसे मोहिं स्वामी ॥ १९ ॥
महिमा सतगुरु कहँ लग कहूँ ।
आरत कर अब चुप हो रहूँ ॥ २० ॥
देव प्रसाद रहूँ चरनन मैं ।
गुन गाऊँ पल पल छिन छिन मैं ॥ २१ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

गुरू पै डालूँ तन मन वार ।
गुरू पै जाऊँ अब बलिहार ॥ १ ॥
गुरू ने नाम सुनाया सार ।
गुरू ने दीन्हा भेद अपार ॥ २ ॥
सुरत से सेऊँ नाम सम्हार ।
सहसदल मध्य होत झनकार ॥ ३ ॥
दामिनी दमकत नैन निहार ।
रूप का खुला जहाँ भंडार ॥ ४ ॥
छाँट धुन घंटा बारम्बार ।
और धुन त्यागो सबही झाड़ ॥ ५ ॥
संख धुन पकड़ो उसके पार ।
बंक का खोलो जाकर द्वार ॥ ६ ॥
गहो फिर व्हाँ से धुन ओंकार ।
गरज मिरदंग है तिस लार * ॥ ७ ॥
ररँग धुन होवत दसवैं द्वार ।
सुनो तुम जाकर अति कर प्यार ॥८॥
मानसर न्हाओ निर्मल धार ।
हंस हुइ छूटा काग अकार ॥ ९ ॥

* साथ ।

महासुन पहुँची सोभा धार ।
शब्द सँग कीन्हा जाय बिहार ॥ १०॥
भँवर चढ़ बैठी होय हुशियार ।
नाम घर आई सुरत सुधार ॥ ११ ॥
अलख लख अगम करा दरबार ।
मिले फिर राधास्वामी यार ॥ १२ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

गुरु मिले अमी रस दाता ।
मैं अधम बिषय मद माता ॥ १ ॥
मैं नीच अजान अनाड़ी ।
सुत कीन्ही शब्द दुलारी ॥ २ ॥
गुरु महिमा छिन छिन गाता ।
मन निज मन चरन लगाता ॥ ३ ॥
घट में नित आरत करता ।
सुत सहसकँवल में धरता ॥ ४ ॥
जहँ जोत जगाई न्यारी ।
तिल तोड़ा गगन सिहारी* ॥ ५ ॥
धुन अनहद शोर मचाई ।
सुखमन में सुरत जमाई ॥ ६ ॥

* गई ।

गढ़ बंका तोड़ा भाई ।
धुन ओंकार सुन पाई ॥ ७ ॥
आगे को निरत बढ़ाई ।
श्यामा तज सेत समाई ॥ ८ ॥
चंदा जहँ नूर दिखाई ।
हंसन की पाँत जोड़ाई ॥ ९ ॥
मुक्ता जहँ चुन चुन खाई ।
आलम निज अक्षर पाई ॥ १० ॥
सतगुरु फिर किरपा धारी ।
हुइ महासुन्न धस पारी ॥ ११ ॥
अनहद धुन मुरली बाजी ।
ढिंग भँवरगुफा सुत गाजी ॥ १२ ॥
बल सतगुरु सचखँड आई ।
यहँ आरत अद्भुत गाई ॥ १३ ॥
चढ़ आगे अलख दिखाई ।
गुरु अगम पुरुष दरसाई ॥ १४ ॥
लीला कुछ अचरज कही न जाई ।
ज्ञानी और जोगी भेद न पाई ॥ १५ ॥
सब काल देश में गये भुलाई ।
दयाल देश यह संत जनाई ॥ १६ ॥

राधास्वामी महल अजब मैं पाया ।
रूप अगाध जाय नहिं गाया ॥ १७ ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

आज मैं देखूँ घट मैं तिल को ।
लगीं यह बतियाँ प्यारी दिल को ॥१॥
गुरू अपनाया छिन छिन हम को ।
मर्म मैं पाया चढ़कर नभ को ॥ २ ॥
सहसदल चढ़कर मिली अलख को ।
जोत लख पाई छोड़ ख़लक़* को ॥ ३॥
श्याम तज पहुँची सेत नगर को ।
चली और निरखा त्रिकुटी घर को ॥४॥
बहुर चल निरखा सरवर तट को ।
खोल वह द्वारा फाड़ा पट को ॥ ५ ॥
महासुन पा गइ गुप्त समझ को ।
भँवर चढ़ परखा पुरुष रमज़† को ॥६॥
सत्तपद आगे मिला सुरत को ।
सुनी धुन बीना धार निरत को ॥ ७॥
लखा अलख पहुँची जाय अगम को ।
मिला अब राधास्वामी धाम अधम को ॥८

* संसार । † भेद ।

॥ शब्द नवाँ ॥

प्रेमिन दूर देश से आई ।
चली सतगुरु की हाट ॥ १ ॥
बिरह बिमल अनुराग बढ़ाई ।
लगी अब सतगुरु घाट ॥ २ ॥
दर्द दिवानी हो मस्तानी ।
खोलो गगन कपाट ॥ ३ ॥
गुरु की महिमा अगम बखानी ।
समझ समझ मुसक्यात ॥ ४ ॥
बचन बान गुरु अधिक चलाये ।
गया कलेजा फाट ॥ ५ ॥
कहँ लग कहूँ खोट इस मन की ।
चले न सतगुरु बाट ॥ ६ ॥
अमृत सागर गुरु बतलाया ।
यह नित बिषया खात ॥ ७ ॥
शब्द निशानी पूरन बानी ।
सो गुरु कीन्ही दात ॥ ८ ॥
मन बौराना बिषय दिवाना ।
उलटा भरमा जात ॥ ९ ॥

कौन सुने अब गुरु बिन मेरी ।
उन बिन को कर्म काट ॥ १० ॥
सेवा करूँ सरन दृढ़ पकड़ूँ ।
तौ धरें मेहर का हाथ ॥ ११ ॥
चले सुरत फिर शब्द* सम्हारे ।
सुने सुन्न बिख्यात ॥ १२ ॥
सहस कँवल चढ़ त्रिकुटी आवे ।
गया दसम दर† फाट ॥ १३ ॥
महासुन्न से भँवरगुफा तक ।
सत्तनाम की पाई चाट ॥ १४ ॥
अलख अगम का लगा ठिकाना ।
राधास्वामी निरखा ठाट ॥ १५ ॥
आरत करूँ प्रेम से पूरी ।
काल बली की कीन्ही घात ॥ १६ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

गुरु के दर्शन कारने, हम आये अब दूर से ।
आये अब दूर से, चल आये हम दूर से ॥ १ ॥

* बानी, शब्द । † द्वार ।

दीन अनाथ भिखारी हुए के।
हुए संगता हम धुर घर के।
गुरू मिलावैं मूर* से ॥ २ ॥
और आस बिस्वास न कोई।
चरन गुरू के पकड़े सोई।
वही छुड़ावैं कूड़† से ॥ ३ ॥
सुरत डोर चरनन में लागी।
चित चंचलता सबही भागी।
वही लगावैं तूर‡ से ॥ ३ ॥
अनहद बाजे बजैं गगन में।
सुरत चढ़ी और लागी धुन में।
दृष्टि मिली अब नूर से ॥ ५ ॥
कायरता अब मन से भागी।
सुरत शब्द में छिन छिन लागी।
डरे काल गुरु सूर से ॥ ६ ॥
सहसकँवल तज त्रिकुटी आई।
सुन्न परे महासुन्न चढ़ाई।
भेद मिला गुरु पूर से ॥ ७ ॥

* मूल। † झूठा पंजाबी बोली। ‡ एक प्रकार का बाजा।

भँवरगुफा का ताला तोड़ा ।
अमर नगर जा सूरत जोड़ा ।
मिल गइ सत्त ज़हूर* से ॥ ८ ॥
अलख पुरुष की प्रीत समानी ।
अगम लोक जा बैठक ठानी ।
हुइ पावन गुरु धूर से ॥ ९ ॥
राधास्वामी चरन निहारे ।
लगे मोहिं अब अति कर प्यारे ।
आरत करूँ प्रजर† से ॥ १० ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

करूँ मैं आरत सखियन-साथ ।
गहूँ मैं थाली सम चित हाथ ॥ १ ॥
जोत मैं धारूँ बिरह अनुराग ।
प्रेम सँग गाऊँ न और राग ॥ २ ॥
सजाऊँ आरत पाऊँ लाभ ।
सुरत खिंच पहुँची नभ‡ लख नाभ§ ॥ ३ ॥
कुलाहल‖ होत गगन मैं आज ।
प्रेम सँग भींजा सकल समाज ॥ ४ ॥

* प्रकाश । † विधि । ‡ सहसदल कँवल । § त्रिकुटी । ‖ शोर ।

छोड़ती आई दसवँ द्वार ।
खोलिया ताला सुन्न मँझार ॥ ५ ॥
धुनों की होत जहाँ झनकार ।
सुरत जहँ देखत रूप अपार ॥ ६ ॥
महासुन पहुँची सतगुरु लार ।
भँवर चढ़ खुला शब्द भंडार ॥ ७ ॥
सत्तपद पाया अधर अधार ।
अलख का लिया जाय दरबार ॥ ८ ॥
अगम का पाया वार और पार ।
रही अब राधास्वामी रूप निहार ॥९॥
सुरत अब शब्द लखा निज सार ।
दिया अब राधास्वामी भेद बिचार ॥१०॥
साध संग कीन्हा तज अहंकार ।
गुरू संग मेल किया बहु प्यार ॥ ११ ॥
नाम धन पाया बिरह सम्हार ।
गुरू ने मर्म लखाया पार ॥ १२ ॥
कँवल चढ़ झाँकी मन को मार ।
घाट अब देखा घट में सार ॥ १३ ॥
चरन राधास्वामी हिरदे धार ।
रहूँ मैं दम दम चरन सम्हार ॥ १४ ॥

हुए राधास्वामी आज दयार ।
नाम रस पाया परखी धार ॥ १५ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

गुरु आरत तू कर ले सजनी ।
दिवस गया आई अब रजनी* ॥ १ ॥
मन को तोड़ चढ़ो निज गगनी ।
सुरत शब्द रस पीवत मगनी ॥ २ ॥
हिर्स हवस† जग छिन छिन तजनी ।
नाम ओर‡ अब पल पल भजनी§ ॥३॥
जोत नाद सँग दम दम रँगनी ।
लख पिया रूप बढ़ावत लगनी ॥ ४ ॥
बिन गुरु कौन करावत करनी ।
सुख आकाश तज गिरती धरनी ॥५॥
छूट गया मेरा जन्म और मरनी ।
सतगुरु दया सुरत नभ भरनी ॥ ६ ॥
अमर लोक अब लागी चढ़नी ।
धुन अपार हिरदे में जरनी ॥ ७ ॥
सत्तनाम सतगुरु हुइ सरनी ।
अलख अगम के चरनन पड़नी ॥ ८ ॥

* रात । † तृष्णा और वासना । ‡ तरफ़ । § भागना ।

गुरु पद परस परख घट चलनी ।
माया ममता तृष्णा दलनी ॥ ९ ॥
सुआ* समान फसा जग नलनी† ।
गुरु प्रताप मेरे दुख टलनी ॥ १० ॥
राधास्वामी दृष्टि करी मन गलनी ।
बाल समान गोद गुरु पलनी ॥ ११ ॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

आओ री सिमट हे सखियो ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १ ॥
तुम जुड़ मिल बैठो गाओ ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २ ॥
तुम अपने सङ्ग लगा लो ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ३ ॥
तुम प्रेम बढ़ा दो मेरा ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ४ ॥
तुम करो मदद मेरी मिलकर ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ५ ॥
तुम बिन मेरे बल नाहिं पौरुष ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ६ ॥

* तोता । † तोता फसाने की कल ।

तुम सेवक साँचे गुरू की ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ७ ॥
अब बिनती सुनो अधम की ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ८ ॥
तुम ढङ्ग सिखाओ रँग से ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ९ ॥
यह औसर मिले न कबही ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १० ॥
अस औसर फिर न मिलेगा ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ ११ ॥
मन बिरह जोत अब बाली ।
मैं आरत गुरू की ॥ १२ ॥
कर* उमँग थाल ले आई ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १३ ॥
सामाँ सब हुई इकट्ठी ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १४ ॥
सुर्त श्याम कंज चढ़ झाँकी ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १५ ॥

* हाथ ।

फिर बंकनाल धस आई ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १६ ॥
त्रिकुटी की सिला* हटाई ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १७ ॥
सुन सेत हंस गति पाई ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १८ ॥
महासुन्न निरखती चाली ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ १९ ॥
मुरली धुन गुफा सम्हाली ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २० ॥
सचखंड बीन धुन जागी ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २१ ॥
लख अलख पुरुष पद पागी ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २२ ॥
अब अगम गम्म कर धाई ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २३ ॥
राधास्वामी धाम दिखाई ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २४ ॥

* बजूर कपाट ।

राधास्वामी सतगुरु पूरे ।
मैं आरत करूँ गुरू की ॥ २५ ॥

*****

॥ बचन पैंतीसवाँ ॥

चढ़ कर पहुँचना सुरत का आकाश में और भेद और लीला मुक़ामात की जो कि सुरत ने रास्ते में देखी है

॥ भाग पहिला ॥

॥ शब्द पहिला ॥

करूँ आरती नाना बिधि से ।
देखो स्वामी मेहर बेहद से ॥ १ ॥
घट का थाल चित्त की बाती ।
नाम चेतना जोत जगाती ॥ २ ॥
भाव भक्ति का भोग धराऊँ ।
सुरत दृष्टि का जोग मिलाऊँ ॥ ३ ॥
बाजे अनहद नित्त बजाऊँ ।
अमी धार रस अगम चुवाऊँ ॥ ४ ॥
रूप अनूपम गगन गँभीरा ।
झलकें जहँ तहँ मोती हीरा ॥ ५ ॥
सूरज मंडल तेज उजारा ।
चन्द्र मंडली खोला द्वारा ॥ ६ ॥

सुषमन नाली सुरत चढ़ाई ।
बंकनाल में सहज समाई ॥ ७ ॥
धुन धधकार सुनी ओंकारा ।
लाल रंग जहँ सूर निहारा ॥ ८ ॥
त्रिकुटी घाट सुरत अब जागी ।
मानसरोवर चालन लागी ॥ ९ ॥
सेत सेत मैदान अनूपा ।
हंसन का जहँ देखा रूपा ॥ १० ॥
द्वादस सूर कला जिन केरी ।
हंस हंस प्रति ऐसी हेरी ॥ ११ ॥
सोभा व्हाँ की अगम अगाधा ।
नहिं पावे कर जोग समाधा ॥ १२ ॥
सुरत जोग से पहुँचे कोई ।
जा पर दया राधास्वामी की होई ॥ १३
आगे भेद गुप्त हम राखा ।
अधिकारी को कहिं कहिं भाखा ॥ १४ ॥
यह आरत अब पूरन होई ।
स्वामी देव प्रसादी मोहीं ॥ १५ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

लाई आरती दासी सज के ।
नाम राधास्वामी का छिन २ भज के ॥१॥
सील छिमा की ओढ़ चदरिया ।
काम क्रोध की छाँट बदरिया ॥ २ ॥
नाम थाल लिया हाथ पसारी ।
बिरह अगिन से जोत सँवारी ॥ ३ ॥
अमी सरोवर भर लइ झारी ।
राधास्वामी सन्मुख कर कर ढारी* ॥४॥
अगम लोक के बिंजन लाई ।
राधास्वामी आगे भोग धराई ॥ ५ ॥
अम्बर चीर पीतम्बर जोड़े ।
भेट किये मैंने हाथी घोड़े ॥ ६ ॥
पाँच तत्व गुन तीन सिपाही ।
मार लिये राधास्वामी की दुहाई ॥ ७ ॥
चढ़ी गगन पर कीन्हा धावा ।
सुरत निरत दोउ शब्द समावा ॥ ८ ॥
बंकनाल की तोप चलाई ।
बिरह अगिन की चिनगी लाई ॥ ९ ॥

* गिराया ।

धर्मराय की फ़ौज भगाई ।
धूम धाम मैं ने बहुत मचाई ॥ १० ॥
घंटा संख मृदंग बजाई ।
धौंसा* धमक अजब धुन आई ॥ ११ ॥
गगन मँडल का घाटा रोका ।
काल मंडली खाया झोका ॥ १२ ॥
अब चढ़ गई सुरत शशि† द्वारे ।
तीन लोक के हो गइ पारे ॥ १३ ॥
भान किरन जहँ झलकन लागी ।
अगम रूप अद्भुत जहँ पागी ॥ १४ ॥
खुली दृष्टि जब झिरना झाँकी ।
क्या कहूँ सोभा अब मैं वहाँ की ॥१५॥
कोटिन भान रोम इक लागी ।
देख सुरत अचरज अस जागी ॥ १६ ॥
सुरत शब्द का हो गया मेला ।
अगम पुरुष अब रहा अकेला ॥ १७ ॥
एक दोय कुछ कहा न जाई ।
ऐसे पद में जाय समाई ॥ १८ ॥

* बड़ा नक़ारा । † चन्द्रमा ।

आरत का मैं यह फल पाया ।
दुक्ख भर्म सब दूर बहाया ॥ १९ ॥
परम शांत मैं आन समानी ।
क्या कहुँ महिमा अचरज बानी ॥२०॥
अब कीजे स्वामी पूरन किरपा ।
तन मन मैं सब तुम पर अरपा ॥ २१ ॥
राधास्वामी २ अब नित गाऊँ ।
और बचन कुछ याद न लाऊँ ॥ २२ ॥
देव प्रसाद अगमपुर धामी ।
भक्ति सहित तुम चरन नमामी ॥ २३ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

हे सहेली आली मौज करी अब भारी ।
चरन कँवल प्रीतम जिया धारी ॥ १ ॥
जगी है ज़ोत हिये भई उजियारी ।
गगन मँडल धुन भई धधकारी ॥ २ ॥
चाँद सुरज दोउ झाँक झरोका* ।
सुखमन खिड़की द्वार जाय रोका ॥३॥
प्रान पवन जहँ देती झोका† ।
सुरत अड़ी अब माने न नेका ॥ ४ ॥

* सूराख । † धक्का ।

शब्द गुरू जाय कीन्हा ठेका ।
त्रिकुटी महल पर पग अब टेका ॥ ५ ॥
मानसरोवर हंस समीपा ।
अक्षर का जहँ है निज दीपा ॥ ६ ॥
चार भान कामिन* जहँ क्रांती† ।
द्वादस भान हंस की भाँती ॥ ७ ॥
लीला अद्भुत बरनी न जाई ।
देख देख मन जहँ बिगसाई ॥ ८ ॥
इकटक‡ ठाढ़ी सुरत निहारी ।
धुन किंगरी जहँ सुनत सम्हारी ॥ ९ ॥
महासुन्न होय सचखँड आई ।
अलख अगम में जाय समाई ॥ १० ॥
मौज अनामी क्या कहूँ लेखा ।
बरना न जाय रूप जस देखा ॥ ११ ॥
सोई रूप धारा राधास्वामी ।
जीव काज आये निज धामी ॥ १२ ॥
उन चरनन पर तन मन वारूँ ।
छबि उनकी पल पल हिये धारूँ ॥ १३ ॥

* हंसनी । † प्रकाश । ‡ एक तरफ़ दृष्टि जोड़ कर ।

आरत फेरूँ प्रेम उमँग से ।
सुध बुध बिसरी अब मोरे तन से ॥१४॥
फल पाया मैं ने अगम अपारा ।
अमी अहार करूँ नित सारा ॥ १५ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

प्रेम प्रीत घट भीतर आई ।
दास आरती नई बनाई ॥ १ ॥
तिल का थाल मर्दुमक* बाती ।
सहसकँवल दल सन्मुख लाती ॥ २ ॥
चक्र फेर कर जोत जगाती ।
ओत पोत लख ऊपर जाती ॥ ३ ॥
सुन्न निरख फिर धुन को सुनती ।
घाटी बंक मध्य होय धसती ॥ ४ ॥
तहाँ संखनी† करें पुकारा ।
और डंकनी† अमल‡ पसारा ॥ ५ ॥
शब्द कमान हाथ लइ जबही ।
धुन के बान छुटे बहु तबही ॥ ६ ॥
भुराड भुराड उनके सब भागे ।
सुरत शब्द ले चाली आगे ॥ ७ ॥

* आँख की पुतली। † माया की शक्तियाँ। ‡ हुक्म, दखल।

ब्रह्म देश जहँ नाद अस्थाना ।
धुन अनंत जहँ बेद ठिकाना ॥ ८ ॥
नाग फाँस डारी जहँ काला ।
गरुड़ शब्द से काटा जाला ॥ ९ ॥
फिर सतगुरु जब भये सहाई ।
बिघन अनेकन दूर बहाई ॥ १० ॥
चौक चाँदनी घट के पारा ।
पारब्रह्म का रूप निहारा ॥ ११ ॥
महासुन्न सागर गंभीरा ।
पार किया दइ सतगुरु धीरा ॥ १२ ॥
भँवरगुफा जाय द्वारा खोला ।
सत्तपुरुष तब बानी बोला ॥ १३ ॥
सुन सुन बानी सुरत समानी ।
अलख अगम की फिर गति जानी ॥१४॥
पद अनाम कुछ कहा न जाई ।
देश संत का निज कर पाई ॥ १५ ॥
अब आरत यह पूरन करहूँ ।
राधास्वामी छिन छिन भज हूँ ॥ १६ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

पश्चिम* तज पूरब† चल आया ।
सतगुरु आरत सामाँ लाया ॥ १ ॥
दीन ग़रीबी भक्ति सिंगारी ।
उमँग थाल चित जोत सँवारी ॥ २ ॥
गुरु दर‡ झाँक झुकाया माथा ।
घेर घार मन चरनन लाया ॥ ३ ॥
आरत कीन्ही बिबिध भाँत से ।
शुद्ध किया मन भर्म भ्रांत से ॥ ४ ॥
काल हटाया जुक्ति घात से ।
निर्मल किया मन अष्ट धात§ से ॥ ५ ॥
गिरा‖ सुनी इक त्रिकुटी घाट से ।
सुरत चढ़ाई नैन बाट से ॥ ६ ॥
दो दल** मोड़े अजब ठाट से ।
सुरत हटाई नउ हाट†† से ॥ ७ ॥
बज्र किवाड़ दूसरा खोला ।
चार कँवलदल‡‡ अन्दर मोड़ा ॥ ८ ॥

---

* नीचे । † ऊपर । ‡ दरवाज़ा । § पाँच तत्व और तीन गुन । ‖आवाज़ । **आँख । ††नव द्वारे । ‡‡तीसरा तिल ।

षटदलकँवल[*] सुन्न मेँ फूला ।
अष्टकँवल दल[†] आगे झूला ॥ ९ ॥
द्वादसदल[‡] मेँ सुरत समानी ।
दल तेरह[§] से निकसी बानी ॥ १० ॥
दस दल महासुन्न के नाके ।
झार झरोखा धस कर ताके ॥ ११ ॥
संतोष दीप अमृत जहँ झिरना ।
सुरत निरत दोनोँ जहँ भरना ॥ १२ ॥
आगे सतमत ताला खोला ।
पुरुष सत्त बानी सत बोला ॥ १३ ॥
लौ लागी गइ अलख अगम मेँ ।
सुरत समानी अधर पदम मेँ ॥ १४ ॥
राधास्वामी नाम अनामी ।
बार बार चरनन परनामी ॥ १५ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

गुरु का अगम रूप मैँ देखा ।
सतगुरु सत्तनाम सम पेखा ॥ १ ॥
बल सतगुरु अब काल पछाड़ा ।
कर्म काट सतगुरु पद धारा ॥ २ ॥

[*]तीसरे तिल के ऊपर का सुन्न । [†] सहसदल कँवल । [‡] त्रिकुटी । [§]सुन्न ।

सहसकँवल का थाल सुधारा ।
जोत रूप का दीपक बारा ॥ ३ ॥
धुन घंटा और संख बजाई ।
बंकनाल में दृष्टि जमाई ॥ ४ ॥
दृष्टि सम्हारत मन हुलसाना ।
गगन मँडल धुन गरज पिछाना ॥ ५ ॥
देख रूप सूरज परकाशा ।
मिटा अँधेरा झलक अकाशा ॥ ६ ॥
पाया आतमपद* अब भारी ।
ररंकार धुन जहाँ सम्हारी ॥ ७ ॥
चंद्र चाँदनी चौक निहारा ।
सेत सेत पद श्याम निकारा ॥ ८ ॥
इकटक सुरत लगी वहि द्वारे ।
हंस जूथ† बहु लगे पियारे ॥ ९ ॥
राधास्वामी लीला धारी ।
आरत कर मन बिगसा भारी ॥ १० ॥
दया मेहर परशादी पाऊँ ।
रज चरनन की सीस चढ़ाऊँ ॥ ११ ॥

* सुन्न । † झुण्ड ।

॥ शब्द सातवाँ ॥

गुइयाँ* री लख मरम जनाऊँ ।
अब भेद अगम घट गाऊँ ॥ १ ॥
सुत सहसकँवल पर लाऊँ ।
लख नैन सैन दरसाऊँ ॥ २ ॥
जोती की झलक झकाऊँ ।
श्यामा तज सेत मिलाऊँ ॥ ३ ॥
फिर बंकनाल चढ़ आऊँ ।
त्रिकुटी का राग सुनाऊँ ॥ ४ ॥
सुन्नी† जाय सुन्न समाऊँ ।
सरवर में धमक चढ़ाऊँ ॥ ५ ॥
हंसन से प्यार बढ़ाऊँ ।
किँगरी अब नित्त बजाऊँ ॥ ६ ॥
राधास्वामी नाम जपाऊँ ।
नौका अब पार लगाऊँ ॥ ७ ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

बहुरिया‡ धूम मचावत आई ।
चढ़न को सतगुरु धाम ॥ १ ॥

* सखी, सहेली । † सुरत । ‡ दुलहिन ।

भाव भक्ति और प्रेम दिवानी ।
आरत लीन्ही साम* ॥ २ ॥
करुनानिधि गुरु फूल बिराजे ।
करें भजन निज नाम ॥ ३ ॥
सोभा भारी कहूँ सम्हारी ।
बिसर गये सब काम ॥ ४ ॥
तन मन की सुधि भूल गई है ।
पाया अब आराम ॥ ५ ॥
सुरत चढ़ाय गगन पर आई ।
कौन जपे मुख राम ॥ ६ ॥
हम सतगुरु अब पूरे पाये ।
भेद दिया सतनाम ॥ ७ ॥
देखा तिल तोड़ा वह द्वारा ।
खिला कंज घट श्याम ॥ ८ ॥
जोत जगमगी थाली उसकी ।
पाया काल मुक़ाम ॥ ९ ॥
घंटा संख धूम अति डारी ।
हार गया अब जाम‡ ॥ १० ॥

*सामान । ‡ जमराय ।

नाली पार चढ़ी सुत बिरहिन ।
बसी तिरकुटी ग्राम ॥ ११ ॥
सुन्न शिखर जा डंका दीन्हा ।
पाई सीतल छाम ॥ १२ ॥
महासुन्न पर गाजन लागी ।
भँवरगुफा कीन्हा बिसराम ॥ १३ ॥
बंसी अधर बजावन लागी ।
लज्जित कोटिन श्याम ॥ १४ ॥
सत्तलोक में जाय समानी ।
बीन बजे जहँ आठों जाम ॥ १५ ॥
अलख अगम का दर्शन पाया ।
जहाँ ख़ास नहिँ आम ॥ १६ ॥
आगे चली मिले राधास्वामी ।
अब पाया बिसराम ॥ १७ ॥
आरत कर कर मगन हुई अति ।
भागा लोभ और काम ॥ १८ ॥

॥ शब्द नवाँ ॥

सुरत सहेली नभ पर खेली ।
परखी सूरत जोत निशान ॥ १ ॥

आगे पेली धुन सँग मेली ।
शब्द गुरू का पाया ज्ञान ॥ २ ॥
सुन में जाय धुन अक्षर पाई ।
लखा चंद्र अस्थान ॥ ३ ॥
हंसन साथ करे कंतूहल* ।
मानसरोवर कर अश्नान ॥ ४ ॥
महासुन्न चढ़ झाँकी गुरु बल ।
देखा अति मैदान ॥ ५ ॥
भँवरगुफा पर आसन डारा ।
वहाँ लगाया ध्यान ॥ ६ ॥
सत्तलोक जा सतगुरु पाये ।
सुनी बीन धुन तान॥ ७ ॥
अलख पुरुष का दर्शन पाया ।
पहुँची अगम ठिकान ॥ ८ ॥
राधास्वामी धुन सुन पाई ।
करी बहुत पहिचान॥ ९॥
अब आरत ले सन्मुख आई ।
भेट चढ़ाई अपनी जान ॥ १० ॥

---

* बिलास ।

प्रेम प्रीत चरनन में लागी ।
देख रूप मैं हुइ हैरान ॥ ११ ॥
कहनी कथनी सब अब थाकी ।
देखे ही परमान ॥ १२ ॥
यह आरत मैं अचरज कीन्ही ।
बूझैं बिरले संत सुजान ॥ १३ ॥
यह गति मति है सब से न्यारी ।
ज्ञानी जोगी मर्म न जान ॥ १४ ॥
रतन पदारथ घट में पाया ।
राधास्वामी दीन्हा दान ॥ १५ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

चल सुरत देख नभ गलियाँ ।
जहँ सहसकँवल की पसरीं* कलियाँ ॥१॥
कली कली में देखीं नलियाँ ।
नली नली मध जोती बलियाँ ॥ २ ॥
जोत निरंजन करते रलियाँ ।
नाना रँग फुलवारी खिलियाँ ॥ ३ ॥
देखत छबि मन जगत उगलियाँ ।
अनहद सुन धुन में सुत पिलियाँ† ॥४॥

*फैलीं । † प्रवेश किया ।

सुख अगाध क्या कहूँ जो मिलियाँ ।
कर्म कला जहँ छिन २ जलियाँ ॥ ५ ॥
काम क्रोध आसा जहँ दलियाँ ।
फिर आगे सूरत चढ़ चलियाँ ॥ ६ ॥
बंक तिरकुटी सुषमन खुलियाँ ।
देख सूर शशि चमक बिजलियाँ ॥७॥
सुन्न सिखर पर जाय सम्हलियाँ ।
सेत बरन जहँ देख कँवलियाँ ॥ ८ ॥
महासुन्न महाकाल मिलनियाँ ।
भँवरगुफा पर सुरत चलनियाँ ॥ ९ ॥
सत्तनाम जा मर्म खुलनियाँ ।
अलख अगम पद मिले जुगलियाँ* ॥१०॥
राधास्वामी चरन परस मल धुलियाँ ।
आनँद अधिक मोहिं अब मिलियाँ ॥११॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

मेरे उर में भरे दुख साल ।
कब काटोगे दीनदयाल ॥ १ ॥
मैं भरम रही भौजाल ।
अचरज खेल दिखावत काल ॥ २ ॥

* दोनों ।

कभी करत चाँदना दीवा बाल ।
कभी घोर अँधेरा बाँधत पाल* ॥ ३ ॥
कभी पाँच तत्व के रंग दिखाल ।
कभी शब्द सुनावत डारत जाल ॥ ४ ॥
बहु भटकावत जोग सम्हाल ।
जोगी भूले ऐसे ख़्याल ॥ ५ ॥
मैं भी भटका बहुतक काल ।
क्या क्या कहूँ मैं अपना हाल ॥ ६ ॥
अब सतगुरु मोहिं मिले दयाल ।
कुंजी दे खोला तिल ताल ॥ ७ ॥
रूप निहारूँ अजब बिशाल ।
शब्द सुनूँ चढ़ बंकीनाल ॥ ८ ॥
त्रिकुटी घाट भेद दरसाल ।
सुन्न मँडल अमर उरसाल ॥ ९ ॥
देखी नदी चमकती चाल ।
अचरज लहरें करत बेहाल ॥ १० ॥
बजत जहाँ छिन छिन करताल ।
सुनत सुरत काटा जंजाल ॥ ११ ॥

* परदा ।

महरम* महलन को अटकाल ।
सतगुरु दया सुफल हुइ घाल† ॥ १२ ॥
अब आरत गुरु करूँ सम्हाल ।
राधास्वामी किया निहाल ॥ १३ ॥
सेत पदम चढ़ मारा काल ।
मूल मिली और छूटी डाल ॥ १४ ॥

॥ भाग दूसरा ॥

॥ शब्द पहिला ॥

मन और सुरत चढ़ाओ त्रिकुटी ।
खेलो गगन और करो आरती ॥ १ ॥
निरख नाम पोवो धुन मोती ।
गरज गरज झलके जहँ जोती ॥ २ ॥
हाथ झाड़ माया तब रोती ।
पाया ररंकार निज गोती‡ ॥ ३ ॥
आसा मंसा यहाँ रही सोती ।
घाट त्रिबेनी चढ़ मल धोती ॥ ४ ॥
आलस नींद भूख सब खोती ।
ममता बिपता सब भइँ थोथी ॥ ५ ॥

* जानकार । † खेप । ‡ गोत्र, जाति ।

छिन छिन प्रेम मगन सुत होती ।
कँवलन की जहँ माल परोती ॥ ६ ॥
अब चली सत्तनाम पद न्योती* ।
सुरत शब्द की क्यारी बोती ॥ ७ ॥
धन धन राधास्वामी मेरे सतगुरु ।
जिन यह मौज दिखाई चढ़कर ॥ ८ ॥
क्या आरत मैं उनकी गाऊँ ।
महिमा अगम अगाध सुनाऊँ ॥ ९ ॥
कहत कहत मैं कभी न अघाऊँ ।
उमँग प्रेम अब कहाँ समाऊँ ॥ १० ॥
चरन कँवल बिन और न आसा ।
मन भँवरा वहिँ करत बिलासा ॥ ११ ॥
राधास्वामी २ उठी धुन हिय से ।
सुरत सुहागिन अब मिली पिय से ॥ १२ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

चेत चली आज सुरत रँगीली ।
छूट गई मति बुधि सब मैली ॥ १ ॥
हाथ लगी अनहद धुन थैली ।
होय गई निज घर की चेली ॥ २ ॥

* जिसको नेवता दिया है।

द्वारा फोड़ गगन को पेली ।
अब सूरत भइ अति अलबेली* ॥ ३ ॥
इड़ा छोड़ पिंगला कर जीती ।
करी आरती सुषमन सेती ॥ ४ ॥
बंकनाल धुन संख बजाई ।
त्रिकुटी घाट ओं धुन पाई ॥ ५ ॥
बाजे मृदंग गाजे तम्बूरा ।
सुन सुन धुन अब मन भया सूरा ॥६॥
सूर होयकर काल पछाड़ी ।
माया चादर छिन में फाड़ी ॥ ७ ॥
फाँद† पिंड और तोड़ा अंडा ।
खंड खंड कीन्हा ब्रह्मण्डा ॥ ८ ॥
भर छलाँग‡ पहुँची सचखंडा ।
पाय गई पद अमर अखंडा ॥ ९ ॥
अब अनाम पद जाय समानी ।
आरत की बिधि पूरी जानी ॥ १० ॥
राधास्वामी दया करी अब भारी ।
मैं अपना पद लिया सम्हारी ॥ ११ ॥

* अनोखी । † लंघन करके । ‡ उछाल ।

॥ शब्द तीसरा ॥

चली सुरत अब गगन गली री ।
मिली जाय अब पिय से अली री ॥ १ ॥
दली जाय संसा सब सैली ।
सुन्न सिखर पर खुल खुल खेली ॥ २ ॥
भई सुरत सतनाम की चेली ।
गगन फोड़ अब आई सहेली ॥ ३ ॥
अब पाया पद ऐसा हेली* ।
खिल गई घट में पोद चमेली ॥ ४ ॥
पहिर लई गल धुन की सेली† ।
चरन धूर सतगुरु अब ले ली ॥ ५ ॥
अगम अटारी चढ़ी अकेली ।
जहँ से यह रचना सब फैली ॥ ६ ॥
अब याकी बिधि क्या कहुँ खोली ।
संत बिना को समझे बोली ॥ ७ ॥
यह आरत है परम पुर्ष की ।
धुन पकड़ी मैं अधर अर्श की ॥ ८ ॥
सतगुरु ने अब दया बिचारी ।
पद अपना दे काल बिडारी ॥ ९ ॥

* हे आली, सखी । † गुलूबन्द ।

शब्द अगम का सौदा कीन्हा ।
सरन पड़ी सतगुरु पद लीन्हा ॥ १० ॥
दीनदयाल दयानिधि स्वामी ।
काढ़ लिया मोहिं अंतरजामी ॥ ११ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

गगन नगर चढ़ आरत करहूँ ।
पिंड देश अब छिन छिन तजहूँ ॥१॥
सुनूँ गगन में अनहद रागा ।
बढ़त जाय पल पल अनुरागा ॥ २॥
रूप अनूप देख हिये माहीं ।
कहत न बने कहा कहुँ भाई ॥ ३ ॥
मथ मथ शब्द जोत परकाशी ।
सुन सुन धुन भइ सुरत अबिनाशी ॥४॥
दुन्द* धुन्ध† से निकसी धारा ।
सत्तनाम का खोला द्वारा ॥ ५ ॥
अंस हंस सँग कीन्ह बिलासा ।
देखा जाय बंस परकाशा ॥ ६ ॥
सुरत सम्हार सुनी धुन बीना ।
कौन कहे वह अचरज चीन्हा ॥७॥

* दुई । † अंधेरा ।

जोगी थके समाध लगाई ।
ज्ञानी रहे आतम गति पाई ॥ ८ ॥
यह संतन का भेद अमोला ।
बिना संत काहू नहिं तोला ॥ ९ ॥
संतन की गति अगम अपारा ।
क्योंकर कहूँ वार नहिं पारा ॥ १० ॥
संत मौज से जा पर हेरा ।
दिया अमर पद मिट गया फेरा* ॥ ११ ॥
यह आरत कही उमँग प्रेम से ।
पाठ करूँ और करूँ नेम से ॥ १२ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

आरत गाऊँ स्वामी सुरत चढ़ाऊँ ।
गगन मँडल में धूम मचाऊँ ॥ १ ॥
श्याम सुँदर पद निरख निहारूँ ।
सेत पदम पर तन मन वारूँ ॥ २ ॥

* जन्म मरन ।

कड़ी १—आरती राधास्वामी दयाल की गाऊँ और सुरत को गगन मंडल में चढ़ाकर धूम मचाऊँ यानी विलास करूँ ।

„ २—और चढ़ाई के वक़्त, श्यामसुंदर पद यानी श्याम पद जो अति सुन्दर है, और वहाँ सुन्न यानी चेतन्य मंडल का द्वारा है, देखती चलूँ और सेत पदम यानी सत्त लोक में पहुँचकर सत्तपुरुष पर तन मन वारूँ यानी इन दोनों से न्यारी होकर पहुँचूँ ।

बिन्द्राबन मथरा पद लीन्हा ।
गोकुल जीत कालिन्द्री छीना ॥ ३ ॥
सुन्न महाबन गिरवर चीन्हा ।
महासुन्न जा अमृत पीना ॥ ४ ॥
धीरज थाल प्रेम की जोती ।
धुन बिबेक घट मोती पोती ॥ ५ ॥
बिरह राग तज रंग लगाऊँ ।
सुरत निरत ले शब्द समाऊँ ॥ ६ ॥
रास मँडल घट लीला ठानी ।
कालीनाथ निरख मन जानी ॥ ७ ॥
घोर चढ़ा अब गगन कुंज में ।
मगन हुई लख तेज पुंज में ॥ ८ ॥

कड़ी ३—बिंद्राबन, यानी देह को जो बिंद से बनी है, मथ कर रकार पद यानी सुन्न में पहुँची और गोकुल यानी इंद्रियों के देश से न्यारी हुई, और काल की शक्ती छीन हुई यानी जाती रही ।

" ४—सुन्नमंडल को जो कि महाबन है, और वही ऊँचा देश यानी पहाड़ है पहचान करी, और वहाँ से आगे महासुन्न में पहुँच कर अमृतपान किया ।

" ५—धीरज का थाल लेकर यानी चित्त में धीरज कर और प्रेम की जोत जगाकर यानी प्रेम तेज कर के मोती रूप धुनों को घट में छाँट कर पोहती हुई यानी सुनती चली ।

" ६—संसारी भोगों की बिरह छोड़कर प्रेम बढ़ाऊँ और सुरत और निरत को जगाकर और संग लेकर शब्द में लगूँ ।

" ७—यानी घट में रास मंडल की लीला करके और काल अंग को नीचे डाल कर सुरत रास्ते की सैर करती हुई आकाश में पहुँची ।

" ८—आकाश में चढ़कर आवाज़ गगन मंडल की सुनाई दी और वहाँ पहुँच कर त्रिकुटी में जो स्वरूप है उस का दर्शन करके खुश हुई ।

मद और मोह हने और छूटे ।
मोहन मुरली बजी मन बोधे ॥ ९ ॥
गोपी धुन और शब्द ग्वाल मिल ।
सुरत गूजरी आई चल चल ॥ १० ॥
खेलत कूदत शोर मचावत ।
दधि आकाश सब मथ मथ लावत ॥ ११ ॥
पी पी चहुँ दिस होत पुकारा ।
सुन सुन राधा मगन बिहारा ॥ १२ ॥
स्वामी स्वामी धुन अब जागी ।
उमँग हिये में छिन छिन लागी ॥ १३ ॥
जक्त बासना सब हम त्यागी ।
मन हुआ मेरा सहज बैरागी ॥ १४ ॥

कड़ी ९—और मद और मोह दूर हुए और निहायत रसीली बाँसुरी की आवाज़ सुनकर मन को नया बोध हुआ ।
" १०—शब्द की धुनें और शब्द सुनती हुई जो कि गोपी और ग्वाल हैं सुरत गूजरी यानी इंद्रियों की जलाने वाली ऊपर को चढ़ती चली जाती है ।
" ११—गोपी और ग्वाल यानी मन इंद्री वगैरह विलास और शोर करते हुए और आकाश में से दधि यानी चेतन्य को समेटते और छाँटते हुए मगन हो रहे हैं ।
" १२—और सब चारों तरफ़ से अपने प्रीतम शब्द गुरू को पुकारते हैं और राधा यानी सुरत चलने वाली इस विलास को देख कर मगन होती है
" १३—फिर स्वामी नाम की धुन सुनती हुई नवीन उमंग हिरदे में बढ़ाती जाती है ।
" १४—यह कैफ़ियत देख कर जगत की चाह और वासना बिलकुल छोड़ दी और मन सहज में बैरागी यानी उदासीन होगया ।

क्रपा करो अब राधास्वामी ।
करत रहूँ तुम चरन नमामी ॥ १५ ॥
मन को फेरो दीन दयाला ।
छिन छिन निरखूँ दरस बिसाला ॥१६॥
अब तो लिये जात मोहिँ खींचे ।
मानत नाहिँ डार मोहिँ भीचे॥ १७ ॥
भक्ति पौद जो तुमहिँ लगाई ।
मेहर दया से सींचो आई ॥ १८ ॥
मेरा बस मन से नहिँ चाले ।
बहुत लगाये इन जंजाले ॥ १९ ॥
पर तुम समरथ पुरुष अपारा ।
काटोगे हम निश्चय धारा ॥ २० ॥

कड़ी १५—हे राधास्वामी दयाल ऐसी ही कृपा मेरे ऊपर जारी रक्खो, और मैं तुम्हारी बंदना करती रहूँ ।

,, १६—और मेरे मन को इस तौर से फेर दीजिये कि छिन २ आप का दर्शन करती रहूँ ।

" १७—इस वक्त तो मुझ को अपनी तरफ़ खींचे लिये जाता है और कहना नहीं मानता और मुझको तंग कर रहा है ।

" १८—भक्ती की पौद जो आपने लगाई है उसको आप ही अपनी मेहर और दया से सींचो यानी बढ़ाओ और तरक़्क़ी दो ।

,, १९ —क्योंकि मेरा मन मेरे क़ाबू में नहीं है और बहुत संसारी जाल इसने फैला रक्खा है ।

,, २० —लेकिन आप सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल समर्थ हो और मुझ को यक़ीन है कि आप दया करके इस जंजाल को काटोगे ।

अब आरत सब बिधि हुइ पूरी ।
राधास्वामी रहूँ हजूरी ॥२१॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

हिरदे में गुल* पौद खिलानी ।
मैं बुलबुल सम भइ मस्तानी ॥ १ ॥
प्रेम प्रीत का लगा बग़ीचा ।
मन माली ताहि दम दम सींचा ॥२॥
अमर बेल फैली चहुँ दिस में ।
भीज रही वह अमृत रस में ॥३॥
बाजे अनहद बजे गगन में ।
सुध भूली तन उसी लगन में ॥ ४ ॥
दृष्टि खुली और झाँकी पाई ।
सूरत मूरत अगम दिखाई ॥ ५ ॥
मानिक मोती शब्द नाद के ।
नीलम पन्ना धुन अगाध के ॥ ६ ॥
रतन जड़ित सुन चौकी पाई ।
देखत छबि मन गया भुलाई ॥ ७ ॥

कड़ी २१—अब यह आरती सम्पूरन हुई और मेरी अर्ज़ और माँग यही है कि राधास्वामी दयाल के सदा सन्मुख रहूँ।

*फूल।

मानसरोवर हंस बिलासा ।
केल करें मिल अजब तमाशा ॥ ८ ॥
हंस हंसिनी नाचें गावें ।
तूर तँबूरा अधिक बजावें ॥ ९ ॥
अस बेदी रच लीला ठानी ।
सुरत शब्द मिल बोले बानी ॥ १० ॥
दुलहा दुलहिन दोऊ बिठाये ।
भाँवर फेरे दोउ गठियाये ॥ ११ ॥
ब्याह भया और निज घर आये ।
सत्त पुरुष का दर्शन पाये ॥ १२ ॥
अजर चौतरा अमर अटारी ।
सेज अजूनी* लीन्ह सिँगारी ॥ १३ ॥
अटल सुहाग सुरत अब लीन्हा ।
पति मिलाप अनहद धुन बीना ॥१४॥
राधास्वामी लगन धराई ॥
तब हम ऐसा दुलहा पाई ॥ १५ ॥
अजब तमाशा नहीं तिरासा ।
मौज चौज† जहँ अधिक दिलासा ॥१६॥

* जूनी से रहित । † विलास ।

॥ शब्द सातवाँ ॥

सुरत चढ़ी घट में अब दौड़ी ।
सुन कर शब्द भई अब पोढ़ी ॥ १ ॥
आसा मनसा जग की छोड़ी ।
लाज कान कुल की सब तोड़ी ॥ २ ॥
सतसँग रँग पाया भई बौरी ।
संत द्वार में निज कर जोड़ी ॥ ३ ॥
श्याम नगर गइ परदा फोड़ी ।
गगन खंड फिर सूरत मोड़ी ॥ ४ ॥
गगन नगर पहुँची सुन्दर में ।
खिला चमन अब हिये अंदर में ॥ ५ ॥
सहन* मिला चौड़ा अब सुन में ।
मगन हुई पहुँची निज धुन में ॥ ६ ॥
रस पाया अब अगम अधर में ।
पाया चैन आय गइ घर में ॥ ७ ॥
घट घट भीतर यही बिलासा ।
देख देख मैं पाउँ हुलासा ॥ ८ ॥
जीव अचेत न चेते भाई ।
घर सुख तज बन बन भटकाई ॥ ९ ॥

* चौक ।

जा के घर सुख का भंडारा ।
क्यों भरमे फिरे दर दर* सारा ॥१०॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
कर सतसङ्ग बूझ तब पाई ॥ ११ ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

घट झूम रही अब सुरत रँगीली ।
पट घूम गई सुन शब्द छबीली ॥ १ ॥
उलट नैन तिल डाला पेली ।
जोत जगमगी झलके हेली ॥ २ ॥
सुन सुन धुन निरते† अलबेली ।
गगन मँडल चढ़ त्रिकुटी ले ली ॥ ३ ॥
धोय धोय निर्मल हुई मैली ।
छोड़ गई गुन तीन की फ़ेली‡ ॥ ४ ॥
सुन्न सरोवर गई अकेली ।
सिमट गई धुन में नहिँ फैली ॥ ५ ॥
महासुन्न चढ़ अद्भुत खेली ।
सत्तनाम धुन छिन में ले ली ॥ ६ ॥
शब्द पेड़ पर चढ़ी सुत बेली§ ।
नाम अगम गल डाली सेली ॥ ७ ॥

*दरवाज़ा । †नाचे । ‡करतूत । §लता, बेल ।

॥ शब्द नवाँ ॥

सुरत मेरी हुई शब्द रस माती ।
गुरु महिमा अब छिन २ गाती ॥१॥
धन्य गुरू जिन भेद लखाया ।
धुन अन्तर मन राती ॥२॥
राग रागिनी बाहर बाजें ।
यह सब तुच्छ बुझाती ॥ ३ ॥
निरत सखी को अगुवा करके ।
पल पल शब्द समाती ॥ ४ ॥
शब्द फोड़ सुन शब्द को जाती ।
माया ममता कूटत छाती ॥ ५ ॥
धुन धुन सिर अब काल पुकारे ।
यह सूरत मेरे हाथ न आती ॥ ६ ॥
पहुँची जाय सत्त दरबारा ।
अगम पुरुष का दर्शन पाती ॥ ७ ॥
हंसन साथ आरती गावे ।
अमी अहार सदा नित खाती ॥ ८ ॥
और नहीं कुछ कहने जोगी ।
राधास्वामी के बल बल जाती ॥ ९ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

सुरत अब जाना निज घर अपना ।
शब्द खोज हम पाया अपना ॥ १ ॥
जक्त अब भासा* हमको सुपना ।
छूट गया सब भर्म कल्पना† ॥ २ ॥
कहा करे ले जप और तपना ।
या में काल करे जग ठगना ॥ ३ ॥
सन्त भेद पर डाला ढकना ।
जीवन पाया बहुत भटकना ॥ ४ ॥
अब यामें कोइ कभी न अटकना ।
जैसे बने तैसे मन को झटकना ॥ ५ ॥
सुरत शब्द ले गगन सटकना§ ।
वहाँ जाय कर बहुत मटकना ॥ ६ ॥
करम धरम से दूर फटकना‡ ।
सतगुरु चरनन माहिँ लिपटना ॥ ७ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

गाओ री सखी जुड़ मंगल बानी ।
आज पिया मेरे दीन्ह निशानी ॥ १ ॥

*मालूम पड़ा । †ख़याल । §जाना । ‡अलग हो जाना ।

घट में घाट द्वार में चीन्हा ।
प्रेम पदारथ छिन छिन लीन्हा ॥ २ ॥
मन चढ़ चला छोड़ तन थाना ।
गगन महल पर उमँग समाना ॥ ३ ॥
तहँ से सुरत चली होय न्यारी ।
सुन्न नगर का शब्द पिछाना ॥ ४ ॥
क्या कहूँ महिमा बरनी न जाई ।
काल करम दोउ हुए दिवाना ॥ ५ ॥
मैं पिया की अपने सुध पाई ।
घाट घाट पर जोत जगाई ॥ ६ ॥
भागा तिमर हुआ उजियारा ।
चौक चाँदनी द्वार निहारा ॥ ७ ॥
सोभा महल कहाँ लग बरनूँ ।
कँगुरे कँगुरे सूर हज़ाराँ ॥ ८ ॥
आगे बाट चली नहिँ मेरी ।
राधास्वामी करो निबेड़ा ॥ ९ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

प्रेम भरी मेरी घट की गगरिया ।
छूट गई मो से मलिन नगरिया ॥ १ ॥

नौ दूतन मो से धूम मचाई ।
दसवें ने मोहिं खैंच चढ़ाई ॥ २ ॥
हंस मंडली फ़ौज लड़ाई ।
काल दुष्ट अब पीठ दिखाई ॥ ३ ॥
माया आई मोहिं लुभावन ।
कनिक कामिनी बान छुड़ावन ॥ ४ ॥
मैं भी उमँग नवीन सम्हारी ।
मार लिया दल उसका भारी ॥ ५ ॥
भागी माया छोड़ा देस ।
मैं सतगुरु को करूँ आदेस ॥ ६ ॥
सतगुरु पकड़ी अब मोरी बहियाँ ।
खैंच चढ़ाया गगन मँझइयाँ ॥ ७ ॥
धुन सुन कर अब भई निहाल ।
सत्तपुरुष मेरे दीन दयाल ॥ ८ ॥
दया करी मोहिं अङ्ग लगाई ।
चरन ओट गह सरन समाई ॥ ६ ॥
कोटि जन्म की ख़बर जनाई ।
जन्म मरन अब दूर नसाई ॥ १० ॥
प्रेम प्रीत का मिला ख़ज़ाना ।
जीत रीत गुरु शब्द पिछाना ॥ ११ ॥

शब्द पाय सत शब्द पुकारी ।
चली सुरत और निज धुन धारी ॥१२॥
राधास्वामी अन्तरजामी ।
गति उनकी कस करूँ बखानी ॥ १३ ॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

शब्द धुन सुनी असमानी ।
सुरत मेरी हुइ हैरानी ॥ १ ॥
बिहँग की चाल चलानी ।
मीन मत मारग जानी ॥ २ ॥
मकर के तार समानी ।
लक़ा ज्यों उलट दिखानी ॥ ३ ॥
गगन ज्यों धरन पिछानी ।
नाम फुलवार खिलानी ॥ ४ ॥
जोत में जोत मिलानी ।
जोत जोती सँग आनी ॥ ५ ॥
सुरत मेरी हुई निमानी ।
शब्द की लखी निशानी ॥ ६ ॥
नाम की हुई दिवानी ।
भेद अब करूँ बखानी ॥ ७ ॥

सुन्न की धुन दरसानी ।
मानसर किये अपनानी ॥ ८ ॥
सुरत अब अति हरखानी ।
गुप्त पद बात छिपानी ॥ ९ ॥
खोल कस कहूँ कहानी ।
अकह की सैन प्रमानी ॥ १० ॥
राधास्वामी अगम ठिकानी ।
चलो अब होय न हानी ॥ ११ ॥

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

अली री मथूँ निज पिंडा ।
राधास्वामी दीन्हा भेद अखंडा ॥१॥
प्रेम का धारूँ झंडा ।
गगन में फोड़ूँ अण्डा ॥ २ ॥
द्वार दल नाका खंडा ।
चढ़ी और लिया ब्रह्मण्डा ॥ ३ ॥
जगी वहँ जोत प्रचंडा ।
काल सिर मारा डंडा ॥ ४ ॥
बंक नल द्वार समानी ।
शब्द गुरु गही निशानी ॥ ५ ॥

सुन्न धुन लीन्ह सम्हारी ।
हंस संग कीन्ही यारी ॥ ६ ॥
सुरत की लागी तारी ।
शब्द घट हुइ उजियारी ॥ ७ ॥
महासुन तिमर दिखाना ।
पार हुइ भँवर समाना ॥ ८ ॥
सत्त पद अपना जाना ।
अलख गति अगम पिछाना ॥ ९ ॥
राधा यह कहत बखानी ॥
स्वामी निज कीन्ह प्रमानी ॥ १० ॥

॥ शब्द पंद्रहवाँ ॥

सुरत आज मगन भई ।
उन पाया शब्द का भेद ॥ १ ॥
धर्मराय अब सिर धुन मारे ।
मिटा कर्म का खेद ॥ २ ॥
जन्म मरन की त्रास नसाई ।
अहंमेव मन डाला छेद ॥ ३ ॥
अबिनाशी पद अगम निहारा ।
अमर पदारथ मिला अभेद ॥ ४ ॥

अबकी बार दाव हम पाया ।
लाल भई पद पाया सेत ॥ ५ ॥
नद बचाई जुग गुरु बाँधा ।
सत्तपुरुष पद धरी उमेद ॥ ६ ॥
चढ़ी सुरत और पिंड छिपाना ।
गही शब्द की टेक ॥ ७ ॥
खुला देस भंडार भक्ति का ।
सतगुरु दाता छिन छिन देत ॥ ८ ॥
मैं अति दीन दुखी जन्मन की ।
भूल गई दुख सब सुख लेत ॥ ९ ॥
धन्य धन्य अब भाग हमारा ।
निभ गइ अब के मेरी खेप ॥ १० ॥
गुरु किरपा और साध की संगत ।
सोया मनुवाँ जागा चेत ॥ ११ ॥
मूल मिला और भूल मिटाई ।
पाया बीज बृक्ष नापैद ॥ १२ ॥
राधास्वामी खेल दिखाया ।
हैरत हैरत हैरत हेत ॥ १३ ॥
अब क्या कहूँ कहन मैं नाहीं ।
अचरज भारी अद्भुत नेत ॥ १४ ॥

॥ शब्द सोलहवाँ ॥

सुखमन जाय मन हुलसाना ।
सतगुरु सँग कीन्ह पयाना ॥ १ ॥
चाँद सूर्य दोउ सम कर राखे ।
तब सतगुरु यौं कह कर भाखे ॥ २ ॥
अब सुन धुन होत नफ़ीरी ।
तेरी सुरत करूँ मैं अमीरी ॥ ३ ॥
तब सुन धुन अति हरषानी ।
महिमा नहिं जात बखानी ॥ ४ ॥
मैं आरत कीन्हा साजा ।
सतगुरु घट माहिं बिराजा ॥ ५ ॥
थाल सोसील धराया ।
सोमत की जोत जगाया ॥ ६ ॥
तन भीतर आरत फेरी ।
मन लीन्हा चहुँ दिस घेरी ॥ ७ ॥
अंबर का चीर पिन्हाया ।
सतगुरु अचरज रूप दिखाया ॥ ८ ॥
दरशन कर तिरपत आई ।
मन इंद्री तहाँ जमाई ॥ ९ ॥

अब जन्म सुफल कर लीन्हा ।
आरत फल ऐसा चीन्हा ॥ १० ॥
घट बाजे अनहद तूरा ।
पट खोला निरख ज़हूरा ॥ ११ ॥
अंतर हुई अजब सफ़ाई ।
गगना पर बजी बधाई ॥ १२ ॥
सुन और महासुन देखा ।
धुर अगम लोक लक पेखा ॥ १३ ॥
निज भेद अधर रस पाई ।
अस आरत राधास्वामी गाई ॥ १४ ॥

॥ शब्द सत्रहवाँ ॥

मुरलिया बाज रही ।
कोइ सुने संत धर ध्यान ॥ १ ॥
सो मुरली गुरु मोहिं सुनाई ।
लगे प्रेम के बान ॥ २ ॥
पिंडा छोड़ अण्ड तज भागी ।
सुनी अधर में अपूरब तान ॥ ३ ॥
पाया शब्द मिली हंसन से ।
खैंच चढ़ाई सुरत कमान ॥ ४ ॥

यह बंसी सतनाम बंस की ।
किया अजर घर अमृत पान ॥ ५ ॥
भँवरगुफा ढिंग सोहं बंसी ।
रीझ रही मैं सुन सुन कान ॥ ६ ॥
इस मुरली का मर्म पिछानो ।
मिली शब्द की खान ॥ ७ ॥
गई सुरत खोला वह द्वारा ।
पहुँची निज अस्थान ॥ ८ ॥
सत्तपुरुष धुन बीन सुनाई ।
अद्भुत जिन की शान ॥ ९ ॥
जिन जिन सुनी आन यह बंसी ।
दूर किया सब मन का मान ॥ १० ॥
सुरत सम्हारत निरत निहारत ।
पाय गई अब नाम निशान* ॥ ११ ॥
अलख अगम और राधास्वामी ।
खेल रही अब उस मैदान ॥ १२ ॥

॥ शब्द अट्ठारहवाँ ॥

बोल री राधा प्यारी बंसी ।
क्यों तरसावत जान ॥ १ ॥

* दूसरे एडिशन में " निशान " की जगह " निधान " है ।

तड़प रही मैं कारन तोरे ।
सतगुरु मर्म लखाया आन ॥ २ ॥
बिरह बान की बर्षा कीन्ही ।
खैंच लिये मन प्रान ॥ ३ ॥
हुई दिवानी मिली निशानी ।
लिया मर्म सब छान ॥ ४ ॥
खान पान तन सुध बिसराई ।
सुरत समानी तान ॥ ५ ॥
सुन सुन धुन अब सूर भई है ।
मारा काल निदान ॥ ६ ॥
राधास्वामी देस दिखाना ।
कौन जुगत से करूँ बखान ॥ ७ ॥

॥ शब्द उन्नीसवाँ ॥

गुरु नाम रसायन दीन्हा ।
दारिद्र हुआ सब छीना ॥ १ ॥
सुख रास मिली घट अंतर ।
धुन शब्द गही गगनन्तर ॥ २ ॥
सुख सागर ग़ोता मारा ।
भौसागर त्यागा भारा ॥ ३ ॥

धुन नाम मिले जहँ मोती ।
सूरत अब लड़ियाँ पोती ॥ ४ ॥
सिंगार किया सुत अपना ।
पति मिला छोड़ जग सुपना ॥ ५ ॥
अनहद धुन अजपा जपना ।
सुन सुन इस तन से हटना ॥ ६ ॥
कामादिक मन से तजना ।
गुरु शब्द माहिँ नित लगना ॥ ७ ॥
नभ द्वारा लागा फटने ।
लगी नींद भूख अब घटने ॥ ८ ॥
अमृत रस मिला अधर में ।
पहुँची अब सुन्न शिखर में ॥ ९ ॥
लीला अब देखी न्यारी ।
बर्नन सब करूँ सम्हारी ॥ १० ॥
रतनन के भरे ख़ज़ाने ।
अमृत के कुंड दिखाने ॥ ११ ॥
हीरों की खान खुलानी ।
लालन की देख निशानी ॥ १२ ॥
सूरज और चाँद अनंता ।
तारों का मंडल बंधता ॥ १३ ॥

रंभा जहँ गावे बानी ।
हंसन गति अजब कहानी ॥ १४ ॥
सुत देख देख हर्षानी ।
महिमा क्या कहूँ बखानी ॥ १५ ॥
यह भेद सार बतलाया ।
राधास्वामी सब दिखलाया ॥ १६ ॥

॥ शब्द बीसवाँ ॥

मौज इकधारी सतगुरु आज ।
कहूँ क्या कहते आवे लाज ॥ १ ॥
गगन में देखा अजब समाज ।
सुरत ने पाया अद्भुत साज ॥ २ ॥
सिंघ ने मारा गरजन गाज ।
मिरग* इक आया नभ में भाज ॥ ३ ॥
अमी रस चाखा छोड़ा नाज ।
सुरत गइ त्रिकुटी पाया राज ॥ ४ ॥
प्रेम का दुलहिन पाया दाज ।
सुन्न में दुलहा मिला अगाज ॥ ५ ॥
सुरत ने कीन्हा अपना काज ।
शब्द सँग कीन्हा आन समाज ॥ ६ ॥

* हिरन ।

गुरू ने दीन्ही इक आवाज़ ।
प्रेम की पाई बड़ी रिवाज ॥ ७ ॥
राधास्वामी सरन गही मैं आज ।
काज सब हो गया पूरा आज ॥ ८ ॥

॥ शब्द इक्कीसवाँ ॥

घूँघट खोल चली सुत दुलहिन ।
दुलहा शब्द मिला अब चढ़ सुन ॥१॥
करत बिलास एक हुई छिन छिन ।
देख रूप अब होत मगन मन ॥ २ ॥
लीला अद्भुत होत न बर्नन ।
अजब अखाड़ा रचा सेत धुन ॥ ३ ॥
काल पछाड़ा कीन्हा मरदन ।
माया ममता भागी सिर धुन ॥ ४ ॥
चली सुरत और पहुँची महासुन ।
सेज बिछाई जा चौथे खन ॥ ५ ॥
सत्तपुरुष सुख सुनी बीन धुन ।
अलख अगम को कीन्हा परसन ॥ ६ ॥
वहाँ से चली देख कुछ आगमन ।
राधास्वामी रूप निहारत द्दिगन॥७॥

देख देख फूली अब निज तन ।
कौन कहे वह गति राधास्वामी बिन ॥८॥

॥ शब्द बाईसवाँ ॥

सुरत अब चली ऐन* में पैन† ।
लखा जाय अचरज रूप अनैन ॥ १ ॥
त्याग गुन तीनों और दस धैन‡ ।
अधर में पहुँची पाया चैन ॥ २ ॥
कहूँ क्या घट की परखी सैन ।
चुका अब काल करम का दैन ॥ ३ ॥
खुले अब सुन में हिरदे नैन ।
समझ तब आये वहाँ के बैन ॥ ४ ॥
सुरत अब लागी वहाँ रस लेन ।
शब्द की परखी अद्भुत कहन ॥ ५ ॥
चाँद और सूरज गहे दोउ गहन ।
सुखमना लागी सूरत रहन ॥ ६ ॥
राधास्वामी सूरत कीन्ही पहन§ ।
दई मोहिं पदवी अब अति महन‖ ॥७॥

* आँख । † तेज़ । ‡ इन्द्री । § चौड़ी । ‖ बड़ी ।

॥ शब्द तेईसवाँ ॥

चमकन अब लागी घट में बिजली ।
यह घाट लखे कोइ सूरत बिरली ॥
सतगुरु ने दृष्टि करी मुझ पर अब सगली*।
तिल तोड़ लिया, नभ पार चढ़ी,
जहँ छाय रही, नित बदली ॥ १ ॥
दृग झाँक रही, स्रुत सूर भई
छेदा दल कदली ।
तन छोड़ चली, जड़ गाँठ खुली ।
अब पाय गई, अपना गुरु अदली ॥ २ ॥
धुन सार मिली, सुन धार चली,
पाया पद अमली† ॥
खोला सुन द्वारा, झाँका घर न्यारा,
डार लई चौकी अब सँदली‡ ॥ ३ ॥
बैठी घर जानी, धुन माहिं समानी ।
देख हंसन मँडली ।
पिया अमृत प्याला, घट हुआ उजाला,
छाँट दई माया सब गदली ॥ ४ ॥

* सब । † निर्मल । ‡ चंदन की ।

पद आदि मिली, धुन साथ रली,
बुधि दूर हुई कमली[*] ।
महासुन्न मिली, लख भँवर गली,
अब होय गई, सत पद अचली ॥ ५ ॥
लख अलख सही, घर अगम रही ।
कुल काल दली, फिर चाल चली,
पा कँवल कली ।
राधास्वामी चरन पर जा मचली ॥ ६ ॥

॥ शब्द चौबीसवाँ ॥

चढ़ो री घट देखो मौज भली ।
अमी[†] रस पाओ आज अली ॥ १ ॥
नाम धुन अंतर खूब खुली ।
खोई जमा मानो फेर मिली ॥ २ ॥
चढ़ गगन शिखर खुली बंक नली ।
त्रिकुटी में बैठी शब्द पिली ॥ ३ ॥
फिर वहाँ से पहुँची सुन्न गली ।
सुन में जा हंसन साथ रली ॥ ४ ॥

*मगली [पंजाबी ज़बान] । †दूसरे एडिशन में "अमी" की जगह "अगम" है

सब आध* बियाध† उपाध‡ टली।
कर्मन की रसरी अगिन जली ॥ ५॥
महाकाल जाल भी जार चली।
सोहं धुन पकड़ी मूर§ मिली ॥ ६ ॥
सतनाम लखा दुख दूर टली।
अलख अगम धुन चित्त खली|| ॥ ७ ॥
राधास्वामी चरन में आन हिली।
महिमा उन पाई सुरत घुली ॥ ८ ॥

॥ शब्द पच्चीसवाँ ॥

दमिनियाँ** दमक रही घट माहिँ।
धुबिनियाँ** धोय रही मल नाहिँ ॥१॥
रँगिनियाँ** रंग दई चटकाहिँ।
कँवल की खिल गइँ कलियाँ आहिँ ॥२॥
सुरतिया झूम रही मुसक्याहि।
तपनियाँ दूर भई मिली छाँहिँ ॥ ३ ॥
गगनियाँ फोड़ गई धुन पाहिँ।
निरतियाँ छान लई छकियाहिँ ॥ ४॥

* मन का दुख। † तन का दुख। ‡ बाहर का दुख याने लड़ाई, झगड़ा, सरदी, गरमी वग़ैरह। § जड़। || चुभी। ** सुरत।

ठगिनियाँ नाश भईं बल नाहिं ।
मगनियाँ मगन भईं सुन माहिं ॥ ५ ॥
सरनियाँ सरन पईं गुरु पाँय ।
धुनन की धुनियाँ धुन धुन लाय ॥६॥
गवनियाँ गान सुनावन जाय ।
कहनिया राधास्वामी नाम सुनाय॥७॥

॥ शब्द छब्बीसवाँ ॥

ख़िज़ाँ तज देखो मूल बहार ।
घूम चल देखो तिल का द्वार ॥ १ ॥
खिला जहँ अजब सदा गुलज़ार ।
पाँच रँग देखे पाँचों सार ॥ २ ॥
चमन जहँ नूरी खिले अपार ।
नूर की क्यारी निर्मल धार ॥ ३ ॥
उतरता अमी लखा हर बार ।
फूल रही अद्भुत जहँ गुलनार ॥ ४ ॥
सुरंगी सरवर भरे अपार ।
सुरत और शब्द करें जहँ प्यार ॥५॥
महल जहँ देखे खुले दुवार ।
नीलगूँ कँगुरे लगे क़तार ॥ ६ ॥

सैर यह देखी तन मन वार।
गुरू ने मौज दिखाई सार ॥ ७ ॥
मेहर से दूर हुए सब ख़ार।
तजा फिर मन ने निज अहंकार ॥८॥
गुरू मिल पहुँची गुरु दरबार।
पड़ी अब राधास्वामी चरन मँझार॥९॥

॥ शब्द सत्ताईसवाँ ॥

सुत पनिहारी सतगुरु प्यारी।
चली गगन के कूप॥ १ ॥
प्रेम डोर ले पनघट आई।
भरी गगरिया ख़ूब ॥ २ ॥
शब्द पिछान अमी रस पागी।
देखा अद्भुत रूप॥ ३ ॥
नगर अजायब मिला डगर में।
जहाँ छाँह नहिं धूप॥ ४ ॥
पहुँची जाय अगम पुर नामी।
दरस किया राधास्वामी भूप॥ ५ ॥

******

॥ बचन छत्तीसवाँ ॥

प्राप्ती शब्द और मुक़ामात की और बरनन आनंद और बिलास और महिमा सतगुरु की ।

॥ शब्द पहिला ॥

उमँड रही घट में घटा अपार ॥ टेक॥
चमक बीजली प्यार बढ़ावत ।
और घंटा झनकार ॥ १ ॥
शोभित अधर घाट सुत प्यारी ।
शब्द खुला भंडार ॥ २ ॥
देख रही जहँ कँवल कियारी ।
फूल रही फुलवार ॥ ३ ॥
यह अंतरगत खेल न देखे ।
भटके बारम्बार ॥ ४ ॥
कौन कहे बिन राधास्वामी ।
यह संतन मत सार ॥ ५ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

गोरी खिलीं श्याम दल कलियाँ ।
मन भँवर करत जहँ रलियाँ ॥ १ ॥
माया जहँ अधिक लगावत छलियाँ ।
सिध जोगी बहुत निगलियाँ ॥ २ ॥

मेरी गुरु मिल बात सम्हलियाँ ।
नाम बल सकल उपाधी टलियाँ ॥ ३ ॥
काल जहँ डारत सब को दलियाँ ।
मैं वहाँ शब्द सँग मिलियाँ ॥ ४ ॥
मैं चली गगन की गलियाँ ।
घट खोली अंतर नलियाँ ॥ ५ ॥
फिर शब्द गुरू में पिलियाँ ।
पहुँची सुन सेत कँवलियाँ ॥ ६ ॥
धुन सुनी अधिक निर्मलियाँ ।
गहे राधास्वामी चरन अमलियाँ* ॥ ७ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

शब्द सँग लगी सुरत की डोर ।
सुहागिन करे आरती जोड़ ॥ १ ॥
भौ सागर में तुलहा† बाँधा ।
जम के जाल लिये सब तोड़ ॥ २ ॥
प्रेम प्रीत घट थाली धारी ।
जोत जगाई मन को मोड़ ॥ ३ ॥
सुरत लगाई शब्द समाई ।
नित नित धुन में होती पोढ़‡ ॥ ४ ॥

* निर्मल । † तैरने को मल्लाह लोग फूस का बनाते हैं । ‡ मज़बूत ।

गगन द्वार धस ताला खोला ।
अनहद शब्द मचावत शोर ॥ ५ ॥
करम भरम सब दूर निकारे ।
सतगुरु घट में कीन्हा दौर* ॥ ६ ॥
जन्म जन्म का सोया मनुवाँ ।
जाग उठा सुन अनहद घोर ॥ ७ ॥
पिंजर छोड़ उड़ा पंखेरू ।
चला गगन की ओर ॥ ८ ॥
त्रिकुटी जाय शब्द फल पाया ।
छूटा मोर और तोर ॥ ९ ॥
सुन्न शिखर जा रैन बिहानी ।
उदय हुआ घट भोर ॥ १० ॥
सुन्न महासुन भँवरगुफा पर ।
सुरत चढ़ी सब नाके तोड़ ॥ ११ ॥
सत्त अलख और अगम ठिकाना ।
राधास्वामी धाम मिला चित चोर ॥ १२ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

गुरु चरन धूर हम हुइयाँ ।
तुम सुनो हमारी गुइयाँ ॥ १ ॥

* दौरा ।

क्या क्या सुख कहूँ गुसइयाँ ।
बिन भाग नहीं कोइ पइयाँ ॥ २ ॥
अब ध्यान कमान खिँचइयाँ ।
सुत बान चलावत गइयाँ ॥ ३ ॥
नभ शब्द निशान धरइयाँ ।
फोड़ा और आगे चलइयाँ ॥ ४ ॥
सत शब्द मिलाप करइयाँ ।
राधास्वामी धाम समइयाँ ॥ ५ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

सतगुरु मैं पूरे पाये ।
मन घाट लिया बदलाये ॥ १ ॥
सूरत ने शब्द जगाये ।
घट मोती चुन चुन खाये ॥ २ ॥
हंसन के जूथ दिखाये ।
मिल उन संग प्रेम लगाये ॥ ३ ॥
घाटी चढ़ बाटी धाये ।
फिर सुन्न शिखर चढ़ आये ॥ ४ ॥
सतलोक सुरत को लाये ।
फिर जोनी बास न आये ॥ ५ ॥

सत रूप अजब दरसाये ।
कोटिन रबि* चंद्र लजाये ॥ ६ ॥
हंसन छबि क्या कहूँ गाये ।
षोड़स† शशि‡ भान§ दिखाये ॥ ७ ॥
राधास्वामी कहत बुझाये ।
सुन सेवक अति हरखाये ॥ ८ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

सुरत अब धूम चली तन छोड़ निदान ।
चरन गुरु आन अड़ी गहि नाम ठिकान ॥१॥
धुन बाजे अनहद परख निशान ।
सतगुरु दई कुंजी क़ुफ़ल‖ खुलान ॥ २ ॥
सुन सागर झाँकी कर अस्नान ।
शब्द घट जागा सुरत समान** ॥ ३ ॥
पोढ़ भइ नभ में कँवल खिलान ।
जोत लख पाई तिल परमान ॥ ४ ।
काल की कला थकी अब जान ।
लखी गुरु मूरत शब्द पिछान ॥ ५ ॥
तीन गुन टारे छोड़ा थान ।
लखी मैं राधास्वामी अचरज शान ॥ ६ ॥

* सूरज । † सोलह । ‡ चन्द्रमा । § सूरज । ‖ ताला । ** समाई ।

रही नहिं अब कुछ जग की कान ।
गही अब राधास्वामी पूरन आन* ॥७॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

मन सोधो घट में शब्द संग ।
तज काम क्रोध और मोह रंग ॥ १ ॥
अब औसर पाया अजब ढंग ।
मिली देही उत्तम गुरू संग ॥ २ ॥
नित बचन सुनूँ मैं बिहँग अंग† ।
अब होत सफ़ाई मिटत ज़ंग‡ ॥ ३ ॥
क्या उपमा बरनूँ साध संग ।
निर्मलता पाई अंग अंग ॥ ४ ॥
तन दूत हुए सब आप तंग ।
घट भीतर लागी होने जंग§ ॥ ५ ॥
गुरु प्रेम समाना मिटे तरंग ।
गुन बिर्त हटाई चित अपंग ॥ ६ ॥
संत मिला हट श्याम रंग ।
धुन शब्द सुनाई भरम भंग ॥ ७ ॥
फिर निरत जगाई उड़ बिहंग ।
राधास्वामी पाये काल दंग ॥ ८ ॥

* हुक्म । † ऊँचे चढ़ कर । ‡ काई । § युद्ध ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

मौज करूँ अब घट में बैठ।
देवर* मारा मारा जेठ† ॥ १ ॥
खोली हाट अधर की पैंठ।
धुन को सुना गई वहाँ पैठ‡ ॥ २ ॥
चाँद सुरज दोउ देखे हेठ§ ।
सीस किया सतगुरु की भेंट ॥ ३ ॥
लोभ मोह सब डारे मेट।
पाप पुन्न सब सोये लेट ॥ ४ ॥
इंद्री भोग गये सब ऐंठ।
राधास्वामी मिल गये भारी सेठ ॥५॥

॥ शब्द नवाँ ॥

मेरे घट का दिया गुरु ताला खोल।
मैं सुनत रहूँ नित बाला बोल ॥ १ ॥
क्या कहूँ सुरत शब्द की तोल।
पहुँची जाय नाम के कोल‖ ॥ २ ॥
अधिक हुलास मिला जहँ चोल।
माया की सब निकसी पोल ॥ ३ ॥

* पिण्डी मन । † निज मन । ‡ ठहर गई । § नीचे । ‖ पास ।

का से कहूँ यह भेद अमोल ।
बिन गुरु कोइ न कहता खोल ॥ ४ ॥
जीव बिचारे डावाँ डोल ।
बिन गुरु भरे न मन का डोल ॥ ५ ॥
मैं बिरहिन मेरे हिरदे होल ।
काल चढ़ाई मुझ पर रौल* ॥ ६ ॥
मैं पकड़ी अब धुन की रोल ।
मार दिया सब माया ग़ोल† ॥ ७ ॥
जो गुरु भाखें मुझ से क़ौल‡ ।
मन मूरख सिर मारी धौल ॥ ८ ॥
कौन करे उस धुन का मोल ।
उस के आगे सभी कुबोल ॥ ९ ॥
बजे सुहावन घट में ढोल ।
सुन सुन बोझ गिरा हुइ हौल§ ॥१०॥
पाई यह धुन करी टटोल ।
पहिर लिया अब प्रेम पटोल‖ ॥११॥
अब नित झूलूँ गगन हिंडोल ।
राधास्वामी अमी पिलाया झकझोल ॥१२॥

* रौला, हल्ला । † समूह । ‡ वचन । § हलकी । ‖ वस्तर ।

॥ शब्द दसवाँ ॥

इन्द्री उलट लाओ अब तन में ।
मन को खैंच चढ़ाओ गगन में ॥ १ ॥
सुरत लगाओ जा उस धुन में ।
सहस कँवल चढ़ देखो सुन में ॥ २ ॥
जोत जगाय देख तू घन में ।
बंकनाल चढ़ पहुँच निर्गुन में ॥ ३ ॥
अक्षर लखो जाय दरपन में ।
महासुन्न चढ़ रहो अमन में ॥ ४ ॥
भँवरगुफा धुन पड़ी श्रवन में ।
देख रूप सतपुरुष अपन में ॥ ५ ॥
धुन सुन पहुँची अलख अगम में ।
राधास्वामी रूप बसा नैनन में ॥ ६ ॥
आरत करी गुरू चरनन में ।
पाय दया गुरु हुई मगन में ॥ ७ ॥
प्रेम प्रतीत लगी अब उन में ।
कहूँ कहा महिमा चुन चुन मैं ॥ ८ ॥
तन मन सीस करूँ अर्पन मैं ।
चरन सरन गहि गाऊँ गुन मैं ॥ ९ ॥

खोल न कहूँ भेद सबहिन में ।
नहीं समावत बचन रसन* में ॥ १० ॥
आनँद होत सदा छिन छिन में ।
राधास्वामी सँग अब करूँ रमन† में ॥११॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

सुरत को मिला ख़ज़ाना नाम ॥टेक॥
सुरत निमानी हुई दिवानी ।
दिया गुरू अस जाम ॥ १ ॥
उमँग उमँग कर नभ पर पहुँची ।
मिला निरंजन धाम ॥ २ ॥
आगे चली बंक पट खोला ।
मिला गुरू का नाम ॥ ३ ॥
सुन्न द्वार दसद्वार समानी ।
पाया अब आराम ॥ ४ ॥
महासुन्न से भँवरगुफा पर ।
जाय मिली सतनाम ॥ ५ ॥
अलख अगम से भेटा कीन्हा ।
राधास्वामी मिला मुक़ाम ॥ ६ ॥

* ज़बान, जिव्हा । † विलास ।

मनसा पूरन हो सब आई ।
रहा न कोई काम ॥ ७ ॥
उमँग बढ़ी सूरत में भारी ।
आरत करूँ मुदाम* ॥ ८ ॥
राधास्वामी मर्म लखाया ।
यह सब का अंजाम† ॥ ९ ॥
समझ बूझ कर भाख सुनाया ।
अब सब को यह दिया पयाम‡ ॥१०॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

उलट घट झाँको गुरु प्यारी ।
नैन दोउ तानो हो न्यारी ॥ १ ॥
देख नभ मंडल उजियारी ।
अनेकन चंद्र सूर तारी ॥ २ ॥
खिली जहँ पचरंग फुलवारी ।
नदी जहँ बहती इक भारी ॥ ३ ॥
लाल और मानिक पन्ना री ।
झालरें मोती लख झारी ॥ ४ ॥
झिल मिली दामिन चमकारी ।
दमक जहँ जोत लखी भारी ॥ ५ ॥

* हमेशा । † अन्त । ‡ संदेसा ।

सहसदल मध्य घनकारी ।
धुनन की होत झनकारी ॥ ६ ॥
सुना यह अनहद बाजा री ।
करे जहँ माया सिंगारी ॥ ७ ॥
ठगे बहु जोगी मुनि भारी ।
टिके मत आगे चल प्यारी ॥ ८ ॥
चढ़ो अब घाटी बंका री ।
निरख सब त्रिकुटी लीला री ॥ ९ ॥
गगन में परखो ओंकारी ।
गरज जस बादल गरजा री ॥ १० ॥
लाल जहँ सूरज दरसा री ।
मृदँग और मुँहचँग बजता री ॥ ११ ॥
तख़्त जहँ शाही बिछला री ।
त्रिलोकी नाथ बैठा री ॥ १२ ॥
जोगेश्वर ध्यान धारा री ।
परे इस शुद्ध माया री ॥ १३ ॥
ब्यास यह मत चलाया री ।
संत उस तान मारा री ॥ १४ ॥
राह बिच रहा अटका री ।
संत घर उस न पाया री ॥ १५ ॥

राम और कृष्ण औतारी ।
बशिष्ट और शंकराचारी ॥ १६ ॥
थके जहँ शेष नारद री ।
रहे जहँ सनक सारद री ॥ १७ ॥
बेद भी नेत कहता री ।
कँवलसुत* बिष्णु शिव हारी ॥ १८ ॥
साध सँग सुन्न में आ री ।
संत जहँ कहत दसद्वारी ॥ १९ ॥
अगम परकाश धुन न्यारी ।
ररार अक्षर परख सारी ॥ २० ॥
महासुन चल करो यारी ।
संत अब हुए अगुवा री ॥ २१ ॥
भँवर पर जा चढ़ी पारी† ।
सुनी धुन बाँसरी कारी ॥ २२ ॥
क़दम वहाँ से उठाया री ।
सत्त पद यही पाया री ॥ २३ ॥
अलख और अगम धाया री ।
आरती राधास्वामी गाया री ॥ २४ ॥

* ब्रह्मा । † दूसरे एड़िशन के पाठ में "प्यारी" है ।

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

घट में अब शोर मचाय रही ॥ टेक ॥
ऊँचे चढ़ी सुरत सुन घोरा ।
प्राण पिंड से छूट गई ॥ १ ॥
जीते मुक्ति मिली सतगुरु से ।
क्या कहुँ महिमा चुप्प रही ॥ २ ॥
घट में खेल पसारा अद्भुत ।
देखे ही परतीत भई ॥ ३ ॥
सुन सुन अचरज करती पहिले ।
बुद्धि ख़राबा भुगत रही ॥ ४ ॥
क्या क्या कहूँ बुद्धि की बिपता ।
करनी प्रेम बहाय दई ॥ ५ ॥
बिद्या बुद्धि चतुरता बैरिन ।
अहंकार में डूब रही ॥ ६ ॥
बिद्या बुद्धि चतुरता बैरिन ।
गुरु सेवा मन त्याग दई ॥ ७ ॥
भक्ति पदारथ महिमा जानी ।
सुरत चढ़ी और सुन्न गई ॥ ८ ॥
महासुन्न और भँवरगुफा की ।
लीला अद्भुत कौन कही ॥ ९ ॥

सत्तलोक सतपुरुष पियारा ।
रूप निहारा मगन भई ॥ १० ॥
अलख अगम और राधास्वामी ।
उन को देखत मौन रही ॥ ११ ॥

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

घट चमन खिला उजियारी ।
गुरु ज्ञान मिला अब भारी ॥ १ ॥
सुत नदी चली धधकारी ।
पहुँची जाय सिंध सम्हारी ॥ २ ॥
धुन अनहद निरत निरारी* ।
घंटा जहँ संख बजा री ॥ ३ ॥
मन पहरा द्वार लगा री ।
तस्कर सब दूर निकारी ॥ ४ ॥
दे सील क्षमा की बाड़ी ।
सत की फुलवार खिला री ॥ ५ ॥
धीरज का कूप खुदा री ।
जल प्रेम सींच रही क्यारी ॥ ६ ॥
भक्ती रस प्रीत पिया री ।
चढ़ गगन ग़ैब फल खा री ॥ ७ ॥

* निराली-[उर्दू पुस्तक और पहले छापे में पाठ "निरख निहारी" है]

दल कँवल सहस फुलवारी ।
पचरंगी रंग बहारी ॥ ८ ॥
नौबत जहँ बजती न्यारी ।
खुल खेली सुरत हमारी ॥ ९ ॥
सुन में चढ़ धुन लइ सारी ।
किंगरी गति अगम बिचारी ॥ १० ॥
गइ महासुन्न पद पारी ।
जहँ बंसी बजत करारी ॥ ११ ॥
सतनाम मिला पद चारी ।
गति अलख अगम घर धारी ॥ १२ ॥
राधास्वामी चरन सम्हारी ।
पाई गति आज अपारी ॥ १३ ॥
कर आरत हुइ गुरुप्यारी ।
घर अजर अमर पाया री ॥ १४ ॥
सुत सारंग दूर चला री ।
हद बेहद पार सिधारी ॥ १५ ॥
ज्ञानी थक जोग थका री ।
स्रुत सिम्रत पार न पा री ॥ १६ ॥
संतन मत ऊँच निकारी ।
मानी जिन भाग बड़ा री ॥ १७ ॥

ब्रत तीरथ जत्त पचा री ।
जप तप में बृथा खपा री ॥ १८ ॥
बिद्या पढ़ मान अहारी ।
तिरपत निहिँ बुद्धि बिगाड़ी ॥ १९ ॥
भक्ती और प्रेम गया री ।
दासातन अब न रहा री ॥ २० ॥
घट में क्योँ जाय चढ़ा री ।
मन हुआ सुतंतर भारी ॥ २१ ॥
मनमुखता अजब सँवारी ।
गुरुमुखता दूर निकारी ॥ २२ ॥
राधास्वामी कहत पुकारी ।
हे सतगुरु लेव सम्हारी ॥ २३ ॥
इन से मोहिँ लेव बचारी ।
यह रूखे प्रेम न धारी ॥ २४ ॥
मैं राधास्वामी सरन पड़ा री ।
तुम रक्षा करो हमारी ॥ २५ ॥

॥ शब्द पंद्रहवाँ ॥

सूरत सरकत पार, बार त्याग देही तजत ।
घट का घोर सुनाय, रात दिवस लागी रहत ॥ १ ॥

नाम अमोलक पाय, गगन गिरा गरजी चलत ।
धाम लिया सत जाय, पुरुष दरस पाई सुरत ॥२॥
मेरे गृह अति रंग, बोलत मोर पपीहरा ।
स्वाँती बरसत अंग, मेघ बरस तन मन हरा ॥३॥
ज्यों हरियावल भूम, खोल दृष्टि देखत रहूँ ।
बिच २ उठत तरंग, मन तन सीतलता सहूँ ॥४॥
खोलत बज्र किवाड़, सुरत जहाँ टकलावई ।
सतगुरु लिया सम्हार सुरत शब्द सँग न्हावई ॥५॥
झूलत गगन हिंडोल सखियाँ निकट झुलावहीं ।
मैं अब किया सिंगार, पिया रिझावत धावहीं ॥६॥
अब आरत घट धार, अंतर पट खोलत चली ।
दीपक जोत सम्हार, सूर चाँद गगना गली ॥७॥
गावत राग मलार, धुन अनहद सोभा अधिक ।
होत जहाँ झनकार, ढोल दमामा अति धमक ॥८॥
बिन सतगुरु परताप, यह लीला नहिं को लखे ।
देखें गे निज दास, पी पी अमृत नित छके ॥९॥
पूरन पद बिश्राम, सेत पदम पर जा चढ़ी ।
राधास्वामी नाम, गावत है सन्मुख खड़ी ॥१०॥

॥ शब्द सोलहवाँ ॥

गुमठ चढ़ो मन बरजतो ।
काल अटक तुड़वाय ॥ १ ॥
गुरु पासा* अद्भुत लिया ।
गति मति कही न जाय ॥ २ ॥
बोलत तूती† अधर में ।
तोता‡ दिया है जगाय ॥ ३ ॥
देस बिराना छुट गया ।
पिँजरा दूर पराय ॥ ४ ॥
खुला उड़े आकाश में ।
तूती संग मिलाय ॥ ५ ॥
महल अजब गत चाँदना ।
सूरज ना ठहराय ॥ ६ ॥
धुन धधकार अनाहदी ।
बिरले गुरमुख पाय ॥ ७ ॥
लख तिरबेनी घाट को ।
ता में पैठ अन्हाय ॥ ८ ॥
सुन समाध जा को मिली ।
अनहद माहिं समाय ॥ ९ ॥

* तरफ़ । † धुन । ‡ मन ।

अमी बरस बुँदियन झड़ी ।
रसिया रहे लुभाय ॥ १० ॥
राधास्वामी चाखकर ।
बर्नन किया बनाय ॥ ११ ॥

*****

॥ बचन सैंतीसवाँ ॥

दशा सुरत और मन की और प्राप्ती शब्द
की और शुकराना सतगुरु का ।

॥ शब्द पहिला ॥

गुरु ने अब दीन्हा भेद अगम का ।
सुरत चली तज देश भरम का ॥ १ ॥
बल पाया अब बिरह मरम का ।
भटकन छूटा दैरो* हरम† का ॥ २ ॥
बर्षन लागा मेघ करम का ।
संशय भागा जनम मरन का ॥ ३ ॥
तोड़ दिया सब जाल निगम का ।
सुख पाया अब हम दमदम का ॥४॥
फल पाया आज हम सम दम का ।
भँवर हुआ मन सेत पदम का ॥ ५ ॥

* मन्दिर । † मक्का ।

फूँक दिया घर लाज शरम का ।
काटा फंदा नेम धरम का ॥ ६ ॥
ज्ञान ध्यान बाचक हम छोड़ा ।
भक्ति भाव का पहिना जोड़ा ॥ ७ ॥
भक्ति भाव की महिमा भारी ।
जानेंगे कोइ संत बिचारी ॥ ८ ॥
सत्तनाम सतपुरुष अपारा ।
चौथे माहिँ करें दरबारा ॥ ९ ॥
सुरत शब्द मारग कोइ पावे ।
सो हंसा चढ़ लोक सिधावे ॥ १० ॥
सो मारग अब राधास्वामी गाई ।
कोइ कोइ प्रेम भक्ति से पाई ॥ ११ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

गुरु मारा बचन का बान ।
मेरा गया कलेजा छान ॥ १ ॥
मैं सुनी सुन्न की तान ।
मर गये काल के मान ॥ २ ॥
तन छूट गया अभिमान ।
मैं करी शब्द पहिचान ॥ ३ ॥

मुरदे के पड़ गई जान ।
मेरी करे न कोई हान ॥ ४ ॥
मुझे सतगुरु दीन्हा दान ।
मैं पहुँची अधर अमान ॥ ५ ॥
मेरी सुरत चढ़ी खरसान ।
मैं मारा काल निदान ॥ ६ ॥
मैं किया अमी रस पान ।
घट खुली रतन की खान ॥ ७ ॥
क्या महिमा करूँ बखान ।
अचरज का खेल दिखान ॥ ८ ॥
मैं पाया नाम निशान ।
अब झूठा लगा जहान ॥ ९ ॥
मेरा छूटा आवन जान ।
मुझे मिला शब्द परमान ॥ १० ॥
जग फिरे भरमता खान ।
कोइ सुने न अनहद कान ॥ ११ ॥
कोइ करे न गुरु की कान ।
घर घेर लिया शैतान ॥ १२ ॥
अब करो जीव कल्यान ।
धरो राधास्वामी ध्यान ॥ १३ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

गुरू मोहिं दीन्ही अमृत रास ।
बुझी मेरी जन्म जन्म की प्यास ॥ १॥
सुरत अब चढ़ गई फोड़ अकाश ।
मिली जाय शब्द लखा परकाश ॥ २॥
जगत की छूटी सब ही आस ।
गई अब तृष्णा बल हुआ नास ॥ ३ ॥
काल मोहिं देखत करे तिरास ।
कर्म भी भागा छोड़ा बास ॥ ४ ॥
दूर की बस्तु मिली मोहिं पास ।
छुटी तन मन से हुई निरास ॥ ५ ।
गई अमरापुर किया निवास ।
गाऊँ गुरु महिमा स्वाँसो स्वाँस ॥ ६ ॥
हुई मैं राधास्वामी चरनन दास ।
ज्ञानी और जोगी खोदें घास ॥ ७ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

घोर सुन चढ़ी सुरत गगना ।
भेद लख हुई अजब मगना ॥ १ ॥
रूप उन पाया अब अपना ।
जगत हुआ झूठा ज्यों सुपना ॥ २ ॥

चली अब गुरु पद सो लखना ।
काल पर पड़ा कठिन तपना ॥ ३ ॥
कर्म का छूट गया खपना ॥
सहज सुख मिला शब्द लखना ॥ ४ ॥
मेट मन कपट छुटा ठगना ।
अमर पद मिला जुगन जुगना ॥ ५ ॥
टेक गुरु बाँध ध्यान धरना ।
चरन गुरु पकड़ पड़ो सरना ॥ ६ ॥
सहसदल कँवल जाय लगना ।
तिरकुटी चढ़ो चाल पकना ॥ ७ ॥
सुन्न में नहीं मैल रूपना ।
मान लो राधास्वामी गुरु कहना ॥ ८ ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

नाम रस लगी होय न्यारी ।
सुरत के लगी अब बिरह करारी ॥१॥
मन बैठा सोग बिसारी ।
जिव छोड़ी कल संसारी ॥ २ ॥
क्या कहूँ मिले गुरु भारी ।
उन भेद दिया पद चारी ॥ ३ ॥

मैं पिऊँ शब्द रस सारी ।
मेरे लगा ज़ख़म अब कारी ॥ ४ ॥
मन तन पर फिरती आरी ।
क्यों जीऊँ जिवना हारी ॥ ५ ॥
तब दया करी गुरु न्यारी ।
अब दीन्हा शब्द सम्हारी ॥ ६ ॥
मैं चढ़ गई गगन अटारी ।
वहाँ खेलूँ नित्त शिकारी ॥ ७ ॥
धुन सुन कर बहुत पुकारी ।
चढ़ भागी खोल किवाड़ी ॥ ८ ॥
राधास्वामी चरन निहारी ।
लख पाया भेद अपारी ॥ ९ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

गुरु की गति अगम अपार ।
मैं कैसे बरनूँ पार ॥ १ ॥
सतगुरु मोहिं अंग लगाया ।
सतगुरु मोहिं नाम दृढ़ाया ॥ २ ॥
बैरागिन भइलो सतगुरु चरना ।
अनुरागन भइलो नाम अनामा ॥ ३ ॥

सतगुरु मेरे दया बिचारी ।
भौजल से पार उतारी ॥ ४ ॥
ब्रह्मण्डी खेल दिखाया ।
अनहद धुन तार बजाया ॥ ५ ॥
घट तिमर पुराना नाशा ।
शब्द उजास किया परकाशा ॥ ६ ॥
गुरु ऊपर बल बल जाऊँ ।
राधास्वामी नाम धियाऊँ ॥ ७ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

मैं भई अगम की दासी ।
मेरी सुरत हुई अबिनाशी ॥ १ ॥
मैं शब्द किया घट मंजन ।
मन हारा डरा निरंजन ॥ २ ॥
जोती अब चरन पखारे ।
संतन की ओट पुकारे ॥ ३ ॥
गुरु दया अनोखी कीन्ही ॥
मोहिं चरन सरन गति दीन्हीं ॥ ४ ॥
तन भीतर उलटी धाई ।
राधास्वामी हुए सहाई ॥ ५ ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

सुत भरी अगम जल गगरी ।
मैं देखी राधास्वामी तेरी नगरी ॥ १ ॥
मेरी प्रीत लगी अब जिगरी ।
मैं चढ़ी गगन की डगरी ॥ २ ॥
मेरी दूर हुई ममता अब सगरी* ।
मैं पहुँची सतगुरु मग री ॥ ३ ॥
गुरु कहा शब्द जा पग† री ।
हंगता की उतरी पगड़ी ॥ ४ ॥
माया की इज्जत बिगड़ी ।
राधास्वामी चरन तू तक री ॥ ५ ॥

॥ शब्द नवाँ ॥

गुरु नाम रटूँ अँग २ से ।
गुरु आरत करूँ उमँग से ॥ १ ॥
मैं रँगी प्रेम के रँग से ।
दुख दूर हुए दिल तँग से ॥ २ ॥
मैं छूटी जक्त कुसँग से ।
मन शोभित नाम सुरँग से ॥ ३ ॥

* माया । † मिल ।

मैं हटी नाम और नँग से ।
मैं तरी आज गुरु सँग से ॥ ४ ॥
मेरा काज किया गुरु ढँग से ।
मैं पहुँची चाल बिहँग से ॥ ५ ॥
मैं जीती काल निहँग* से ।
मैं मिली जाय ओअं से ॥ ६ ॥
अब निकसी जाल उचँग से ।
सुत साफ़ हुई कुल ज़ँग से ॥ ७ ॥
सुत लगी जाय सोहं से ।
राधास्वामी छुड़ाया अहं से ॥ ८ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

गुरु चरन प्रीत मन रंगा ।
अब सब से हुई असंगा ॥ १ ॥
मन सारा संशय भंगा ।
चित शुद्ध हुआ अब चंगा† ॥ २ ॥
अब मिटा काल का दंगा ।
डर रहा न नाम और नंगा‡ ॥ ३ ॥
आरत अब सजूँ असंगा ।
मेरे प्रेम भरा अँग अङ्गा ॥ ४ ॥

* मगर । † अच्छा । ‡ लाज ।

मेरी परखे न कोइ उमँगा ।
मैं पकड़ा सतगुरु संगा ॥ ५ ॥
मैं भौजल पार उलंघा ।
मेरी सुरत उड़ी जस चंगा* ॥ ६ ॥
मैं घट में न्हाया गङ्गा ।
मैं छोड़ा मन परसंगा† ॥ ७ ॥
मन घोड़ा बाँधा तंगा ।
अब मिट गइ ममता धंगा ॥ ८ ॥
सब मेटी चित्त उचंगा ।
हो जाली जस जोत पतंगा ॥ ९ ॥
गुरु चरन मिला आलंबा§ ।
सतगुरु का सीखी ढंगा ॥ १० ॥
गुरु चरन प्रेम मैं संगा‖ ।
राधास्वामी दीन्ह उतंगा ॥ ११ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

मन बनियाँ बनत बनाई ।
घट भीतर तोल तुलाई ॥ १ ॥
नैनन के पलड़े धारे ।
सुत निरत डोर गठिया रे ॥ २ ॥

* पतंग । † साथ । ‡ अहंकार । § सहारा । ‖ माँग ।

नभ डंडी पकड़ धरा रे ।
सुखमन का फुंदन लगा रे ॥ ३ ॥
जहँ शब्द जिन्स तोला रे ।
मैं पाया आज नफ़ा रे ॥ ४ ॥
गुरु कीन्ही दात अपारे ।
अस बनिज किया जग आ रे ॥ ५ ॥
मेरी हटिया माल भरा रे ।
मैं करूँ यही व्योपारे ॥ ६ ॥
मोहिं बाँट मिले गुरुद्वारे ।
मैं तोलूँ बस्तु सम्हारे ॥ ७ ॥
मेरे सतगुरु शाह पियारे ।
मेरी साख बढ़ी सब ठारे ॥ ८ ॥
राधास्वामी खरा करा रे ।
खोटा घट दूर निकारे ॥ ९ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

गुरु का मैं दामन पकड़ा ।
छोड़ूँ नहिं अब तो जकड़ा ॥ १ ॥
तू मत कर मुझ से रगड़ा ।
मैं छोड़ा जग का झगड़ा ॥ २ ॥

मैं मारा मन और पकड़ा।
मेरे गुरू ने किया मोहिँ तकड़ा* ॥ ३ ॥
मैं छोड़ा काया छकड़ा† ।
फिर कर्म द्वार से निकरा ॥ ४ ॥
मैं मारा मन का मकड़ा।
तब काल देख बहु अकड़ा ॥ ५ ॥
अब कटा क्रोध का लकड़ा।
और मरा लोभ का बकरा ॥ ६ ॥
मैं देखा गगन दमकड़ा‡ ।
राधास्वामी नाम चमकड़ा ॥ ७ ॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

गुरू मोहिँ भेद दिया पूरा।
सुरत सँग बाजा घट तूरा ॥ १ ॥
हुआ मन तन में अब सूरा।
लखूँ मैं नभ चढ़ शशि सूरा ॥ २ ॥
खुला अब घाट अगम नूरा।
हटाया काल करम दूरा ॥ ३ ॥
दिखाया राधास्वामी पद मूरा।
तियागा जक्त लगा कूड़ा ॥४॥

* बलवान। † गाड़ी। ‡ चमकीला।

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

मैं सुनूँ कथा नित घट की ।
गुरु भेद दिया धुन में अब अटकी ॥१॥
अब सुरत चढ़ी पहुँची नभ सटकी ।
मेरी फूट गई कर्मन की मटकी ॥ २ ॥
फिर काम क्रोध डारे सब पटकी ।
सुत सहसकँवल चढ़ झटकी* ॥ ३ ॥
मन माया धर धर झटकी† ।
आसा और तृष्णा जग की पटकी ॥४॥
गुरु ख़बर जनाई अंतर पट की ।
सुत जग से छिन छिन हटकी ॥ ५ ॥
गुरु की मति धारी दुर्मत खटकी‡ ।
सुत मगन हुई धुन सुन सर तट की ॥६॥
मन खेली कला उलट ज्यों नट की ।
राधास्वामी गाई गति उलट पलट की ॥७॥

॥ शब्द पन्द्रहवाँ ॥

सोच ले प्यारी अस मिला जोग ।
गुरु दया करी सब मिटे रोग ॥ १ ॥

* चढ़ाई । † गिराई । ‡ अलग हुई ।

सुत मिली शब्द से तज बियोग ।
यह मिला भाग से सहज जोग ॥ २ ॥
गुरु बिन कब मिलता अस सँजोग ।
अब करले निस दिन शब्द भोग ॥ ३ ॥
मन की मति त्यागी गया सोग ।
राधास्वामी किरपा करी जोग* ॥ ४ ॥
जो होना था सो हुआ होग ।
को सुने हमारी भूले लोग ॥ ५ ॥

॥ शब्द सोलहवाँ ॥

गुरू ने मोहिं दीन्हा नाम सही ।
तृष्णा सकल दही ॥ १ ॥
सतसँग करूँ सार रस पीऊँ ।
दृढ़कर नाम गही ॥ २ ॥
गुरु की महिमा कही न जावे ।
चरनन पकड़ रही ॥ ३ ॥
जिस पर दृष्टि पड़ी मेरे गुरु की ।
सोई पार गई ॥ ४ ॥
धारा शब्द चली नित आवे ।
कूड़ा कर्म बही ॥ ५ ॥

---
* लायक़ ।

काल टार मन मार निकारा ।
सहज सुहाग दई ॥ ६ ॥
मैं प्यारी सतगुरु अपने की ।
सत्तनाम की लार लई ॥ ७ ॥
घर को छोड़ अधर चढ़ चाली ।
सुरत हंसनी आज भई ॥ ८ ॥
काम क्रोध मद लोभ बिडारे ।
ममता खोय गई ॥ ९ ॥
धुर पद पहुँच शब्द सँग पागी ।
मान ईर्षा सकल दही ॥ १० ॥
राधास्वामी नाम दिवानी ।
अस्तुत कौन कही ॥ ११ ॥

॥ शब्द सत्रहवाँ ॥

आले में देखा ताक उजाला ॥ टेक ॥
सेत दीप में श्याम किवाड़ी ।
सो मैं खोला ताला ॥ १ ॥
घट में जाय गगन में पैठी ।
पिया अमी रस प्याला ॥ २ ॥

चढ़ा अमल घट भीतर भूमी ।
भूमी* भार निकाला ॥ ३ ॥
अद्भुत ख़याल दिखाया गुरु ने ।
मन मौजी का किया निवाला† ॥ ४ ॥
चढ़ कर खोली सुन्दर खिड़की ।
झाँका गगन शिवाला ॥ ५ ॥
मूरख जीव जक्त में भटकें ।
पूजें ईंट दिवाला ॥ ६ ॥
सतगुरु के हम चरन पखारे ।
सुन्न नगर में फेरें माला ॥ ७ ॥
तसबी माला कसबी डाला ।
हम तो दूर निकाला ॥ ८ ॥
सतगुरु पूरे पाये हम ने ।
हम निज नाम सम्हाला ॥ ९ ॥
राधास्वामी गुरू हमारे ।
वे हैं दीनदयाला ॥ १० ॥
काल जाल से तुरत निकाला ।
कीन्हा मोहिं निहाला ॥ ११ ॥

* धरती याने देह । † ग्रास ।

॥ शब्द अट्ठारहवाँ ॥

सुरत ने शब्द गहा निज सार ।
आज घट कुल का हुआ उधार ॥ १ ॥
नाम का पाया रंग अपार ।
जीव ने धरा हंस औतार ॥ २ ॥
दूध और पानी कीन्हा न्यार ।
दूध फिर पीया तन मन वार ॥ ३ ॥
छोड़िया पानी बिपत बिडार ।
नित्त मैं पीती रहूँ सुधार ॥ ४ ॥
काल को डाला बहुत लताड़ ।
चरन गुरू पकड़े आज सम्हार ॥ ५ ॥
नाम सँग हो गइ सूरत सार ।
मानसर न्हाई मैल उतार ॥ ६ ॥
चुगूँ मैं मोती शब्द बिचार ।
गुरू ने खोला घाट दुवार ॥ ७ ॥
धुनन को छाँट लिया मन मार ।
घाट घट भीतर पड़ी पुकार ॥ ८ ॥
नाम गुरु लीन्हा मोहिं निकार ।
छोड़िया सारा जक्त लबार ॥ ९ ॥

किया अब राधास्वामी जक्त उधार ।
जिऊँ मैं राधास्वामी चरन पखार ॥१०॥

॥ शब्द उन्नीसवाँ ॥

मालिनी लाई हरवा गूँथ ।
पिरेमिन डाले फुलवा जूँथ ॥ १ ॥
गुरन से पाई नाम बिभूत* ।
आरती जोड़ी लागा सूत ॥ २ ॥
हुआ मन गगन माहिँ अवधूत ।
करे अस सेवा होय सपूत ॥ ३ ॥
भगाये गुरु ने घट के दूत ।
चरन गुरु पकड़े अब मज़बूत ॥ ४ ॥
काल को डाला छिन छिन कूट ।
मोह दल भागा लीन्हा लूट ॥ ५ ॥
गया सब तन से नाता टूट ।
काल बल डाला सब ही कूत† ॥ ६ ॥
गुरू ने दीन्हा अमृत क़ूत‡ ।
राधास्वामी दूर किया कलबूत§ ॥७॥

* बड़ी कला । † तौल । ‡ अहार । §देह से ।

॥ शब्द बीसवाँ ॥

दिखाया रूप मनोहर गुरू ने ।
मेरी दृष्टि खुली पहुँची धुर घर में ॥१॥
निज भेद दिया सतगुरू ने ।
धुन धसक सुनी नभपुर में ॥ २ ॥
मेरे हरष हुई अति उर में ।
मैं उलट चली अब सुर* में ॥ ३ ॥
चढ़ घोर सुना अन्दर में ।
मैं झाँकी जा मंदिर में ॥ ४ ॥
मैं पाई मौज सुन्दर में ।
गुरू चरन धरे अब सिर में ॥ ५ ॥
मैं धाई सुन्न सिखर में ।
अब पाये पुरुष अजर में ॥ ६ ॥
लग राधास्वामी हुई अमर मैं ।
मैं न्हाई अमी नहर में ॥ ७ ॥

॥ शब्द इक्कीसवाँ ॥

धुबिया गुरू सम और न कोय ।
चदरिया धोई सूरत जोय† ॥ १ ॥

* धुन । † स्त्री ।

मैल सब काढ़ा निर्मल होय ।
कहूँ क्या गुरु की महिमा सोय ॥ २ ॥
घाटपर बैठे दीखे मोहिं ।
सुरत मैं डारी चरन समोय ॥ ३ ॥
धार अब आई कसमल* खोय ।
चटक कर दीन्ह चदरिया धोय ॥४॥
शब्द सँग लागी प्रेमी होय ।
भेद राधास्वामी पाया गोय† ॥ ५ ॥

॥ शब्द बाईसवाँ ॥

चलो री सखी अब आलस छोड़ ।
सुनो अब चढ़ कर घट मैं घोर ॥ १ ॥
काल जो देवे कुछ झकझोर ।
भुजा उस डारो तुरत मरोड़ ॥ २ ॥
दया गुरु सुन लो घट का शोर ।
अमी रस पीवो नभ मैं जोर ॥ ३ ॥
बोल जहँ परखो दादुर मोर ।
मेघ जहँ गरजत घोरम घोर ॥ ४ ॥
शब्द धुन परखी सूरत जोड़ ।
करम का कलसा डाला फोड़ ॥ ५ ॥

* मैल । † गुप्त ।

द्वार अब खोला ताला तोड़।
मिला भंडार अगम का मोर* ॥ ६ ॥
भगाये घट के सब ही चोर।
गही मैं निज धुन की अब डोर ७ ॥
राधास्वामी डारा मन को तोड़।
चरन में परसे दोउ कर जोड़ ॥ ८ ॥

॥ शब्द तेईसवाँ ॥

सूरमा सुरत हुई गुरु देख प्रताप ॥ टेक॥
सुरत शब्द की करूँ कमाई।
पाऊँ अपना आप ॥ १ ॥
गगन मँडल अब झाँकन लागी।
कर कर सूरत साफ़ ॥ २ ॥
चढ़ी अधर में देख उधर में।
परमातम को आतम पात ॥ ३ ॥
करम कटाने भरम नसाने।
जनम जनम के छूटे पाप ॥ ४ ॥
सुन्न सिखर पर पहुँची सूरत।
करती अजपा जाप ॥ ५ ॥

* मुझे।

अजब धाम पाया मैं सजनी ।
कौन करे यहँ तोल और नाप ॥ ६ ॥
राधास्वामी खेल दिखाया ।
वोही हैं मेरे मा और बाप ॥ ७ ॥

॥ शब्द चौबीसवाँ ॥

कुमतिया दूर हुई, गुरु हुए दयाल ।
सुमतिया दान दई, गुरु किया निहाल ॥१॥
सरन गुरु आन लई, तज मन का जाल ।
मूल को पकड़ लिया, तज डाली डाल ॥२॥
नाम धन पाय गई, तज झूठा माल ।
गुरू सँग लाग रही, देख अचरज ख़्याल ॥३॥
परम पद पाय गई, चढ़ सुखमन नाल ।
भर्म सब काट दिये, और सारा काल ॥४॥
काल अब थकित हुआ, अब पाया हाल ।
राधास्वामी दूर किये, मेरे सब दुख साल ॥५॥

॥ शब्द पच्चीसवाँ ॥

सुरत उठ जागी चरन सम्हार ।
गुरू सँग लागी रूप निहार ॥ १ ॥

* अंतर की हालत ।

बचन सुन त्यागी मनसा ख़्वार ।
सुरत हुई रागी शब्द सम्हार ॥ २ ॥
अमीरस पीवत नभ के द्वार ।
छोड़ कर भागी जक्त लबार ॥ ३ ॥
पकड़ कर आई गुरु दरबार ।
सरन गह बैठी तन मन वार ॥ ४ ॥
हंस होय चुगती मुक्ता सार ।
नाम रस पागी सूरत नार ॥ ५ ॥
काल सँग तोड़ा नाता झाड़ ।
दयाल घर पहुँची सतगुरु लार ॥ ६ ॥
मिले राधास्वामी किरपा धार ।
छुटे सब संशय गया संसार ॥ ७ ॥

॥ शब्द छब्बीसवाँ ॥

मंगल मूल आज की रजनी ।
महिमा कहूँ कौन सुन सजनी ॥ १ ॥
आनँद छाय रहा नभ धरनी ।
रोम रोम अमृत रस भरनी ॥ २ ॥
तिमर हटावन धारे चरनी ।
रूप सुहावन पाइ मैं सरनी ॥ ३ ॥

अमी धार लागी अब भिरनी ।
सुरत निरत लागी घट घिरनी ॥ ४ ॥
गगन मँडल लागी अब चढ़नी ।
बिन गुरु कौन करे यह करनी ॥ ५ ॥
ता ते सरन गुरू की पड़नी ।
मिर्ग टले और भागी हिरनी ॥ ६ ॥
भान मध्य पहुँची जा किरनी ।
सुरत अड़ी जा अब नहिं गिरनी ॥७॥
राधास्वामी भेद दिया कर निरनी ।
मैं नहिं उन चरनन से फिरनी ॥ ८॥

॥ शब्द सत्ताईसवाँ ॥

सोभा देखूँ मैं अब गुरु की ।
नैन निहारूँ खिड़की धुर की ॥ १ ॥
ख़बर जनाऊँ फिर सुर* सुर* की ।
जान गई गति अब उर उर की ॥ २ ॥
मो को कहैं सखी दुरदुर† की ।
मैं गही टेक गुरु गुरु की ॥ ३ ॥
राधास्वामी गति गाई ऊपर की ।
सुरत तजी मैं इस मरपुर‡ की ॥ ४ ॥

* धुन । † फटकार । ‡ मृत्युलोक ।

॥ शब्द अट्ठाईसवाँ ॥

दौड़त गई गगन के घेर ।
तन को छोड़ लिया मन फेर ॥ १ ॥
जहँ शब्द अनाहद लीन्हा हेर ।
ज़ीना* चढ़कर सुनी इक टेर ॥ २ ॥
काल करम दोउ कीन्हे ज़ेर ।
चढ़ आई मैं आज सुमेर ॥ ३ ॥
धुन पाई मैं अब अति नेर† ।
जल्दी करी लगी नहिँ देर ॥ ४ ॥
गीदड़ से गुरु कीन्हा शेर ।
हेर हेर धुन घट मैं हेर ॥ ५ ॥
छोड़ी मन की सभी लगेड़ ।
सुरत हुई अब धुन की चेर‡ ॥ ६ ॥
अंतर दृष्टी लाई फेर ।
दूर हटाया पापन ढेर ॥ ७ ॥
अब सतगुरु की होगई मेहर ।
मिट गया आज काल का क़हर§ ॥ ८ ॥
लगी नहीँ कुछ मुझे अबेर ।
मैं चढ़ पहुँची बहुत सवेर ॥ ९ ॥

* सीढ़ी । † पास । ‡ चेली । § डंड ।

तन मन झगड़ा सभी निबेड़ ।
मिला भक्ति भण्डार कुबेर ॥ १० ॥
बैरियन की लई खाल उधेड़ ।
मान सरोवर न्हाई नहर ॥ ११ ॥
मन का सभी मिटाया फेर ।
राधास्वामी लिया मन घेर ॥ १२ ॥

॥ शब्द उन्तीसवाँ ॥

गुरू सँग खेलूँ निस दिन पास ।
करूँ मैं अचरज बिमल बिलास ॥ १ ॥
सुखी होय करती चरन निवास ।
हुआ मोहिं गुरु का अति बिस्वास ॥ २ ॥
गुरू बिन और नहीं कोइ आस ।
मिली अब नाम रतन की रास ॥ ३ ॥
धियाऊँ पल पल स्वाँसो स्वाँस ।
काल और कर्म हुए दोउ नाश ॥ ४ ॥
जक्त से रहती सहज उदास ।
मिली अब पदवी दासन दास ॥ ५ ॥
करे अब सूरत नभ पर बास ।
शब्द का पाया परम प्रकाश ॥ ६ ॥

लगन अस रहती बारह मास ।
चरन में पकड़े गुरु के ख़ास ॥ ७ ॥
द्वार घट खोला चढ़ आकाश ।
काल मुरझाया सूखा मास ॥ ८ ॥
हुआ अब घर में दीप उजास ।
मिला निज सूरज सँग आभास ॥ ९ ॥
कहूँ क्या महिमा शब्द ख़वास ।
गहे जो पावे अमर अवास* ॥ १० ॥
करूँ अब आरत राधास्वामी रास ।
शब्द का दीपक कीन्हा चास† ॥ ११ ॥

॥ शब्द तीसवाँ ॥

गुरु मूरत मेरे मन बस गइयाँ ।
तन धन वारूँ बल बल जइयाँ ॥ १ ॥
अस पिया संग सुहागिन भइयाँ ।
अटल सुहाग नाम धुन पइयाँ ॥ २ ॥
करम भरम सब दूर बहइयाँ ।
जक्त जाल जंजाल कटइयाँ ॥ ३ ॥
अब चढ़ सुरत श्याम घर अइयाँ ।
सेत दीप की दमक दिखइयाँ ॥ ४ ॥

* घर । † जगाया ।

सहसकँवलदल मोह दलइयाँ ।
काम क्रोध मद दूर करइयाँ ॥ ५॥
घंटा संख नाद सुन लइयाँ ।
पाँच तत्व रँग सूक्षम पइयाँ ॥ ६ ॥
लीला अद्भुत गुरू लखइयाँ ।
अब आगे की डगर चलइयाँ ॥ ७ ॥
बंकनाल का द्वार खुलइयाँ ।
त्रिकुटी घाट मौज दरसइयाँ ॥ ८ ॥
गुरु सूरत जहँ सूर ललइयाँ* ।
सुन्न सिखर चढ़ कर्म जलइयाँ ॥ ९ ॥
महासुन्न महिमा क्या कहियाँ ।
भँवरगुफा चढ़ बंस बजइयाँ ॥ १० ॥
सत्तनाम धुन बीन सुनइयाँ ।
अलख अगम जा सुरत नचइयाँ ॥११॥
निज कर राधास्वामी दास कहइयाँ ।
अब आरत पूरन करवइयाँ ॥ १२ ॥

॥ शब्द इकतीसवाँ ॥

सोच रही री मौज की बतियाँ ।
सुत रतियाँ† कँवल बिलास ॥ १ ॥

* लाल । † रत रही है ।

उमँग प्रेम छबि लखियाँ ।
अब हियरे बढ़त हुलास ॥ २ ॥
निमख* २ अटकी दृग शोभा ।
निरख रही परकाश ॥ ३ ॥
भीजत मन सीझत नृत न्यारी
धावत निज आकाश ॥ ४ ॥
आवत घोर सुनत निस† बासर‡ ।
उलट फिराया स्वाँस ॥ ५ ॥
चेतन होत सोख तम सागर ।
पावत अगम निवास ॥ ६ ॥
चंद चकोर मगन प्रीतम रस ।
ज्यौं जल मीना बास ॥ ७ ॥
जगे भाग कल§ कालख‖ नासे ।
पायासुख बिस्वास ॥ ८ ।
अधर पियारी चढ़ी अटारी ।
छूट गई जम फाँस ॥ ९ ॥
राधास्वामी दरस दिवानी ।
बैठी चरनन पास ॥ १० ॥

* पल । † रात । ‡ दिन । § काल के । ‖ कालौंच, दुख ।

॥ शब्द बत्तीसवाँ ॥

मेरे पिया की अगम हैं गतियाँ ।
मैं कैसे कैसे गाऊँ ॥ १ ॥
कोइ मर्म न पावत रतियाँ* ।
क्योंकर मन लाऊँ ॥ २ ॥
धुन ध्यान लगावत रतियाँ† ।
चुन चुन धुन लाऊँ ॥ ३ ॥
तिल ताकत‡ फेर उलटियाँ ।
घट दीप§ जगाऊँ ॥ ४ ॥
लिख भेजूँ पिया को पतियाँ ।
क़ासिद‖ पहुँचाऊँ ॥ ५ ॥
बिरह अगिन जलावत नितियाँ ।
घर घाट न पाऊँ ॥ ६ ॥
राधास्वामी भाग पलटियाँ ।
कर्म काट जलाऊँ ॥ ७ ॥

॥ शब्द तैंतीसवाँ ॥

पिया दरसत भइ री निहाल ।
हाल क्या बरनूँ अपना ॥ १ ॥

* रत्ती भर । † प्रेम के साथ । ‡ देखकर । § जोत । ‖ चिट्ठी लेजाने वाला ।

काल गति दूर निकारी ।
जग लागा सुपना ॥ २ ॥
घट में धुन अवगत जागी ।
खोया तन तपना ॥ ३ ॥
सुत सीतल सरवर पाया ।
शब्दारस मगना ॥ ४ ॥
बिन साध न कोई जाने ।
नित घट में जगना ॥ ५ ॥
तन धरती अब हम त्यागी ।
पहुँची चढ़ गगना ॥ ६ ॥
अब लाज तुम्हें राधास्वामी ।
मैं हो गइ सरना ॥ ७ ॥

॥ बचन अड़तीसवाँ ॥

॥ बारहमासा ॥

हाल दुख सुख सहने जीव का संसार में मन और माया के संग भरम कर और वर्णन कष्ट और क्लेश का जो कि बिना सतगुरु और नाम भक्ती के अंत समय में जमदूतों के हाथ से सहता है ॥

॥ असाढ़ मास पहिला ॥

प्रथम असाढ़ मास जग छाया ।
आसा धर जिव गर्भ समाया ॥ १ ॥

आस आड़ ले जीव भुलाया ।
घर को भूल दुक्ख अति पाया ॥ २ ॥
कर्म वेग* ने बाहर डाला ।
माया कीन्हा बहु जंजाला ॥ ३ ॥
बाल अवस्था अति दुख पावे ।
वेदन† भारी नित्त सतावे ॥ ४ ॥
मुख बोले ना सैन चलावे ।
काहू दुख अपना न जनावे ॥ ५ ॥
दुख में रोवे अति बिल्लावे ।
मात पिता बुधि काम न आवे ॥ ६ ॥
दुख कुछ है औषध कुछ करिहैं ।
उलट पलट संतापे दें हैं ॥ ७ ॥
बालपना अति दुख में बीता ।
भई किशोर खेल मति लीता ॥ ८ ॥
मात पिता चाहें पढ़वाना ।
यह रहे निस दिन खेल दिवाना ॥ ९ ॥
मार पीट पितु मात घनेरी ।
वह भी दुख की भारी ढेरी ॥ १० ॥

* ज़ोर । † दुक्ख, दर्द ।

यह भी दिन दुख ग़फ़लत बीते ।
सुक्ख न पाया रहे अब रीते ॥ ११ ॥
तरुन अवस्था आवन लागी ।
मन तरंग अब छिन छिन जागी ॥ १२ ॥
चाह उठी तब करी सगाई ।
ब्याह हुआ घर नारी आई ॥ १३ ॥
नारि देख मन अति हरषाना ।
बेड़ी भारी सो नहिं जाना ॥ १४ ॥
मात पिता का हक़ सब भूले ।
दिन और रात नारि सँग झूले ॥ १५ ॥
घटती चली लगन पितु माता ।
नारि पुत्र सँग मन अति राता ॥ १६ ॥
फ़िकर पड़ा उद्दम का जबही ।
दर दर भरमे दुख अति सहही ॥ १७ ॥
स्वान समान करी गति अपनी ।
धन का सुमिरन धन की जपनी ॥ १८ ॥
धन पाया तो हुआ अनंदा ।
अनमिलते पड़ा दुख का फंदा ॥ १९ ॥
गृह कारज अब नित्त सतावैं ।
कुल और जाति बहुत भरमावैं ॥ २० ॥

सब का बोझ भार सिर लीन्हा ।
अब तड़पे जस जल बिन मीना ॥२१॥
सूरत ने यह भार उठाया ।
अब दुक्खन से बहु घबराया ॥ २२ ॥
भरमत फिरे सुक्ख के कारन ।
सुख नहिँ मिला हुआ दुख दारुन ॥२३॥
किये अपने को बहु पछतावे ।
पर अब कछू पेश नहिँ जावे ॥ २४ ॥
कल क्लेश बहु बर्षन लागे ।
बर्षा ऋतु असाढ़ अब जागे ॥ २५ ॥
मोर पपीहा भर्म त्रास के ।
रोग सोग दुख मोह आस के ॥ २६ ॥
बोलन लागे चहुँ दिस घेरी ।
उमड़ी घटा मानो रात अँधेरी ॥ २७ ॥
भक्ति चन्द्रमा सूरज ज्ञाना ।
छिपगये दोनों घोर समाना ॥ २८ ॥
अज्ञान अँधेरा अति घट छाया ।
लोक गया परलोक गँवाया ॥ २९ ॥
यह भी बीते दुख में सब दिन ।
वृद्ध अवस्था आई छिन छिन ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

बृद्धाई बादल उमँड, घेर लिया तन खंड।
लोभनदीबाढ़नलगी,तृष्णाअतिपरचंड ३१॥
बुद्धि हीन बलछीन होय, बर्षा तन से होत।
नैननीरमुखनासिका,बहनलगेजस सोत ३२॥

॥ सावन मास दूसरा ॥

सावन आया मास दूसरा।
सास* मरी घर आया ससुरा† ॥ १ ॥
काली घटा श्याम मन हूआ।
श्यामकंज में यह मन मूआ ॥ २ ॥
गरजे बादल चमके बिजली।
मनसा मोड़ी आसा बदली‡ ॥ ३ ॥
सुरत निरत की झड़ियाँ लागीं।
धुन अनंत शब्दन से चालीं ॥ ४ ॥
बृद्ध अवस्था चेतन लागी।
काल आय जब सिर पर गाजी ॥ ५ ॥
जमपुर से अब सतगुरु राखैं।
बहुतक जीव मौत दर ताकैं ॥ ६ ॥

* माया, इच्छा। † ब्रह्म। ‡ बदल गई।

काल घटा जब आकर छाई ।
धारा मौत अधिक बरसाई ॥ ७ ॥
जीव अनेक रहे घबराई ।
काया गढ़ उन दीन्ह ढवाई ॥ ८ ॥
जमपुर जाय जीव पछतावें ।
जम के दूत तिन बहुत सतावें ॥ ९ ॥
नाना कष्ट देयँ पल पल में ।
फिर फाँसी डालें गल गल में ॥ १० ॥
कुंभी नर्क माहिं दें ग़ोते ।
जीव सहें दुख अति कर रोते ॥ ११ ॥
वे निरदई दया नहिं लावें ।
अति तिरास से जिव मुरझावें ॥ १२ ॥
अगिन खंभ से फिर लिपटावें ।
हाय हाय कर तब चिल्लावें ॥ १३ ॥
सुने न कोई मुश्किल भारी ।
सर्पन माला ले गल डारी ॥ १४ ॥
मार मार चहुँ दिस से होई ।
पति गति अपनी सब बिधि खोई ॥ १५ ॥
नर्कन में अति त्रास दिखावें ।
फिर चौरासी ले पहुँचावें ॥ १६ ॥

गुरु भक्ती बिन यह गति पाई ।
नर देही सब बाद गँवाई ॥ १७ ॥
जो जो भजन भक्ति से चूके ।
तिन के मुख जम पल पल थूके ॥ १८ ॥
ऐसी कुगत होयगी सबकी ।
जो नहिँ धारैँ सतगुरु अब की ॥ १९ ॥
सतगुरु बिना कोई नहिँ बाचे ।
नाम बिना चौरासी नाचे ॥ २० ॥
धन्य भाग हम सतगुरु पाया ।
चढ़ी सुरत मन गगन समाया ॥ २१ ॥
सुन्न मँडल जाय झूला झूली ।
सावन मास लिया फल मूली ॥ २२ ॥
सखियाँ सब मिल गावन लागीँ ।
माया ममता देखत भागीँ ॥ २३ ॥
सभी सुहागिन झूलैँ घर घर ।
पिया अपने को हिरदे धर धर ॥ २४ ॥
पिया बिमुख तरसैँ बहु नारी ।
जिन के पति परदेस सिधारी ॥ २५ ॥
तिन को सावन काला नागा ।
डस डस खावे लागे आगा ॥ २६ ॥

बाहर बर्षा रिमझिम होई ।
घट में उनके अग्नि समोई ॥ २७ ॥
अग्नि लगी मानो तन मन फूका ।
उन के भावें पड़ गया सूखा ॥ २८ ॥
तीज त्योहार कछू नहिं भावे ।
मन में दुख नहिं हर्ष समावे ॥ २९ ॥
पिया बिन सावन कैसा आया ।
जेठ तपन जस जीव जलाया ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

जीव जले बिरह अगिन में
क्योंकर सीतल होय।
बिन वर्षा पिया बचन के
गई तरावत खोय॥ ३१ ॥
ज़िन को कंथ मिलाप है
तिन मुख बरसत नूर ।
घट सीतल हिरदा सुखी
बाजे अनहद तूर ॥ ३२ ॥

॥ भादौं मास तीसरा ॥

चेतावनी जीवों को कि मनमत कर्म और धर्म और जप तप और मूर्त पूजा और तीर्थ व्रत से जीव की चौरासी नहीं छूटेगी जब तक कि सन्त सतगुरु और साध का संग और उन से भेद नाम का लेकर अंतर मुख अभ्यास न करेंगे और वर्णन जुक्ती और भेद सुरत शब्द मारग का ॥

भादौं मास तीसरा जारी ।
दौं लागी सब जग को भारी ॥ १ ॥
तीन ताप का बड़ा पसारा ।
इक इक जीव घेर कर मारा ॥ २ ॥
काम क्रोध मद लोभ सतावें ।
माया ममता आग लगावें ॥ ३ ॥
जल जल जीव पड़े घबरावें ।
छूटन की कोइ जुगत न पावें ॥ ४ ॥
कोई कर्म कोइ धर्म सम्हारे ।
कोइ विद्या कोइ जप तप धारे ॥ ५ ॥
कोइ मंदिर जा मूरत पूजे ।
कोइ तीरथ कोइ बर्त में जूझे ॥ ६ ॥

यह सब भूले भटका खावैं ।
कोई न इन की भूल मिटावैं ॥ ७ ॥
क्या पंडित क्या भेष गृहस्ती ।
यह सब बसे काल की बस्ती ॥ ८ ॥
चौरासी में बहु भरमावैं ।
नर्क स्वर्ग के धक्के खावैं ॥ ९ ॥
जो कोइ उन से कहे समझाई ।
उलटी मानैं करैं लड़ाई ॥ १० ॥
कलजुग कर्म धर्म नहिं कोई ।
नाम बिना उद्धार न होई ॥ ११ ॥
नाम भेद है अति कर झीना ।
बिन सतगुरु काहू नहिं चीन्हा ॥ १२ ॥
जपने में सब गये भुलाई ।
नाम अगम कोइ भेद न पाई ॥ १३ ॥
जो सतगुरु पूरे मिल जाते ।
तो वे भेद नाम का गाते ॥ १४ ॥
नाम रहे चौथे पद माहीं ।
यह ढूढ़ैं तिरलोकी माहीं ॥ १५ ॥
तीन लोक में नाम न पावैं ।
चौथे लोक में संत बतावैं ॥ १६ ॥

तीन लोक में बसता काल ।
चौथे में रहे नाम दयाल ॥ १७ ॥
सोई नाम संतन से पावे ।
बिना संत नहिं नाम समावे ॥ १८ ॥
अब मारग का भेद बताऊँ ।
आँख खुले तो भेद लखाऊँ ॥ १९ ॥
पहिले सुरती नैन जमावे ।
घेर फेर घट भीतर लावे ॥ २० ॥
बिरह होय तो यह बन आवे ।
मेहनत करे तो कुछ फल पावे ॥ २१ ॥
देखे तिल पिल जोत समावे ।
अनहद सुन मन बस में आवे ॥ २२ ॥
मन बस होय तो सूरत जागे ।
निरख अकाश आतमा पागे ॥ २३ ॥
शब्द पकड़ परमातम निरखे ।
आतम जाय परमातम परखे ॥ २४ ॥
परमातम से आगे जाई ।
सुन्न महल में बैठक पाई ॥ २५ ॥
सुन्न के परे महासुन्न लेखा ।
महासुन्न पर खिड़की देखा ॥ २६ ॥

खिड़की आगे चौक अपारा।
चौक परे निरखा सतद्वारा ॥ २७ ॥
सत्तपुरुष सतनाम कहाई।
सत्त लोक निज पाया आई ॥ २८ ॥
यह मारग सन्तन ने भाषा।
भेद प्रगट कुछ गोय न राखा ॥ २९ ॥
लोक बेद बस जो जिव होई।
सो परतीत न लावे कोई ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

लोक बेद में जो पड़े, नाग पाँच डस खायँ।
जन्म २ दुखमेंरहैं, रोवैंऔरचिल्लायँ ॥३१॥
जिनसतगुरुकेबचनकी, करी नहीं परतीत।
नहिंसङ्गत करीसंत की, वेरोवैंसिरपीट ॥३२॥

॥ क्वार मास चौथा ॥

आशक्त होना जीवों का मन औरइन्द्रियों के भोगों में और भूलना अपने सत्त कुल को और प्रगट होना सत्तपुरुष दयाल का सन्त सतगुरु रूप धारन करके वास्ते उन के उद्धार के और उपदेश करना सुरत शब्द मारग का।

क्वार महीना चौथा आया ।
जिव भौसागर वार रहाया ॥ १ ॥
पार न जावे वार रहावे ।
साध संत सँग प्रीत न लावे ॥ २ ॥
जक्त भोग में रहे अधीना ।
रोग सोग दुख सुक्ख मलीना ॥ ३ ॥
ज्ञान बैराग भक्ति नहिँ धारी ।
मोह राग हंकार पचारी ॥ ४ ॥
क्वारी सुरत करे बिभचारा ।
मन इन्द्री सँग फिरती लारा ॥ ५ ॥
काम क्रोध में भरमत डोले ।
जड़ चेतन की गाँठ न खोले ॥ ६ ॥
सतसँग करे न सतगुरु सेवे ।
भाव भक्ति में मन नहिँ देवे ॥ ७ ॥
काल चक्र का पड़ा हिँडोला ।
ऊँच नीच खावे झकझोला ॥ ८ ॥
जन्म अनेक भूलते बीते ।
जम झोटन के सहे फ़ज़ीते ॥ ९ ॥
धर्मराय नित करे खुवारी ।
नर्कन में भोगे दुख भारी ॥ १० ॥

करम भार सिर ऊपर लादा ।
घेरे फिरे काल का प्यादा ॥ ११ ॥
प्यादों के सँग इज़्ज़त खोती ।
सत्तनाम कुल की थी गोती ॥ १२ ॥
गोत लजाया ज़ाति गँवाई ।
तो भी मन में लाज न आई ॥ १३ ॥
लाज करी तो मन के कुल की ।
सुध भूली सब अपने कुल की ॥ १४ ॥
कुल इसका है सब से ऊँचा ।
संत बिना कोइ जहाँ न पहुँचा ॥ १५ ॥
शेष महेश रहे सब नीचे ।
ब्रह्म और पारब्रह्म रहे बीचे ॥ १६ ॥
सत्तपुरुष को लज्जा आई ।
संत औतार धरा जग माहीं ॥ १७ ॥
संत रूप धर जिव उपदेशें ।
बानी नाव बना जिव खेवें ॥ १८ ॥
सुरत अजान न बूझे बानी ।
फिर फिर डूबे कहा न मानी ॥ १९ ॥
भौसागर में ग़ोते खावे ।
मनमत ठान चौरासी धावे ॥ २० ॥

संत बतावें सत की रीत ।
यह नहिं माने कुछ परतीत ॥ २१ ॥
बिन परतीत रीत नहिं पावे ।
जन्म जन्म चौरासी जावे ॥ २२ ॥
चौरासी से संत बचावें ।
उनका बचन न मन ठहरावे ॥ २३ ॥
मन के रंग फिरे बहुरंगी ।
ढंग न सीखे बड़ी कुढंगी ॥ २४ ॥
साध संत का ढँग नहिं सीखे
भोगे दुख रस चाखे फीके ॥ २५ ॥
रस फीके संसार के सबही ।
अंतर का रस अगम न लेही ॥ २६ ॥
स्वाँति बदरिया अंतर बरसे ।
सुरत लगावे तो मन सरसे॥ २७ ॥
शरद चन्द्रमा अन्तर दरसे ।
सुन की धुन्न जाय जब परसे ॥ २८ ॥
मोती चुने मानसरवर के ।
भोगे भोग मराल* नगर के ॥ २९ ॥

* हन्स ।

जो संतन के बचन सम्हाले ।
जाय त्रिबेनी होय निहाले ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

होय निहाल सुन्दर लखे, सुने किंगरी नाद ।
नादसुनतहोवतमगन, फिरखोजतपदआद॥
संत दया सतगुरु मया, पाया आद अनाद ।
गतिमतिकहतेनाबने, सुरतभईबिस्माद॥३१॥

॥ कातिक मास पाँचवाँ ॥

बर्णन कँवलाँ का अंदर काया के और बड़ाई संत मते की

कातिक मास पाँचवाँ चला ।
सुरत शब्द गुरु चेला मिला ॥ १ ॥
तक काया कँवलन बिधि भाखी ।
कँवल दुवादस काया राखी ॥ २ ॥
प्रथमे कँवल गनेश बिलासा ।
कँवल दूसरे ब्रह्मा बासा ॥ ३ ॥
कँवल तीसरे बिष्णु प्रकाशा ।
चतुर्थ कँवल शिव शक्ति निवासा ॥४॥
आतम कँवल पाँचवाँ होई ।
छठा कँवल परमातम सोई ॥ ५ ॥

कँवल सातवें काल बसेरा ।
जोत निरंजन का वहँ डेरा ॥ ६ ॥
कँवल आठवाँ त्रिकुटी माहीं ।
सूरज ब्रह्म बसे तेहि ठाहीं ॥ ७ ॥
नवाँ कँवल है दसवें द्वारे ।
पारब्रह्म जहँ बसे निरारे ॥ ८ ॥
महासुन्न में कँवल अचिंता ।
कँवल दसम का वहँ बरतंता ॥ ९ ॥
कँवल इकादश भँवरगुफा पर ।
द्वादश कँवल सत्त पद अंतर ॥ १० ॥
षट चक्कर यह पिंड सँवारा ।
तीन चक्र ब्रह्मण्ड अधारा ॥ ११ ॥
तीन कँवल जो ऊपर रहे ।
संत बिना कोइ बरन न कहे ॥ १२ ॥
षष्ट कँवल तक जोगी आसन ।
नवें कँवल जोगेश्वर बासन ॥ १३ ॥
पिंड ब्रह्मंड का इतना लेखा ।
जोगी ज्ञानी यहँ तक देखा ॥ १४ ॥
आगे का कोइ भेद न जाने ।
तीन कँवल सो संत बखाने ॥ १५ ॥

कोइ छः तक कोइ नौ तक भाखे।
सर्व मते इन भीतर थाके ॥ १६ ॥
बड़ा सन्त मत सब से आगे।
सन्त कृपा से कोइ कोइ जागे ॥ १७ ॥
जो पहुँचे द्वादस अस्थाना ॥
सोई कहिये सन्त सुजाना ॥ १८ ॥
सन्तन का मत सब से ऊँचा।
जो परखे सोई धुर पहुँचा ॥ १९ ॥
पहुँचे की क्या करूँ बड़ाई।
सब मत उसके नीचे आई ॥ २० ॥
जो मन में परतीत न देखो।
तो कबीर गुरु* बानी पेखो ॥ २१ ॥
तुलसी साहेब का मत जोई।
पलटू जगजीवन कहें सोई ॥ २२ ॥
इन सन्तन का देउँ प्रमाना।
इन की बानी साख बखाना ॥ २३ ॥
जोग ज्ञान मत इनहूँ भाखा।
पुनि सन्तन मत ऊँचा राखा ॥ २४ ॥

* नानक साहेब।

जोगी और बेदान्ती भाई ।
संतन मत परतीत न लाई ॥ २५ ॥
बेद कतेब न पहुँचे तहँ हीं ।
थके बीच में रस्ते माहीं ॥ २६ ॥
बार बार कह कर समझाऊँ ।
संतन का मत ऊँचा गाऊँ ॥ २७ ॥
जो परतीत न लावे या की ।
जानो कालग्रसी बुधि वा की ॥ २८ ॥
वे कहा जाने मत संतन को ।
एक मिलावें काँच रतन को ॥ २९ ॥
उन से यह मत खोल न कहिये ।
सैन जनाय मौन गहि रहिये ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

संतमता सब से बड़ा, यह निश्चयकर जान।
सूफ़ी और बेदान्ती, दोनों नीचे मान॥३१
सन्त दिवाली नित करें, सतलोककेमाहिं।
औरमतेसबकालके,योंहीघूलउड़ाहिं ॥३२॥

****

॥ अगहन मास छठवाँ ॥

महिमा सतगुरु की और विधि सतसंग और भक्ती की और चढ़ कर पहुँचना सुरत का सत्तलोक में उन की मेहर और दया से ।

आया मास अगहन अब छठा ।
अघ की हानि हुई मल घटा ॥ १ ॥
मन हुआ निर्मल चित हुआ निश्चल ।
काम क्रोध गये इंद्री निष्फल ॥ २ ॥
धरन छोड़ सुत चढ़ी अकाशा ।
शब्द पाय आई महाकाशा ॥ ३ ॥
शब्द सङ्ग नित करे बिलासा ।
देखे अचरज बिमल तमाशा ॥ ४ ॥
छोड़ा यह घर पकड़ा वह घर ।
खोया जग को पाया सतगुरु ॥ ५ ॥
जब से सतगुरु सरना लीन्हा ।
सत्त नाम धुन घट में चीन्हा ॥ ६ ॥
धन सतगुरु धन उन की संगत ।
जिन प्रताप पाई मैं यह गत ॥ ७ ॥
कर सतसंग काज किया पूरा ।
पाप नसे मानो खाया धतूरा ॥ ८ ॥

पाप पुन्न दोउ गये नसाई ।
भक्ति भाव जिव हृदे समोई ॥ ९ ॥
अब यह सतसँग गुरु का पावे ।
हिल मिल चरन माहिँ लिपटावे॥ १० ॥
चरन सेव चरनामृत पीवे ।
गुरु परशादी खा नित जीवे ॥ ११ ॥
दर्शन करे बचन पुनि सुने ।
फिर सुन सुन नित मन मैं गुने ॥ १२ ॥
गुन गुन छाँट लेय उन सारा ।
सार धार तिस करे अहारा ॥ १३ ॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई ।
जग भौ लाज अब गई नसाई ॥ १४ ॥
गुरु भक्ती जानो इश्क़ गुरू का ।
मन मैं धसा सुरत मैं पक्का ॥ १५ ॥
पक पक घट में गाड़ा थाना ।
थान गाड़ अब हुआ दिवाना ॥ १६ ॥
गुरु का रूप लगे अस प्यारा ।
कामिन पति मीना जल धारा ॥ १७ ॥
सतसँग करना ऐसा चहिये ।
सतसँग का फल येही सहि है ॥ १८ ॥

सतसँग सतसँग मुख से गावैं ।
करैं नित्त फल कछू न पावैं ॥ १९ ॥
सतसँग महिमा है अति भारी ।
पर कोइ जीव मिले अधिकारी ॥२०॥
अधिकारी बिन प्रगट नहीं फल।
सतसँग तौ कीन्हा सब चल चल ॥२१॥
चल चल आये सतगुरु आगे ।
बचन न पकड़ा दरस न लागे ॥ २२ ॥
सतसँग और सतगुरु क्या करैं ।
सो जिव भौजल कैसे तरैं ॥ २३ ॥
पत्थर पानी लेखा बरता।
जल मिसरी सम मेल न करता ॥२४॥
बाहर का सँग जब अस होई ।
सतगुरु सम प्रीतम नहिं कोई॥ २५ ॥
तब अन्तर का सतसँग धारे ।
सुरत चढ़े असमान पुकारे ॥ २६ ॥
बोले अर्श और गरजे गगना ।
बैठा कुर्सी मन हुआ मगना ॥ २७ ॥

लामुक़ाम* पाया लाहूत ।
छोड़ा नासूत मलकूत जबरूत ॥ २८ ॥
हाहूत का जाय खोला द्वारा ।
हूतलहूत और हूत सम्हारा ॥ २९ ॥
हूत मुक़ाम फ़क़ीर अख़ीरी ।
रूह सुरत जहँ देती फेरी ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

अल्लाहू त्रिकुटी लखा†, जाय लखा हासुन्न।
शब्द अनाहू पाइया, भँवरगुफा की धुन्न।३१॥
हक़्क़ हक़्क़ सतनाम धुन, पाई चढ़ सचखंड।
संतफ़क़र बोली जुगल, पद दो एक अखंड।३२

॥ पूस मास सातवाँ ॥

बर्णन स्वरूप सुरत और शब्द का और उपदेश सतगुरु भक्ती और सतसंग का जो कि मुख्य उपाय प्राप्ती मेहर और दया का है॥

पूस महीना जाड़ा भारी ।
कर्म भर्म ज्यों फूस जला री ॥ १ ॥
जल जल ढेर हुआ जब भारी ।
प्रेम पवन से तुरत उड़ा री ॥ २ ॥

* दूसरे एडिशन में "लामकान" है। † उर्दू की किताब और पहिले हिन्दी एडिशन में "लखा" की जगह "कहा" का पाठ है।

मोह सीत ने चित को घेरा ।
सूर बिबेक किया घट फेरा ॥ ३ ॥
फेरा करत भक्ति गुरु जागी ।
सुरत भई अनहद अनुरागी ॥ ४ ॥
राग भोग सब दूर निकारा ।
बिमल बिरह बैराग सम्हारा ॥ ५ ॥
सहज जोग गुरु दिया बताई ।
सुरत शब्द मारग लखवाई ॥ ६ ॥
झीनी सुरत रूप नहिँ दरसे ।
परसे शब्द जाय मन घर से ॥ ७ ॥
सुन्न शिखर जाय रूप दिखाना ।
गगन मँडल के पार ठिकाना ॥ ८ ॥
रूप सुरत का दरसा ऐसा ।
बिन अनुभव क्योंकर कहूँ कैसा ॥ ९ ॥
अनुभव से वह जाना जाई ।
शब्द बिना अनुभव नहिँ पाई* ॥ १० ॥
सुरत शब्द दोउ अनुभव रूपा ।
तू तो पड़ा भर्म के कूपा ॥ ११ ॥

* दूसरे एडिशन में आई है ।

करनी कर कर सुरत चढ़ाओ ।
शब्द मिले अनुभव घर पाओ ॥१२॥
बिना शब्द अनुभव नहिं होई ।
अनुभव बिन समझे नहिं कोई ॥ १३ ॥
सुरत शब्द दोउ रूप अमोला ।
सुन्न चढ़े जिन निज कर तोला ॥१४॥
ताते करनी गुरू बताई ।
सतगुरु दया लेव सँग भाई ॥ १५ ॥
मेहर दया करनी करवाई ।
करनी कर बहु मेहर बढ़ाई ॥ १६ ॥
करनी मेहर संग दोउ चलते ।
तब फल पूरा चढ़ चढ़ लेते ॥ १७ ॥
अस संजोग मौज से होई ।
मौज उपाव नहीं अब कोई ॥ १८ ॥
पच पच थक थक सब ही हारे ।
मौज बिना क्या करें बिचारे ॥ १९ ॥
इक उपाव कुछ मन में आया ।
पर थोड़ा सा चित्त समाया ॥ २० ॥

जब जब संत जगत में आवें।
ढूँढ़ भाल उनके ढिंग जावें ॥ २१ ॥
जाय करें नित सेवा दर्शन।
हाज़िर रहें गिरें उन चरनन ॥ २२ ॥
नित्त हाज़िरी उन की करते।
मन से दीन लीन होय रहते ॥ २३ ॥
पर यह बात बड़ी अति झीनी।
सन्त करावें निंदा अपनी ॥ २४ ॥
निंदा चौकीदार बिठाई।
कोई जीव धसने नहिं पाई ॥ २५ ॥
बिरला जीव होय अनुरागी।
निंदा से वह छिन छिन भागी ॥ २६ ॥
निंदा सुन सुन चित नहिं धारे।
सन्तन की यह जुगत बिचारे ॥ २७ ॥
जस जाने तस मन समझावे।
सन्तन सन्मुख ज्यों त्यों आवे ॥ २८ ॥
ऐसी दृढ़ता जाकर होई।
तो फिर सन्त मौज करें सोई ॥ २९ ॥
सन्त मौज फिर कोइ न टारे।
ईश्वर परमेश्वर सब हारे ॥ ३० ॥

॥ सोरठा ॥

सन्त डारिया बीज, घट धरती जेहि जीव के।
कोई असमरथ होय, जो जारे उस बीज को ३१॥
कोई काल के माहिँ, वह बीजा अंकुर गहे।
जब जब आवेँ संत, अंकूरी उन सँग रहे॥३२॥
वह सीँचेँ निज पौद, होय भक्त वह पेड़ सम।
फल लागेँ अति से सरस, भोगे सतगुरु मेहर से
कारज कीन्हा पूर, संत धूर हिरदे धरी।
सूर हुआ मनचूर, नूर तूर घट मेँ प्रगट॥३४॥

******

॥ माघ मास आठवाँ ॥

बर्णन लीला और विलास मुक़ामात का और उन के रास्ते का अंतर मेँ।

माघ महीना अति रस भरा।
काया बन मन गुलशन* हरा॥१॥
चमन† चमन फुलवारी खिली।
बाग़ बाग़ नहरेँ अब चलीँ॥२॥
गुरु भक्ती और पौद प्रेम की।
क्यारी धीरज दया नेम की॥३॥

* फुलवारी। † बग़ीचा।

अस अस लीला देखी घट में ।
मन माली सींचे छिन छिन में ॥ ४ ॥
नैनन आगे पचरँग फूल ।
पल २ निरखत तिल तिल झूल* ॥ ५ ॥
तत्त पिर्थवी भिन होय दरसा ।
ऋतु बसंत फूली मन सरसा ॥ ६ ॥
झलक जोत और उमँड घटा की ।
रिमझिम बरसे बूँद अमी की ॥ ७ ॥
सहस धार दल सहस कँवल में ।
उठें तरंगैं फैलें मन में ॥ ८ ॥
मन चढ़ चला महल अपने में ।
उलटा पहुँचा गगन मँडल में ॥ ९ ॥
गगन मँडल लीला इक न्यारी ।
शब्द गुरू की खिल रही क्यारी ॥ १० ॥
मूल नाम और शाखा धुन की ।
फूली जहँ फुलवार त्रिगुन की ॥ ११ ॥
यह लीला घट माहिँ निहारी ।
महिमा नाम कहा कहूँ भारी ॥ १२ ॥

* झूलती है ।

सरगुन नाम और सरगुन रूपा।
वहाँ तक देखा मन का सूता ॥ १३ ॥
अब आगे सूरत चढ़ चाली।
पैठी* जाय सुखमना नाली ॥ १४ ॥
सुखमन में निज मन दरसाना।
निज मन आगे निरगुन जाना ॥ १५ ॥
यह निरगुन वह सरगुन देखा।
दोनों घाट भिन्न कर पेखा ॥ १६ ॥
अब आगे पाँजी† इक गाऊँ।
गंधर्प नाल के मध्य चढ़ाऊँ ॥ १७ ॥
नाल भुवंगन बायें त्यागी।
दहने नाल धुन्धरी जागी ॥ १८ ॥
जागत नाल काल मुख मूँदा।
घाट अठासी नाका रूँधा ॥ १९ ॥
सिंघपौल‡ ढिंग झँझरी निरखी।
सेत पदमनी जाली परखी ॥ २० ॥
सुन्न ताल जहँ धुन भंडारा।
छजली कजली दीप निहारा ॥ २१ ॥

* धसी। † रास्ता। ‡ दरवाजा।

सागर नागर जा कर झाँका ।
कुरम शेष अक्षर जहँ थाका ॥ २२ ॥
जहाँ सुरंगो दीप झरोखा ।
सुरत अड़ी जाय द्वारा रोका ॥ २३ ॥
सँदली चँदली चौकी डारी ।
सुरत मंडली पाट खुला री ॥ २४ ॥
कुंडल दीप छबीली रमना ।
दामिन दीप सोत का झरना ॥ २५ ॥
नीलम कुण्ड रतन नल पाल ।
महाकाल रचिया जहँ जाल ॥ २६ ॥
कंकन घाटी सुरत झुमाई ।
जाल काल सब दूर पड़ाई ॥ २७ ॥
सेत धरन जहँ लाल अकासा ।
हंस छावनी देख बिलासा ॥ २८ ॥
यह पाँजी निरखी निज धामी ।
बिमल दीप बैठे जहँ स्वामी ॥ २९ ॥
पोहप नगर जहँ अमृत धाम ।
हंस बसैं पावैं बिस्राम ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

बैठक स्वामी अद्भुती, राधा निरख निहार।
और न कोई लख सके, शोभा अगम अपार ३१

गुप्त रूप जहँ धारिया, राधास्वामी नाम।
बिना मेहर नहिँ पावई, जहाँ कोई बिश्राम ३२॥

॥ फागुन मास नवाँ ॥

उतरना सुरत का बीच नौ द्वार के और फस जाना मन और इंद्रियाँ का संग करके भोगों में और फिर आना सत्तपुरुष दयाल का संत सतगुरु रूप धार कर और पहुँचाना सुरत का निज घर में शब्द मारग की कमाई से और वर्णन भेद रास्ते और मुक़ामात का।

फागुन मास रँगीला आया।
धूम धाम जग में फैलाया ॥ १ ॥
घर घर बाजे गाजे लाया।
झाँझ मजीरा दफ़्फ़ बजाया ॥ २ ॥
यह नर देही फागुन मास।
सुरत सखी आई करन बिलास ॥ ३ ॥
मन इन्द्री सँग खेली फाग।
उत से सोई इत को जाग ॥ ४ ॥

जग में आ संजोग मिलाया ।
लोक लाज कुल चाल चलाया ॥ ५ ॥
भोग रोग परिवार बँधानी ।
फगुआ खेली होली ठानी ॥ ६ ॥
धूल उड़ाई छानी ख़ाक ।
पाप पुन्य सँग हुइ नापाक ॥ ७ ॥
इच्छा गुन सँग मैली भई ।
रंग तरंग बासना गही ॥ ८ ॥
फल पाया भुगती चौरासी ।
काल देस जहँ बहुत तिरासी ॥ ९ ॥
आस त्रास माहिं अति फँसी ।
देख देख तिस माया हँसी ॥ १० ॥
हँस हँस माया जाल बिछाया ।
निकसन की कोई राह न पाया ॥ ११ ॥
तब संतन चित दया समाई ।
सत्तलोक से पुनि चलि आई ॥ १२ ॥
ज्यों त्यों चौरासी से काढ़ा ।
नर देही में फिर ले डाला ॥ १३ ॥
चरन प्रताप सरन में आई ।
तब सतगुरु अतिकर समझाई ॥ १४ ॥

तुझ को फिर कर फागुन आया ।
सँभल खेलियो हम समझाया ॥ १५ ॥
सुरत कहे सुनो संत सुवामी ।
कस खेलूँ कहो अंतरजामी ॥ १६ ॥
तब सतगुरु इक भेद लखाया ।
सुरत जोग मारग बतलाया ॥ १७ ॥
सुरत चली अब खेलन होली ।
कर सिंगार बैठ धुन डोली ॥ १८ ॥
बिरह अनुराग रंग घट लीन्हा ।
मन को सँग ले तन तज दीन्हा ॥ १९ ॥
शब्द गुरू से पहिले खेली ।
गगन चौक चढ़ त्रिकुटी लेली ॥ २० ॥
त्रिकुटी माहिँ बहुत दिन खेली ।
ओंकार सँग कीन्हा मेली ॥ २१ ॥
लाल गुलाल रूप सुत पाया ।
तब सतगुरु सुन शब्द सुनाया ॥ २२ ॥
आगे बढ़ी चढ़ी ऊँचे को ।
उलट न देखे अब नीचे को ॥ २३ ॥
चल चल पहुँची सत्तलोक में ।
फगुवा माँगे सत्तनाम से ॥ २४ ॥

गई जहाँ से फिर वहिँ आई ।
घट में अपने आन समाई ॥ २५ ॥
रंग रंग नित खेलत होली ।
जो होना था सो अब होली* ॥ २६ ॥
छोड़ा पिंडा छोड़ा अंडा ।
खंड खंड कीन्हा ब्रह्मण्डा ॥ २७ ॥
निज घर अपने जाकर बसी ।
सत्त शब्द धुन बीना रसी ॥ २८ ॥
हंस रूप अब धारा असली ।
देह रूप घर बहुतक फसली† ॥ २९ ॥
काल निरंजन तोड़ी पसली ।
हो गइ सत्तनाम गल हँसली‡ ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

जब आवे सुत देह में, देह रूप ले ठान।
जब घट उलटे सुन्न को, हँस रूप पहिचान ३१
सुरत रूप अति अचरजी, बर्णन किया न जाय ।
देह रूप मिथ्या तजा, सत्त रूप हो जाय ॥३२॥

* हो गया । † फसी । ‡ नाम गहने का ।

॥ चैत मास दसवाँ ॥

चैत महीना आया चेत ।
बाँधा सतगुरु भौ में सेत ॥ १ ॥
जीव चिताये जो थे वार ।
भौसागर से कीन्हे पार ॥ २ ॥
भौसागर अति गहिर गँभीर ।
सतगुरु पूरे बाँधी धीर ॥ ३ ॥
तन मन धन की लई जगात ।
शिष्य उतारे गहि कर हाथ ॥ ४ ॥
सुरत बहे थी नौ की धार ।
ताहि चढ़ाया गगन मँझार ॥ ५ ॥
गगन जाय धुन शब्द सिहारी ।
देखा रूप जोत अति भारी ॥ ६ ॥
जोत निहारे देखे तारा ।
बंकनाल का खोला द्वारा ॥ ७ ॥
संख सुना और धुन ओंकारा ।
शब्द गुरू का घाट निहारा ॥ ८ ॥
छोड़ा मन अब चेती सूरत ।
त्रिकुटी चढ़ निरखी गुरु सूरत ॥ ९ ॥

गुरु चेला मिल आगे चाली ।
मानसरोवर शब्द सम्हाली ॥ १० ॥
हंसन साथ करी जाय यारी ।
सुरत सखी हुइ सब की प्यारी ॥ ११ ॥
सुन्न शहर में कुछ दिन बसी ।
फिर चढ़ ऊपर आगे धसी ॥ १२ ॥
महासुन्न इक नगर अपारा ।
कहूँ कहा अचरज बिस्तारा ॥ १३ ॥
धुन जहँ चार गुप्त अति झीनी ।
संत बिना कोइ परख न चीन्ही ॥१४॥
अचिंत दीप ता दायें रहता ।
सहज दीप दस पालँग बसता ॥ १५॥
महिमा दीप कहा कहूँ भारी ।
संतोष दीप तहँ बायें सँवारी ॥ १६ ॥
तहँ इक झिरना अजब रचानी ।
सुरत निरत से गही निशानी ॥ १७ ॥
देख निशान मध्य को धाई ।
भँवरगुफा की गली समाई ॥ १८ ॥
तिस आगे मैदान दिखाना ।
सत्यलोक जहँ पुरुष पुराना ॥ १९ ॥

निज पद पाय पुरुष से मिली ।
देख गली आगे फिर चली ॥ २० ॥
अलख लोक में किया बसेरा ।
अगम लोक जाय डाला डेरा ॥ २१ ॥
शोभा वहाँ की क्या कह गाऊँ ।
अरब खरब शशि सूर लजाऊँ ॥ २२ ॥
अब अनाम जहँ रूप न नामा ।
संत करें जा वहँ बिश्रामा ॥ २३ ॥
सुरत चेत पाया बिसमाद ।
नहिं जहँ बानी नहिं जहँ नाद ॥ २४ ॥
आदि न अंत अनंत अपार ।
संतन का वह निज दरबार ॥ २५ ॥
सुरत सखी वा घर से आवें ।
काल देश से जीव छुड़ावें ॥ २६ ॥
जो चेते तिस ले पहुँचावें ।
सुरत शब्द मारग बतलावें ॥ २७ ॥
जीव चेत जो माने कहना ।
ता को फिर दुख सुख नहिं सहना ॥२८॥
मानो बचन करो कुछ करनी ।
सुरत निरत की धारो रहनी ॥ २९ ॥

सतसँग करो गहो गुरु रंग ।
सुरत चढ़ाओ गगन उमंग ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दया करी, भेद बताया गूढ़ ।
अबसुनजीवन चेतई, तौ जानो अति मूढ़॥३१॥
भौसागर धारा अगम, खेवटिया गुरु पूर।
नाव बनाई शब्द की, चढ़ बैठे कोइ सूर ॥३२॥

॥ बैसाख मास ग्यारहवाँ ॥

वर्णन भेद काल मत और दयाल मत का और प्रगट होना सत्तलोक का और रचना तीन लोक की और सबब फैलने काल मत और गुप्त रहने संत मते का॥

बैसाख महीना सिर पर आया ।
साख गई जिव हुआ पराया ॥ १ ॥
काल पक्ष सब जीवन धारी ।
पुरुष दयाल की सुद्धि बिसारी ॥ २ ॥
सुरत देश अपना बिसराना ।
काल देश इन अपना जाना ॥ ३ ॥
काल रची तिरलोकी सारी ।
दयाल रचा सतलोक सम्हारी ॥ ४ ॥

तीन लोक काल का थाना ।
चौथा लोक दयाल अस्थाना ॥ ५ ॥
काल दिया जीवन को धोका ।
चौथे पद से सब को रोका ॥ ६ ॥
दयाल पुरुष का भेद न दीन्हा ।
कर्म कांड में जीव अधीना ॥ ७ ॥
अपनी पूजा सब बिधि गाई ।
जीव चले चौरासी भाई ॥ ८ ॥
त्रइगुन रसरी जीव बँधाना ।
ब्रह्मा बिष्णु महेश पुजाना ॥ ९ ॥
देबी देवा पत्थर पानी ।
पाप पुन्न में जिव उरझानी ॥ १० ॥
काल धरे जग दस औतारा ।
कला दिखाय जीव धर मारा ॥ ११ ॥
आपहि राम आप हुआ रावन ।
आपहि कंस आप जसुनन्दन ॥ १२ ॥
आपहि बल और आपहि बावन ।
आपहि कच्छ मच्छ धर धारन ॥ १३ ॥
परसराम और नरसिंघ देख ।
प्रहलाद भक्त होय बाँधी टेक ॥ १४ ॥

खंभ फाड़ बाहर होय निकला ।
रक्षक कला दिखाई सकला ॥ १५ ॥
चाँद सूर्य और गौर गनेशा ।
पुजवाये और राहु होय ग्रसा ॥ १६ ॥
अस अस कला अनंत असंखा ।
कहँ लग बरनूँ भेद सबन का ॥ १७ ॥
काल लिया सब लोकन घेरी ।
दयाल पुरुष कोइ मर्म न हेरी ॥ १८ ॥
कालकला परचंड दिखाई ।
जीव चले सब उसकी राही ॥ १९ ॥
संतन का कोइ भेद न जाना ।
संत मता रहा गुप्त छिपाना ॥ २० ॥
संत मता खुलकर अब गाऊँ ।
देकर कान सुनो समझाऊँ ॥ २१ ॥
नहिँ पताल नहिँ मृत्त अकाशा ।
पाँच तत्व नहिँ तिरगुन स्वाँसा ॥ २२ ॥
नहिँ शिव शक्ति न पुरुष प्रकिरती ।
जोत निरंजन नहिँ परकिरती ॥ २३ ॥
तारा मंडल सूर न चंदा ।
पिंड ब्रह्मंड रचा नहिँ अंडा ॥ २४ ॥

कूरम न शेष नहीं ओंकारा ।
माया ब्रह्म न ईश्वर धारा ॥ २५ ॥
आतम परमातम नहिं दोई ।
सुन्न महासुन रचा न सोई ॥ २६ ॥
अल्ला ख़ुदा रसूल न होते ।
पीर मुरीद न दादा पोते ॥ २७ ॥
बेद पुरान क़ुरान न कहते ।
मसजिद काबा बाँग न देते ॥ २८ ॥
नहिं त्रिकाल संध्या न निमाज़ा ।
तीरथ बर्त नेम नहिं रोज़ा ॥ २९ ॥
कर्मी धर्मी थे नहिं भाई ।
जोगी ज्ञानी खोज न पाई ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

तपसी* हबसी† ज़ाहिदा‡ नहिं आबिद§ माबूद
कुतब पैग़म्बर औलिया, कोई न थे मौजूद ३१॥
स्वर्ग नर्क दोज़ख़** इरस††
अर्ज़‡‡ समा§§ नहिं होय ।
मुसलमान हिन्दू नहीं, जैन न ईसा कोय ॥३२॥

*तप करने वाला । †प्रानों को रोकने वाला । ‡ जती । § भक्त । || भगवंत ।
**नर्क । ††स्वर्ग । ‡‡पृथ्वी । §§आकाश ।

॥ जेठ मास बारहवाँ ॥

जेठ महीना जेठा भारी ।
जीवन हिरदे तपन करारी ॥ १ ॥
संत दयाल जीव हितकारी ।
भेद कहैं अब निजकर भारी ॥ २ ॥
नहिँ ख़ालिक़ मख़लूक़ न ख़िलक़त ।
कर्ता कारन काज न दिक़त ॥ ३ ॥
दृष्टा दृष्ट नहीँ कुछ दरसत ।
बाच लक्ष नहिँ पद न पदारथ ॥ ४ ॥
ज़ात सिफ़ात न अव्वल आख़िर ।
गुप्त न परघट बातिन ज़ाहिर ॥ ५ ॥
राम रहीम करीम न केशो ।
कुछ नहिँ कुछ नहिँ कुछ नहिँ था सोई
सिम्रित शास्त्र न गीता भागवत ।
कथा पुरान न बक्ता कीरत ॥ ७ ॥
सेवक सेव* न दास न स्वामी ।
नहिँ सतनाम न नाम अनामी ॥ ८ ॥
कहँ लग कहूँ नहीँ था कोई ।
चार लोक रचना नहिँ होई ॥ ९ ॥

* जिस की सेवा की जाय ।

जो कुछ था सो अब कह भाखूँ ।
उनमुन सुन बिसमाधी राखूँ ॥ १० ॥
हैरत हैरत हैरत होई ।
हैरत रूप धरा इक सोई ॥ ११ ॥
उनमुन रूप सदा वह रहता ।
उनमुन दशा सदा वहि बरता ॥ १२॥
वाकी गति कोई नहिँ जाने ।
वह अपनी गति आप बखाने ॥ १३ ॥
संत रूप होय जग मेँ आया ।
अपना भेद आप उन गाया ॥ १४ ॥
आपहि आप न दूसर कोई ।
उठी मौज परघट सत सोई ॥ १५ ॥
तीन देश मौज ने रचे ।
अगम अलख सतनाम होय हँसे॥१६॥
धुन धधकार उठी इक भारी ।
सात सुरत रचना उन धारी ॥ १७ ॥
साँचा बन जामन पुनि दीन्हा ।
सुरत परस्पर रचना कीन्हा ॥ १८ ॥
सोहं सुरत आदि योँ बोली ।
सोहं सोहं सम्पट खोली ॥ १९ ॥

सहज धीर जामन तहँ दीन्हा।
ओं सोहं गर्भ धुन चीन्हा ॥ २० ॥
मूल सुरत जहँ पर प्रगटाई।
मूल द्वार पर बैठी आई॥ २१ ॥
शांत सुरत जहँ कीन्ह बिलासा।
हंस रचे कर दीप निवासा ॥ २२ ॥
दीपन शोभा क्या कहुँ भारी।
हंस कुतूहल करैं अपारी ॥ २३ ॥
पुरुष दरस और लीला न्यारी।
देख देख अनुभव गति धारी ॥ २४ ॥
जुग केते और मुहूत केती।
कही न जावे उनकी गिनती ॥ २५ ॥
रचना सत्य सत्य वह देशा।
नहिँ ब्यापे जहँ कालकलेशा ॥ २६ ॥
हन्स सभा समरथ तहँ बैठे।
लीला देखैं रहैं इकट्ठे ॥ २७ ॥
कँवल द्वार दल धारा निकसी।
श्याम रूप अचरज होय दरसी ॥ २८ ॥
पुरुष देख अचरज लौलीना।
सेत माहिँ जस श्याम नगीना ॥ २९ ॥

सब हंसन मिल अर्ज़ी कीन्हा ।
कौन कला यह हम नहिं चीन्हा ॥३०॥
पुरुष कहा तुम करो बिलासा ।
यह कल रचिहै और तमाशा ॥ ३१ ॥

॥ दोहा ॥

हंसन मनअचरज भया, कहा करे बिस्तार।
पुरुषसेवनितहीकरे,मन कुछऔरहिधार३२
धारावहबढ़ती चली,कला न रोकी ताहि ।
पुरुष मौज ऐसी हुई, बोली कला बनाय॥३३॥

रचना रचूँ और मैं न्यारी ।
यह रचना मोहिं लगे न प्यारी ॥३४॥
तीन लोक रचना मैं करूँ ।
राज पाय ध्यान तुम धरूँ ॥ ३५ ॥
पुरुष कला को दिया निकासी ।
निकस कला कीन्हा अति त्रासी ॥३६॥
पुरुष दया कर जुगल बनाई ।
कला दूसरी और उपाई ॥ ३७ ॥
पीत बरन वह कला सिंगारी ।
दीन्ही आज्ञा पुरुष निहारी ॥ ३८ ॥

एक काल कुछ अंस दयाली ।
दोनों मिल कीन्हा कुछ ख़्याली ॥ ३९॥
आये मान सरोवर तीरा ।
अक्षर की देखी वहँ लीला ॥ ४० ॥
लीला देख काला चित त्रासा ।
तब अक्षर ने दिया दिलासा ॥ ४१ ॥

॥ दोहा ॥

जोत निरंजन दोउ कला, मिलकर उत्पति कीन
पाँच तत्त और चार खान, रच लीन्हे गुन तीन ४२
गुन तीनों मिल जक्त का, किया बहुत बिस्तार ।
ऋषी मुनी नर देव अदेव, रच बाढ़ो हंकार ।४३॥

॥ सोरठा ॥

ब्रह्मा बिष्णु महेश, और चौथी जोती मिली ।
भर्म जाल की फाँस, जीवन पावे निज गली ॥४४॥
आप निरंजन हुए नियारे ।
भार सृष्टि सब इन पर डारे ॥ ४५ ॥
दीप रचा इक अपना न्यारा ।
ता मैं कीन्हा बहु बिस्तारा ॥ ४६ ॥
पालँग आठ दीप परमाना ।
जोग आरंभ कीन्ह बिधि नाना ॥४७॥

स्वाँस खैंच निज सुन्न चढ़ाये ।
धुन प्रगटी और बेद उपाये ॥ ४८ ॥
बेद मिले ब्रह्मा को आये ।
देख बेद ब्रह्मा हर्षाये ॥ ४९ ॥
मुख चारो से धुन उच्चारी ।
ताते बेद हुए पुनि चारी ॥ ५० ॥
ऋषि मुनि मिल फिर किया पसारा ।
कर्म धर्म और भर्म सम्हारा ॥ ५१ ॥
सिम्रित शास्तर बहु बिधि रचे ।
कर्म धर्म में सब मिल पचे ॥ ५२ ॥
खोज निरंजन किनहुँ न पाया ।
बेदहु नेत नेत गुहराया* ॥ ५३ ॥

॥ दोहा ॥

दर्शनिरंजननामिला, कियाज्ञान अनुमान ।
फिरआगेसतपुरुषका, क्योंकरकरैंप्रमान ५४ ।
ता ते यह मत सन्तका, रहा गुप्त जग माहिं ।
गुनतीनों मानैंनहीं, जीवहु मानैं नाहिं ५५ ॥

* वर्णन किया ।

॥ सोरठा ॥

सन्त पुकारें भेद, भेद पशू मानें नहीं।
अनअच्छा बातें उपाव, जीव पड़े सब भर्म में ५६

तिरलोकी का नाथ कहाया।
सो भी उन के हाथ न आया ॥ ५७ ॥
स्वर्ग नर्क चौरासी फेरा।
जन्म जन्म पड़े काल के घेरा ॥ ५८ ॥
कोइ कोइ चेतन माहिँ समाने।
सो भी फिर जनमे भी आने ॥ ५९ ॥
चौथा लोक सन्त दरबारा।
निश्चय ता का काहु न धारा ॥ ६० ॥
सन्त दया अपने चित धरें।
जीव न मानें तो क्या करें ॥ ६१ ॥
भेद बतावें बानी कहें।
देह धरें और जग में रहें ॥ ६२ ॥
जीव चितावें किरपा धार।
बहुत उठावें जीवन भार ॥ ६३ ॥
तौ भी कोइ परतीत न लावे।
चौथा पद आसा नहिँ धारे ॥ ६४ ॥

बारह मास बखान पुकारे ।
कह कह कर अब हम भी हारे ॥ ६५ ॥
हार जीत कुछ हमरे नाहीं ।
मूरख पर इक तान चलाई ॥ ६६ ॥
सत्य सत्य सत्य मैं कही ।
अब कहने को कुछ नहिं रही ॥ ६७ ॥
राधास्वामी नाम उचारो ।
भक्ति भाव अब मन में धारो ॥ ६८ ॥
संतन की जिन मन परतीत ।
और धारी जिन सतसँग रीत ॥ ६९ ॥
सतसँग करे नित्त जो आई ।
उन प्रति यह बानी हम गाई ॥ ७० ॥

॥ मँगल दूसरा ॥

गुरु मेरे दीनदयाल, करी किरपा घनी ।
सुन कर बानी सार, (बारहमास) सुरत धुन में तनी ॥ १ ॥
प्रेम प्रीत चित धार, दास सोभा बनी ।
मैं औगुन की खान, कहूँ कहँ लग गिनी ॥ २ ॥
शब्द भेद अति गूढ़, थके कहँ मुनि जनी ।
कोइ न पावे भेद, छान ऐसी छनी ॥ ३ ॥

सत्तनाम सतपुरुष, अगम पूरन धनी ।
संत बतावैं भेद सार, भाखैं पुनी ॥ ४ ॥
जीव न माने नेक, काल बुधि उन हनी ।
प्रेमी सतसंगी कोई, जिन खोई मान मनी॥५॥
नहिं बूझे संसार, चाल मनमुख सनी ।
जौहरी जाने कोय, परख मानिक मनी॥६॥
पीत गहे जग मढ़, छाँड़ हीरा कनी ।
क्योंकर कहूँ बुझाय, बात ऐसी बनी ॥७॥
सुरत हंसनी जाय, शब्द मोती चुनी ।
कोइ बिरले गुरुमुख जीव, ठान ऐसी ठनी॥८॥
खोला अगम दुवार, मर्म जाना जिनी ।
गई रात अँधियार, हुआ चाँदन दिनी॥९॥
सतगुरु किरपा धार, साख ऐसी भनी ।
मार लिया मन खेत, सोई सूरा रनी॥१०॥
आदि नाम को भूल, हुई सब की ऋनी* ।
ममत चदरिया पहिन, कर्म ने जो बिनी॥११॥
मंत्र दिया गुरु देव, काल मारा फनी ।
राधास्वामी नाम, चित्त दे अब सुनी॥१२॥

* देनदार ।

॥ बचन उनतालीसवाँ ॥

॥ बसंत व होली ॥

॥ शब्द पहिला ॥

देखो देखो सखी अब चल बसंत।
फूल रही जहँ तहँ बसंत ॥ १ ॥
घट घट बाजत धुन मृदंग।
बीन बाँसरी और मुचंग ॥ २ ॥
खुल गये परदे अब निसंक।
लागी लगन मेरी होय अभंग ॥ ३ ॥
मोहिं मिल गये राधास्वामी पूरे संत।
अब बाजत हिये में धुन अनंत ॥ ४ ॥
मेरे घट में रंभा बहु नचंत।
मानो इंद्रपुरी आई अचिंत ॥ ५ ॥
अस औसर बाढ़ी अति उमंग।
मन कूदन लागा जस तुरंग* ॥ ६ ॥
सब घट से निकसे रूप रंग।
पद पायो अगम अनाम अरंग ॥ ७ ॥
मैं ने मारो काल महा भुजंग।
मो पै बरसन लागे गुल सुरंग ॥ ८ ॥

---

* घोड़ा।

मोहिं राधास्वामी दीन्हो ऐसो ढंग ।
मैं तो उड़न लगो अब जैसे चंग ॥ ९ ॥
मेरे घट में धारा बही है गंग ।
न्हाओ न्हाओ सिमटकर सबहि संग १०
स्वामी किरपा कीन्ही अति उतंग ।
मैं तो सब से हो गई अब असंग॥११॥
अब छुट गया मेरा सब कुसंग ।
मैं ने पायो अतुल आदि रंग ॥ १२ ॥
मेरा बिछ गया चौमहले पलंग ।
मैं ने छोड़ दिया मौमहला तंग ॥ १३ ॥
मेरे नाश हुए मन के कुरंग ।
मोहिं मिल गया ऐसा साध संग ॥१४॥
मुझे पिया ने मिलाया अपने अंग ।
मैं ने धारा अपने पिया का रंग ॥ १५ ॥
कहँ लग बरनूँ यह बसंत ।
मेरा पावे न कोई आदि अंत ॥ १६ ॥
मैं उबारे बहुतक जीव जंत ।
मेरा पावे न कोई परम संत ॥ १७ ॥

मैं बरनूँ अपना आप तंत ।
मैं ने कर लिया घट का सब मथंत ॥१८॥
कोइ नहिं कथि है अस कथंत ।
मैंने भाषा अपना निज वृतंत ॥ १९ ॥
मैं ने दूर किया सब नास लंग ।
मेरी सुरत उड़ी जैसे पतंग ॥ २० ॥
मैं ने मार लई अब मन की जंग ।
कोइ कर न सके मेरा बाल बंक ॥ २१ ॥
मेरी मिट गई अब शीशे की ज़ंग ।
अब न रही मेरे कोइ उचंग ॥ २२ ॥
मैं ने पाया अपना पिया निहंग ।
अब आऊँ जाऊँ जस बिहंग ॥ २३ ॥
मोहिं काल न परखे होय दंग ।
राधास्वामी लगाई यह सुरंग ॥ २४ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

घट में खेलूँ अब बसंत ।
भेद बताया सतगुरु संत ॥ १ ॥
घर पाया मैं आदि अन्त ।
सुन सुन अनहद धुन अनन्त ॥ २ ॥

कहूँ कहा महिमा अतन्त* ।
बरनूँ कैसे यह बृतन्त ॥ ३ ॥
सुरत निरत दोऊ जगन्त ।
चली जायँ मारग बेअन्त ॥ ४ ॥
छुट गइ भीड़ भई इकंत ।
सुरत शब्द का पाया तंत† ॥ ५ ॥
काल करी बहुतक ठगंत ।
व्याल सुनाया अपना मन्त ॥ ६ ॥
मन और माया दोउ जरन्त ।
सुरत चढ़ी पहुँची निज पंथ ॥ ७ ॥
घर छूटा फिर मिला जुगन्त‡ ।
पाय गई राधास्वामी कंत ॥ ८ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

खेल रही मैं नित बसंत ।
सुरत निरत कर मिली हूँ कन्त ॥ १ ॥
राधास्वामी चरन मेरे हिये बसन्त ।
खेलत उन सँग आदि अन्त ॥ २ ॥
शब्द शोर घट में उठन्त ।
सुन्न शिखर पहुँची तुरन्त ॥ ३ ॥

* अत्यंत, बहुत । † तत्त सार । ‡ बहुत काल का ।

उलटत तिल देखत परन्त* ।
श्याम कंज जोती जगन्त ॥ ४ ॥
गगन मँडल पर बाजत तंत† ।
घोर उठत छिन छिन अतंत‡ ॥ ५ ॥
छाय रही जहँ ऋतु बसंत ।
खेल रही सूरत इकंत ॥ ६ ॥
यह सतगुरु से पावे पंथ ।
चढ़ कर पहुँची महले सन्त ॥ ७ ॥
अमी धार जहँ नित गिरंत ।
भींजत गुरुमुख होय निचिंत ॥ ८ ॥
देश अगम बानी वृतंत§ ।
कोइ बिरले साधू घट मथंत ॥ ९ ॥
सोइ सोइ पावे यह रसंत ।
राधास्वामी गाया अगम मंत ॥ १० ॥
खोला पाट रूप दरसंत ।
कोटि भान छबि भाखत संत ॥ ११ ॥
नौका मेरी पार लगंत ।
अलख अगम के पार चढ़ंत १२ ॥

* पार या ऊपर की तरफ़ । †बाजा । ‡अत्यन्त । §हाल ।

राधास्वामी नाम गहा निज मंत ।
कँवल कियारी शब्द खिलंत ॥ १३ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

देखन चली बसंत अगम घर ।
देख देख अब मगन भई ॥ १ ॥
सखियन साथ चली नभ ऊपर ।
शब्द गुरू सँग लगन लगी ॥ २ ॥
कँवलन क्यारी फूल सँवारी ।
पेख पेख अब गगन रही ॥ ३ ॥
सतगुरु संध* परखती पहुँची ।
कर्म बीज को अगिन दई ॥ ४ ॥
ममता मार अहँगता जारी ।
सुरत शब्द की सरन लई ॥ ५ ॥
अनहद राग सुने घट अंतर ।
नाम रसायन रसन रसी ॥ ६ ॥
सुषमन पार सुन्न घर पहुँची ।
भक्ति शिरोमन धरन गही ॥ ७ ॥
सतगुरु किरपा सत पद पाया ।
राधास्वामी धरन† धरी ॥ ८ ॥

* मिलाप । † धारना ।

॥ होली ॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

अब खेलत राधास्वामी सँग होरी ।
धरन गगन बिच शोर मचो री ॥ १ ॥
चाँद सुरज तारागन मंडल ।
उतर उतर आये घर छोड़ी ॥ २ ॥
शेषनाग और कुरम साज ले ।
चढ़ पताल आये कर जोड़ी ॥ ३ ॥
पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण ।
चार दिशा सब भइ इक ठौरी ॥ ४ ॥
सुर नर मुन जोगी बैरागी ।
धूम धाम कुछ भइ है न थोड़ी ॥ ५ ॥
सागर कूप भरे सब रँग से ।
मेरुडंड पिचकारी छोड़ी ॥ ६ ॥
भीँज रहीँ सखियाँ सब सँग की ।
बार बार रँग प्रेम निचोड़ी ॥ ७ ॥
समा बँधा लीला अति उमगी ।
काल बली अब जात ठगो री ॥ ८ ॥
सुरत अबीर गुलाल शब्द का ।
अब सब के मुख जात मलो री ॥ ९ ॥

लोभ लोह अहंकार बिकारी।
धन इनका सब आज जलो री ॥ १० ॥
धुन धधकार सुन्न की बरषा।
मुख उनका अब जात न मोड़ी ॥ ११ ॥
अगम ख़ज़ाना मिला शब्द का।
त्याग दिया धन लाख करोड़ी ॥ १२ ॥
सुन्न महल सतलोक अटारी।
जाय चढ़ी और नाम लखो री ॥ १३ ॥
नई नई शोभा पुरुष पुराना।
कहत न आवे बचन थको री ॥ १४ ॥
राधास्वामी खेल खिलाया।
अनेक रूप यहँ एक भयो री ॥ १५ ॥

॥ शब्द छठवाँ ॥

काया नगर में धूम मची है।
खेल रही अब सूरत होली ॥ १ ॥
छाय रही सतनाम निरख पद।
लाय रही धुन पुरुष अतोली* ॥ २ ॥
आसा मनसा कर पिचकारी।
गुन गुलाल घट भीतर घोली ॥ ३ ॥

* जिसकी तोल न हो सके।

हँगता ममता धूर उड़ाई ।
प्रेम अबीर लिया भर झोली ॥ ४ ॥
संपत्ति रंभा* नाच नची है ।
बिपता नटनी अब मुख मोड़ी ॥ ५ ॥
रोग सोग दुख मार निकाले ।
धार लई मन में गुरु बोली ॥ ६ ॥
जन्म जन्म के फंदा काटे ।
खेली काल सँग आँख मिचोली ॥ ७ ॥
भक्ति भाव रँग माट भराया ।
रंग रँगी मेरे मन की चोली ॥ ८ ॥
कुमति उड़ाय सुमति अब धारी ।
मार मार माया सिर धोली ॥ ९ ॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

उमँड घुमँड कर खेली होली ।
सुमति ज्ञान सँग भर लइ झोली ॥१॥
मार लई मैंने माया पोली ।
चढ़के चली अब प्रेम खटोली ॥ २ ॥
गगन शिखर धुन निज कर तोली ।
जड़ चेतन की गाँठ सब खोली ॥ ३ ॥

* अपसरा ।

सुरत निरत मेरी भई है अमोली ।
फेरूँ जैसे पान तमोली ॥ ४ ॥
मन तन लाल भया जस रोली* ।
सभी बिकार डारे मैंने रोली† ॥ ५ ॥
मोह नींद मैं बहुतक सो ली ।
अब राधास्वामी मेरी रँग दी चोली ॥ ६ ॥
भरी नाम धन से हिय नौली‡ ।
अब समझी सतगुरु की बोली ॥ ७ ॥
आसा मनसा तन से डोली ।
अब नहिं करत काल मो से ठोली§ ८ ॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

मेरे गुरु ने खेलाई प्रेम सँग होरी ।
मैं तो होय रही सब जगसे बौरी ॥ १ ॥
सील गुलाल अबीर छिमा का ।
ता से मैं भर लई झोरी ॥ २ ॥
काम क्रोध दोउ खेलन आये ।
मार मार उन का मुख मोड़ी ॥ ३ ॥
सुरत निरत दोउ सखियाँ सँग ले ।
शब्द खोज को चाली दौड़ी ॥ ४ ॥

---

* लाल रंग । † रोलकर । ‡ चसनी रुपया रखने की । § ठठोली ।

सुखमन नाका जाय हम घेरा।
बंकनाल पिचकारी छोड़ी ॥ ५ ॥
त्रिकुटी शब्द जाय हम पकड़ा।
धूम धाम कुछ भइ है न थोड़ी ॥ ६ ॥
हंस सभा जहँ मानसरोवर।
प्रगट भई माया की चोरी ॥ ७ ॥
किंगरी नाद होत धुन भारी।
सुरत तार अपना नहिं तोड़ी ॥ ८ ॥
राधास्वामी दया रङ्ग घट भरिया।
जनम मरन दुख दूर करो री ॥ ९ ॥

॥ शब्द नवाँ ॥

गुरु आन खेलाई घट में होली।
धुन नाम लई तन अंतर खोली ॥ १ ॥
मन मार लई तिल ताला तोड़ी।
सुत फेर लई दल अंदर जोड़ी ॥ २ ॥
जुग बाँध लई गुरु से पट फोड़ी।
पद पाय गई त्रिकुटी गढ़ दौड़ी ॥ ३ ॥
सुन जाय रही सुत घर जब मोड़ी।
घर आय गई अपने भइ पोढ़ी ॥ ४ ॥

पँच इंद्री पिचकारियाँ,भर उलटीछोड़ी।
गुन तीनों कीजेवरी,छिनमाहिँजलोरी॥५॥
हौं मैंममताछोड़कर,चढ़ गगन चलोरी।
बिखरी धुनेंसमेटकर,सब एक करोरी।६॥
दृष्टि जोड़नभमेंधरो, तबजोत लखोरी।
जोतफाड़आगेधसो, फिरसुन्नतकोरी ७॥
इस सुनकीधुनसोधलो,जससंख बजोरी।
राधास्वामीएकपद,यहकह्योभलोरी ॥८॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

मेरी सुरत राधास्वामी जोड़ी।
घट में अब खेलूँगी होरी ॥ १ ॥
करम भरम की धूर उड़ाई।
दुष्ट दूल सब का सिर फोड़ी ॥ २ ॥
गगन मँडल में माट भराया।
जुगल जतन कर मन को मोड़ी ॥ ३ ॥
अनहद धुन अब धमकन लागी।
बिजली चमक और उठी घनघोरी॥४॥
तन मन की सब सुद्ध गई है।
जग से कुल नाता तोड़ी ॥ ५ ॥

* दूसरे एडीशन में "चढ़ो" है।

काल जाल के टुकड़े कीन्हे ।
सुन्न मँडल तब सुरत बहोरी ॥ ६ ॥
जम जंदार खड़ा मेरे द्वारे ।
पल पल छिन छिन करत निहोरी ॥ ७ ॥
जड़ चेतन की गाँठ खुलानी ।
ममत माया से तिनका तोड़ी ॥ ८ ॥
सुरत छड़ी अब चढ़ी है अटारी ।
पकड़ गही अब धुन की डोरी ॥ ९ ॥
पंचमुखी पिचकारी छोड़ी ।
गइ हूँ पिया पै मैं दौड़ी २ ॥ १० ॥
ऐसी रँगी मेरी सुरत चुनरिया ।
अगम पुरुष मो से करत निठोरी ॥ ११ ॥
धन राधास्वामी ऐसा खेल खेलाया ।
तब ऐसी मैंने खेली है होरी ॥ १२ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

राधास्वामी घर बाढ़ो रंग ।
मैं तो खेलूँगी ऐसी होली उमंग ॥ १ ॥
सुरत निरत की ले पिचकारी ।
राधास्वामी पै भर भर डारी ॥ २ ॥

चाँद सूरज दोउ कुम कुम कीन्हे ।
प्रेम गुलाल से भर भर लीन्हे ॥ ३ ॥
सुषमन हौज़ भरा अब भारा ।
बंकनाल का छुटा फुहारा ॥ ४ ॥
सहस धार होय त्रिकुटी पारा ।
पहुँचा जाय सुन्न के द्वारा ॥ ५ ॥
हंसन से जाय खेली होरी ।
बहन लगी जहँ अमी की मोरी ॥ ६ ॥
अनहद बाजे अद्भुत बाजें
राधास्वामी खुल खुल गाजें ॥ ७ ॥
ऐसी होली खेलो मेरे भाई ।
सब संतन के यह मन भाई ॥ ८ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

आओ री सखी जुड़ होली गावें ।
कर कर आरत पुरुष मनावें ॥ १ ॥
तन मन कुम कुम भर भर मारें ।
छिड़क रंग राधास्वामी रिझावें ॥ २ ॥
लाल गुलाल बस्त्र पहिनावें ।
देख देख रँग रूप निहारें ॥ ३ ॥

सुरत अबीर थाल भर लावें ।
नैनन की पिचकार छुड़ावें ॥ ४ ॥
राधास्वामी अपने हिये बिच धारें ।
उन सँग निस दिन प्रेम बढ़ावें ॥ ५ ॥
धरन गगन बिच धूम मचावें ।
राधास्वामी अब ऐसी होली खेलावें ॥६॥
चाँद सुरज दोउ खैंच मिलावें ।
सुषमन नदियाँ रंग बहावें ॥ ७ ॥
सुरत चुनरिया रंग रँगावें ।
भींजत निरत खोज धुन पावें ॥ ८ ॥
दल बादल अब अधिक सुहावें ।
लाल लाल चहुँ दिश घिर आवें ॥९॥
रंग भरे रँगही बरखावें ।
अचरज लीला आन दिखावें ॥ १० ॥
अस होली कहो कौन खेलावें
राधास्वामी भेद बतावें ॥ ११ ॥

******

॥ बचन चालीसवाँ ॥

॥ सावन हिंडोला व झूला ॥

॥ शब्द पहिला ॥

सावन मास आस हुइ झूलन ।
गरजत गगन मगन मन फूलन ॥ १ ॥
सखियाँ सज सज आईं ढँढूलन* ।
प्रेम भरी सुख सहज अमूलन ॥ २ ॥
कहा कहूँ बतियाँ नहिं खूलन ।
देख देख छबि मन सुध भूलन ॥ ३ ॥
गर्जन घन और बिजली चमकन ।
श्याम घटा मानो अति गज हूलन ॥४॥
देखत सुरत चढ़ी पद मूलन ।
झूलत शब्द हिंडोल अतूलन ॥ ५ ॥
सुन सुन धुन काटे सब सूलन ।
मानसरोवर मोती रूलन ॥ ६ ॥
राधास्वामी कहत सरस यह सावन ।
देख देख सब करत मगूलन† ॥ ७ ॥

* देखने । † आनन्द ।

॥ शब्द दूसरा ॥

सावन मास सुहागिन आईं ।
अपने पिया सँग झूलन धाईं ॥ १ ॥
श्याम घटा अब चहुँ दिस छाईं ।
गरज गगन अति धूम मचाईं ॥ २ ॥
नई रागनी तान सुनाईं ।
चमक धमक सँग खेल दिखाईं ॥ ३ ॥
असी धार छिन छिन बरखाईं ।
सुषमन नदियाँ प्रेम भराईं ॥ ४ ॥
गगन हिंडोला झोका लाईं ।
सखियाँ सँग की उमगत आईं ॥ ५ ॥
रस भर भर पिया सङ्ग लुभाईं ।
दामिन चमचम अधिक सुहाईं ॥ ६ ॥
मोर पपीहा रटन लगाई ।
अचरज बानी घोर सुनाई ॥ ७ ॥
राधास्वामी छबि निरखत हर्षाई ।
अजब समा सब देत बधाई ॥ ८ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

सुरत तू चेत री, अब सावन आया ।
गगन चढ़ झाँकरी, गुरु खेल दिखाया ॥ १ ॥

जहँ पड़ा हिँडोला नाम का, धुन डोर बँधाया।
सखी सहेली सब झूले, जग काम न आया ॥ २ ॥
मैं बिरहिन पिय दरस की, कहिं चैन न पाया।
अब खुल खेलूँ सुन में, गुरु भेद जनाया ॥ ३ ॥
रिमझिम बर्षा हो रही, मन मोर बोलाया।
पी की री बतियाँ सुन रही, मन चाव बढ़ाया ॥ ४ ॥
घट में कर सिंगार, पिया को आन रिझाया।
सखियन साथ बिलास, यह राधास्वामी गाया ॥ ५ ॥

॥ शब्द चौथा ॥

राधास्वामी झूलत आज हिँडोला।
गगन मँडल धुन अद्भुत बोला ॥ १ ॥
सुरत निरत सखियाँ मिल आईं।
झूमत घूमत रूप समाईं ॥ २ ॥
नैन निहारत दरस पुकारत।
राधास्वामी राधास्वामी नाम दृढ़ावत ॥ ३ ॥
चाँद सुरज दोउ खंभ सजे रे।
सुषमन चौकी लाल जड़े रे ॥ ४ ॥
बरन धार राधास्वामी बिराजे।
प्रेम मगन सब प्रीतम गाजे ॥ ५ ॥

अजब समा अचरज यह औसर ।
हंस हंसनी छोड़ा सरवर ॥ ६ ॥
देख बिलास मगन हुए भारी ।
सुध बुध भूले देह बिसारी ॥ ७ ॥
धूम मची आज अमर नगर मैं ।
झूलत राधास्वामी बैठ अधर मैं ॥८॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

अजब यह बँगला लिया सजाय ।
हंस सी रीझें देखत ताहि ॥ १ ॥
बैठ गये राधास्वामी ता मैं आय ।
करैं सब आरत सुर सँग गाय ॥ २ ॥
आज यह घड़ी सुहावन पाय ।
गई अब सब की दूर बलाय ॥ ३ ॥
हुई मैं पावन* सरन समाय ।
कहूँ क्या बँगला अजब दिखाय ॥ ४ ॥
रही मैं राधास्वामी महिमा गाय ।
सेत पद बँगला मोहिं सुहाय ॥ ५ ॥

* पवित्र ।

॥ शब्द छठवाँ ॥

सुरत मेरी चढ़ गई, गगन अटरियाँ ।
मैं धीरे धीरे चढ़ गई, गगन अटरियाँ ॥१॥
मैं लख लिये राधास्वामी, सुघड़ सुजनियाँ ।
मो हिँडार दई गलमैं, प्यारे गल बहियाँ ।
मैं धारा निज नैना मैं, ज्ञान अँजनियाँ ॥२॥

॥ शब्द सातवाँ ॥

पायगई राधास्वामी, हो गई सुहाग भरी ।
खिल गये कँवला, मैं पाय गई बन्ना ॥ १ ॥
निहार लई शोभा, मैं पार गई गगना ।
छोड़े बिकार, पाई सतगुरु सरना ॥ २ ॥

शब्द आठवाँ ॥

सुरत आज झूल रही ।
गुरु मिले झुलावनहार ॥ १ ॥
बर्षा ऋतु सखियाँ हर्षानीं ।
आईं सहेली लार ॥ २ ॥
शब्द हिँडोला पड़ा गगन मैं ।
झूल रही सुर्त नार ॥ ३ ॥
धुन की डोरी खिची अधर मैं ।
होत जहाँ झनकार ॥ ४ ॥

सभी सुहागिन गावन लागीं ।
कर कर प्रेम सिँगार ॥ ५ ॥
अजब अखाड़ा रचा सुन्न में ।
देखें नित्त बहार ॥ ६ ॥
गुरु सिंघासन धरा अधर में ।
बैठे लीला धार ॥ ७ ॥
दर्शन करत हिया उमगावत ।
खावत अमी अहार ॥ ८ ॥
भाग सरावत भक्ति बढ़ावत ।
भूल गई संसार ॥ ९ ॥
अधर धाम सतगुरु का डेरा ।
पहुँची खोल किवाड़ ॥ १० ॥
करे अनंद सदा सुख सागर ।
खोये सभी बिकार ॥ ११ ॥
आरत समा मिला भागन से ।
होत जीव उपकार ॥ १२ ॥
खेलें बिगसें संग गुरू के ।
पाया भेद अपार ॥ १३ ॥
सहसकँवल में खेल जमाया ।
खोला त्रिकुटी द्वार ॥ १४ ॥

सुन्न नगर में धूमा धामी ।
बजत सारंगी सार ॥ १५ ॥
हंस हंसनी रचा अखाड़ा ।
अचरज शोभा धार ॥ १६ ॥
कौन कहे महिमा उस घर की ।
अक्षर का दरबार ॥ १७ ॥
सुरत हंसनी देख तमाशा ।
आगे को पग धार ॥ १८ ॥
महासुन्न मैदान अनूपा ।
पहुँची सतगुरु लार ॥ १९ ॥
सुन सुन शब्द हुई मस्तानी ।
भँवरगुफा बंसी झनकार ॥ २० ॥
सत्य धाम सतनाम पियारा ।
छिन छिन मैं बलिहार ॥ २१ ॥
अलख पुरुष का खोज लगाया ।
कोटि अरब सूरज उजियार ॥ २२ ॥
अगम नाम का सुमिरन पाया ।
चली प्रेम की धार ॥ २३ ॥
आगे महल अनूप दिखाना ।
राधास्वामी अगम अपार ॥ २४ ॥

कँगुरे कँगुरे नूर अपारा ।
बैठे शोभा धार ॥ २५ ॥
सुरत निरत दोउ जाय समानी ।
पहुँची सब के पार ॥ २६ ॥
राधास्वामी अगम अनामी ।
कीन्हा उनसे प्यार ॥ २७ ॥

*****

॥ बचन इकतालीसवाँ ॥

॥ फुटकल शब्द ॥

॥ शब्द पहिला ॥

खोजत रही पिया पंथ, मर्म कोइ ने कन गाया ।
रैन दिवस बेचैन, तरसते जन्म बिताया ॥१॥
करता रहा पुकार, दाद को कहीं न पाया ।
भेष भिखारी जक्त गुरू, सब भरम माया ॥२॥
शब्द बिना खाली फिरें, सब धोखा खाया ।
अब मिल गये पूरे सतगुरू, उन भेद सुनाया ॥३॥
सुरत सार लखवाय के, फिर गगन चढ़ाया ।
गगन मँडल में पहुँच कर, अनहद बजवाया ॥४॥
जपी तपी मौनी बकी, जत जोग चलाया ।
यह मारग कोइ ना कहे, दुर्लभ दरसाया ॥ ५ ॥

धन्य संत और सतगुरू, जिन सार बुझाया ।
मनमत जग मैं फैलिया, गुरु मत नहिं आया ॥ ६
सुरतवंत बिरले कोई, जिन शब्द कमाया ।
राधास्वामी भेद दे, सब जीव चिताया ॥ ७ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

सुन्नी सुरत शब्द बिन भटकी ।
अटकी मन सँग दुख पाई ॥ १ ॥
भरमत फिरे चक्र की नाईं ।
उलट गई तन मैं छाई ॥ २ ॥
बिष खावत जग मैं झख मारत ।
समझ सोच धुर नहिँ लाई ॥ ३ ॥
सोवत रही मोह अँधियारी ।
जागन चौप नहीँ पाई ॥ ४ ॥

कड़ी १—जो सुरत कि सुन्न यानी चेतन्य मंडल की वासी थी शब्द की धार को छोड़कर इस संसार में भटक गई और मन का संग करके दुख पाती है ।

" २—और चक्र यानी चकई के मुवाफ़िक चंचल होकर भरम रही है और उलटी होकर देह में फैल गई ।

" ३—और भोगों में जो ज़हर से भरे हुए हैं वर्त कर जगत में टक्करें खाती है और अपने धुर मुक़ाम की समझ नहीं लाती है ।

" ४—और मोह के अंधकार यानी रात में बेहोश सो रही है और जागने का इरादा नहीं करती ।

इंद्री के बस पड़ी बिकल होय ।
काल कला घट मैं छाई ॥ ५ ॥
भोगन मैं अतिकर लिपटानी ।
रोग सोग दिन दिन खाई ॥ ६ ॥
बंधन बँधी जगत मैं गाढ़ी ।
बाढ़ी ममता रस पाई ॥ ७ ॥
जग ब्योहार लगा अति प्यारा ।
धारा उलटी यहँ आई ॥ ८ ॥
बिना मेहर सतगुरु पूरे के ।
कस उलटे कस घर जाई ॥ ९ ॥
सुषमन द्वार गगन का नाका ।
कठिन हुआ नहिँ सुधि पाई ॥ १० ॥

कड़ी ५—और इन्द्रियों के वस हो कर हर वक्त चंचल और बेकल हो रही है और इस सबब से काल की कला यानी ज़ोर घट में व्याप रहा है ।
" ६—और भोगों में लिपट कर दिन २ रोग और सोग सहती है ।
" ७—इस तरह जगत में बन्धन इसके खूब मज़बूत हो गये और थोड़ा २ रस पाकर हर एक चीज़ में पकड़ यानी मोह बढ़ गया ।
" ८—और जगत में बर्ताव प्यारा लगकर जो धार कि सुरत की ऊपर को चढ़नी चाहिये थी वह उलटी देह और संसार में बहने और बिख-रने लगी ।
" ९—जब ऐसा हाल होगया तो अब बिना मेहर पूरे सतगुरु के मुश्किल इसका ऊपर यानी निज घर की तरफ कैसे मोड़ा जावे ।
" १०—और इसी सबब से आकाश का द्वारा जो कि पहिला सुखमन स्थान है खुलना कठिन हो गया बल्कि उसकी सुध भी भूल गई ।

श्याम धाम से हुई न न्यारी ।
सेत पदम कस कस पाई ॥ ११ ॥
धुन की छाँट होत नहिँ भाई ।
कैसे सूरत धुन पाई ॥ १२ ॥
घट में बैठ निरख दृग द्वारा ।
यहँ से राह अधर जाई ॥ १३ ॥
घाटा तोड़ काल मति मोड़ो ।
कर्म काट ऊँचे जाई ॥ १४ ॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
समझ २ पग धर भाई ॥ १५ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

सुरत चल बावरी, क्यों घर बिसराया ।
सतगुरु के सँग लाग री, धुर ले पहुँचाया ॥१॥

कड़ी ११—और श्याम स्थान यानी काल के घेर से जुदा न हो सकी फिर सेत धाम जो इसका निज स्थान है कैसे पावे ।

" १२—और इसी सबब से धुन की छाँट भी नहीं हुई फिर निज धुन को कैसे प्राप्त होवे ।

" १३—अब चाहिये कि अपने घट में निश्चल होकर और नेत्रों के द्वारे को झाँक कर अन्दर को चले यही सड़क ऊँचे और निज देश की है ।

" १४—पहिली घाटी को कि जिसकी हद्द त्रिकुटी तक है तोड़ कर और काल का मुख मोड़कर और करमों को काटते हुए ऊंचे को चलना चाहिये ।

" १५—राधास्वामी दयाल फ़र्माते हैं कि इस रास्ते में निरख निरख और परख परख कर क़दम रखना चाहिये ।

घटपट पश्चिम खोलकर, पूरब दिखलाया ।
अजब खेल अद्भुत दशा, हंसन परसाया ॥२॥
संत मंडली सेत दीप, जा जोत जगाया ।
मौज निहारी सत्तपुरुष, धुन बीन सुनाया ॥३॥
अर्ध उर्ध के मध्य में, तीरथ परसाया ।
अंतर गति नहिं बूझते, तिन जन्म गँवाया ॥४॥
बिन सतगुरु यह बाट, कहो कोइ कैसे पाया ।
मेहर करें जा पर धनी, फिर रंक न राया ॥५॥
ग़ोता मार समुद्र में, मुक्ता चुन लाया ।
रतन माल हिरदे धरी, बेहद पहुँचाया ॥६॥
निरत सखी अगुवा, हुई जा शब्द समाया ।
राधास्वामी नाम यह, कोइ गुरुमुख पाया ॥७॥

॥ शब्द चौथा ॥

घट भीतर तू जाग री, हे सुरत पुरानी ।
बिना देश भ्फाँकत रही, सब मर्म भुलानी ॥१॥
काल दाव मारत रहा, पर तू न चितानी ।
अब सतगुरु की मेहर से, मौसम बदलानी ॥२॥
नर देही पाई सहज, सतसंग समानी ।
सुरत घाट अब पाइया, धुन शब्द पिछानी ॥३॥

यह मारग सन्तन कहा, पंडित नहिं जानी।
जिन यह मारग पाइया, सो छूटे खानी ॥४॥
श्याम कंज के घाट से, सूरत अलगानी।
चौथे पद में जा मिली, जहँ अचरज बानी ॥५॥
पंचम षष्टम पाय के, राधास्वामी जानी।
भाग सुहागिन पाइया, को करे बखानी ॥६॥

॥ शब्द पाँचवाँ ॥

सुरत घर खोज री। ऋतु मिलन मिली ॥१॥
शब्द घर सोच री। चढ़ महल चली ॥२॥
चंद्र पद पाय अली। ऋतु शरद खिली ॥३॥
घूमकर जाय अड़ी। तिल घोट पिली ॥४॥
धुन धाम रली*। गइ गगन गली ॥५॥
पिया सँग खेल रही। सब कर्म दली ॥ ६ ॥
बस्ती तन छूट गई। खिली कँवल कली ॥७॥
गुन इन्द्री त्याग दई। जड़ काल हिली ॥८॥
राधास्वामी ध्यान धरी†।
बिसरूँ नहिं एक पली ॥ ९ ॥

* उर्दू की पुस्तक और पहले एडिशन में पाठ इस तरह है ..."धुन धाम अनाम रली"।

† दूसरे एडीशन में "ध्यान धरी" की जगह "नाम धियाया है।

॥ शब्द छठवाँ ॥

चल अब सजनी पिया के देस ।
मिल अब गुरु से कर आदेस ॥ १॥
लखो फिर घट में पद जाय शेष ।
थके जहँ ब्रह्मा बिष्णु महेश ॥ २ ॥
गई नहिँ उनकी व्हाँ कुछ पेश ।
हार कर बैठे गौर गनेश ॥ ३ ॥
काल ने मारा गहि कर केश ।
संत बिन किया न घट परवेश ॥ ४ ॥
रहे सब क़ैदी माया देश ।
बचे नहिँ भोगेँ काल कलेश ॥ ५ ॥
मिलेँ जो सतगुरु कहँ सँदेश ।
मिटे फिर काल कर्म का लेश ॥ ६ ॥
धरा अब सूरत हंसा भेष ।
काल के तोड़ दिये सब नेश* ॥ ७ ॥
हुआ मैं राधास्वामी दर† दरवेश‡ ।
हुए अब राधास्वामी मेरे ख़ेश§ ॥८॥

* डंक । † दरवाज़ा । ‡ फ़क़ीर । § निज ।

॥ शब्द सातवाँ ॥

सखी चल देख बहार पिया की ।
चढ़ो घट सेज सँवार पिया की ॥ १ ॥
सुनो धुन गगना पार पिया की ।
निरख छबि देखी सार पिया की ॥२॥
अमी रस आई धार पिया की ।
सुर्त होगइ प्यारी नार पिया की ॥३॥
मैं होगइ जग को जार पिया की ।
गुरु कीन्ही सुरत गल हार पिया की ॥४॥
राधास्वामी खिलाई बाड़ पिया की ।
अब* झाँकी गली अगार पिया की ॥५॥

॥ शब्द आठवाँ ॥

गुरु निरखो री, हिये नैन खुलें ।
गुरु देखो री ॥ टेक ॥
घट के पट खोल चली, दल काल दले ।
गुरु पेखो री ॥ १ ॥
चित चोर लिया, गुरु चरन अली ।
मन नाव चढ़ी, सतगुरु बल्ली ॥ २ ॥

* दूसरे एडिशन में "अब" की जगह "मैं" है ।

भौजल के पार पिली, गुरु पदम रली।
धुन ध्यान मिली, सुत कँवल खिली॥ ३॥
सब कर्म जली, निःकर्म चली।
घट खोज पिली, चढ़ गगन गली॥ ४॥
बिरह बान खली, तब कँवल खिली।
गुरु रूप लखी, पिय पास पली॥ ५॥
अमृतघटधारचली, निसदिनमैंन्हाऊँअली
मेरा भाग उदय, सत शब्द मिली॥ ६॥
काल करम घर आग लगी।
सब पूँजी माया जाल जली॥ ७॥
फिर खोदत खोदत खान खुली।
क्या हीरे मोती लाल बली॥ ८॥
निज काया काल की जाल गली।
माया दल मारा दलन दली॥ ९॥
मैं सुमति दुवारा खोल चली।
गुरु चरन पकड़ धुर धाम वली॥ १०॥
अब आरत पूरन करत चली।
गुरु प्रेम बढ़ावत घाट घुली॥ ११॥
गुरु चरन पकड़ कहुँ नाहिं टली।
फिर चरन सरन में आन हिली॥१२॥

दम दम मेरे चरन अधार कली ।
कल नाहिं पिया बिन बेकली* ॥ १३ ॥
कोइ परखत बेदन होत बली ।
नहिं जानत बेद कतेब तली† ॥ १४ ॥
राधास्वामी चरन पकड़ हेली ।
तन मन से सूरत अधर चली ॥ १५ ॥

॥ शब्द नवाँ ॥

घुड़ दौड़ करूँ मैं घट में ।
मुझे मिले सिपाही संत री ॥ १ ॥
मैं चेत चली अब तट में ।
घट आदि‡ अनादी अंतरी ॥ २ ॥
सूरत की सूरत निरत चली ।
पिया पाये सरोवर तंत री ॥ ३ ॥
मन तोड़त तन अकुलाना ।
क्या बर्न करूँ अंतरी ॥ ४ ॥
मेरे कँवल दलन पर भँवरा ।
क्या कहूँ गुनावन कंत री ॥ ५ ॥

* व्याकुल । † नीचे । ‡ उर्दू की किताब और पहिले एडिशन में "आदि" की जगह "नाद" है ।

अब परसूँ पिय पद आज ।
पढ़ूँ गुरु मंत री ॥ ६ ॥
मेरे भाग बड़े क्या भाखूँ ।
शशि सूर अनेकन दंत री ॥ ७ ॥
तारागन गगन घुमाये ।
गुरु महिमा कहूँ बेअंत री ॥ ८ ॥
मैदान उलट घट झाँकी ।
घर मारे काल गजंत री ॥ ९ ॥
मेरे सतगुरु सूरे पूरे ।
दल मारें काल अनंत री ॥ १० ॥
रस बेद राज रजधानी ।
गुरु बैठे आज मसंद री ॥ ११ ॥
मेरे गुरु का दरस कोइ देखे ।
हो जावे दूर परंद री ॥ १२ ॥
धुन शब्द सुनी जहँ नाद री ।
जहँ हारे कृष्ण और नंद री ॥ १३ ॥
यह भेद मिला मोहिं अब की ।
घट कीन्हा आदि मथंत री ॥ १४ ॥
मैं पकड़े चरन गुरू के ।
नहिँ बिछड़ूँ कोटि जुगंत री ॥ १५ ॥

क्या शेष महेश न जाने ।
मेरी महिमा कहत कहंत री ॥ १६ ॥
हरि द्वारे अटके सबहीं ।
सतगुरु पद जानैं न पंथ री ॥ १७ ॥
यह अगम भेद रस भारी ।
कोइ पावे प्रेम मनंत री ॥ १८ ॥
मैं किंकर दासन दासा ।
क्या बरनूँ सोभा अंतरी ॥ १९ ॥
गुरु मिले दयाल गुसाईं ।
मैं पहुँची धुर घर कंत री ॥ २० ॥
कोटिन रबि रोम बिराजत ।
क्या सोभा बरनूँ संत री ॥ २१ ॥
राधास्वामी दीनदयाला ।
यह भाखैं बचन पुखंत री ॥ २२ ॥

॥ शब्द दसवाँ ॥

सूरत रल घोर सुनावत भारी ।
गुरु चरन कँवल मेरे हिये अधारी ॥१॥
मैं चरन गुरू पर जाउँ बलिहारी ।
जग भोग लगे सब खारी ॥ २ ॥

मैं मारूँ जक्त कुल तारी ।
क्यौं भूलो भूल अनाड़ी ॥ ३ ॥
गुरु मंत सुनो अब आ री ।
नहिँ नर्कन बीच दुखारी ॥ ४ ॥
गुरु महिमा अगम सुना री ।
नहिँ जोत निरंजन गा री ॥ ५ ॥
गति ब्रह्मा बिष्णु कहा री ।
क्या देवी देव पुकारी ॥ ६ ॥
सब बहे चौरासी धारी ।
गुरु बिन कोइ उतरे न पारी ॥ ७ ॥
या ते सब पकड़ो गुरु चरना री ।
क्यौं बहते भौजल धारी ॥ ८ ॥
गुरु आदि पुरुष जग आये ।
सब हंस जीव चेताये ॥ ९ ॥
कउवों से दूर रहाये ।
निज प्रेमी खैंच बुलाये ॥ १० ॥
तब काल करम मुरझाये ।
माया भी सिर धुन रही पछताये ॥ ११
गुरु अगम देस अब दीन्हा ।
मैं कहँ लग बरनूँ महिमा ॥ १२ ॥

मुझे लगें गुरू अति प्यारे ।
ज्यों चंद्र चकोर निहारे ॥ १३ ॥
गुरू रूप दीप* उजियारे ।
मैं पतँग समान तन जारे ॥ १४ ॥
चुम्बक लख लोह खिँचा रे ।
यों चरन गुरू मैं धारे ॥ १५ ॥
मैं जिऊँ अधार गुरु प्यारे ।
मैं बंधन तोड़ तरा† रे ॥ १६ ॥
अब चढ़ूँ गगन घट पारे ।
वहाँ से सतपुर पग धारे ॥ १७ ॥
लख अलख अगम उजियारे ।
राधास्वामी धाम समा रे ॥ १८ ॥
यह आरत करूँ सदा रे
राधास्वामी फेर बुला रे ॥ १९ ॥

॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥

गुरू सँग जागन का फल भारी ॥टेक॥
सेवा मिले दरस पुनि पावे ।
बचन सुनत गुलज़ारी ॥ १ ॥

* दीपक । † तर गया ।

रोम रोम हर्षत चित मंदर ।
अंदर खिलत कियारी ॥ २ ॥
सोभा अधिक सुगंधित बन बन ।
भँवर चक्र फुलवारी ॥ ३ ॥
इंद्री द्वार कँवल दल न्यारी ।
सूरत अग्र* चितारी ॥ ४ ॥
नैन बैन सतगुरु सुन निरखत ।
कँवल खिलत उजियारी ॥ ५ ॥
मारग छेक भकत माया मन ।
निरत होत सुखियारी ॥ ६ ॥
सागर तोल बुन्द गति सिन्धा ।
अधर चढ़त पिउ प्यारी ॥ ७ ॥
कोमल धाम कँवल रबि भूमी ।
भावन भार निकारी ॥ ८ ॥
श्यामा सरस नील गिर सारी ।
धारी धरन उठा री ॥ ९ ॥
गुरु पद नाम अगम गम प्यारी ।
को कह सकत पुकारी ॥ १० ॥

* आगे ।

सूरत चढ़ी अधर पद डंडा ।
अंडा फोड़ निहारी ॥ ११ ॥
मैं तो अजान मर्म नहिँ जाना ।
राधास्वामी कीन्ह दया री ॥ १२ ॥

॥ शब्द बारहवाँ ॥

निरखो री कोइ उठकर पिछली रतियाँ ॥ टेक ॥
माया छलन तरँग मन रोकन ।
घट में कँवल खिलतियाँ ॥ १ ॥
सीतल सागर मीन मर्म जस ।
न्हावत मल मल गतियाँ ॥ २ ॥
सिला उठाय कँवल दल फोड़त ।
तोड़त द्वार सुनत जहँ बतियाँ ॥ ३ ॥
चमक जोत धारा धुन झाकियाँ ।
मन माया कूटत जहँ छतियाँ ॥ ४ ॥

कड़ी १—पिछली चार घड़ी पहिले सूरज के निकलने से सुबह तक रात के वक्त अभ्यास करने से माया को छलने और मन की तरंग रोकने की किसी कदर ताक़त आवेगी, और घट में कंवल का भी दर्शन होगा॥

" २—तब सुरत मछली की तरह सीतल सागर में अस्नान करके सफ़ाई हासिल करेगी ॥

" ३—पहिले परदे को उठाकर और श्याम कँवल का दल फोड़कर यानी तीसरे तिल के अन्दर सुरत ने धस कर शब्द की आवाज़ सुनी ॥

" ४=जोत की चमक और वहाँ की धुन की धार मालूम हुई, और मन और

हरख हरख धावत पद उत्तम ।
तम संसार सकल बिनसतियाँ ॥ ५ ॥
मौज निहार पुरुष घर पावत ।
धावत सुरत निरतियाँ ॥ ६ ॥
पीवत अमी झकोल कँवल पद ।
केल करत सत मतियाँ ॥ ७ ॥
को कह सके नाम की महिमा ।
संत बतावत जो गति पतियाँ ॥ ८ ॥
राधास्वामी कहत सुनाई ।
मूल मिलो चढ़ हटियाँ ॥ ९ ॥

कड़ी माया वहाँ पर छाती कूटने लगे कि यह अभ्यासी सुरत हमारी हद्द से निकल गई ॥

" ५—और खुश होकर सुरत वहाँ से आगे को बढ़ती चली और संसार यानी त्रिलोकी की माया का अँधेरा दूर हुआ ॥

" ६—राधास्वामी दयाल की मौज के अनुसार सुरत और निरत सत्तलोक की तरफ़ को दौड़ने लगीं ॥

" ७—सुरत ऊपर को चढ़ कर और दसवें द्वार में अमी का रस लेती हुई और वहाँ से आगे बढ़कर सत्तशब्द के साथ विलास करती हुई चलती है ॥

" ८—सन्तों के नाम की महिमाँ कोई नहीं कर सकता है वे आपही उसकी गत और पत वर्णन करते हैं ॥

" ९—राधास्वामी दयाल समझाकर फ़र्माते हैं कि मूल पद से मिलना चाहिये रास्ते के मुक़ामात तै करके ॥

॥ शब्द तेरहवाँ ॥

सोधत सुरत शब्द धुन अंतर ।
घटत तिमर नभ बासी ॥ १ ॥
चमकत चाँप धनुष गति न्यारी ।
कंज जोत छिटकत उजियासी ॥ २ ॥
गगन गंग धारा उठ धावत ।
होत जहाँ निर्मल गति स्वाँसी ॥ ३ ॥
जमुना तीर श्याम खुल खेलत ।
गोप गूजरी करत बिलासी ॥ ४ ॥
जसुदानंद कंस रिपु सुन्दर ।
धमक सुनत तज आसी ॥ ५ ॥

कड़ी १—अभ्यासी सुरत शब्द धुन छाँट कर पकड़ती हुई नभ में पहुँची और नीचे के अंधकार से न्यारी होगई ॥

" २—इस तौर से तीर की भाल के मुवाफ़िक़ चमकती हुई तीसरे तिल से जो कि धनुष स्थान है पार होकर जोत का प्रकाश देखने लगी [धनुष स्थान इस सबब से कहा कि दोनों आँखों से धारें कमान के मुवाफ़िक़ मिलती हैं] ॥

" ३—अब वहाँ से [अर्थात सहसदल कँवल से] सुरत की धार जो कि गंगा की धार है गगन की तरफ़ को दौड़ी जहाँ पहुँच कर प्राण निर्मल होते हैं ॥

" ४—और रास्ते में जमुना के किनारे (अर्थात बाईं तरफ़) मन खुल कर सैर करता जाता है और सुरत भी उसके विलास को देखती जातीहै [गोपी रूप गूजरी अर्थात सुरत जो इंद्रियों से न्यारी होगई है] ॥

" ५—और वही मन जो कि कृष्ण है ऊपर की आवाज़ सुन कर जगत की आस छोड़ कर,

घूमत अधिक धधक धुन धावत ।
पावत काल तरासी ॥ ६ ॥
बिमल नगर जहँ घोर अखाड़ा ।
खोजत रही नाम गति पासी ॥ ७ ॥
मीन मानसर भँवर कंज पर ।
भृंगी होत समझ गुन ता सी ॥ ८ ॥
राधास्वामी उठत धाम धुन ।
बैठ मगन अबिनासी ॥ ९ ॥

॥ शब्द चौदहवाँ ॥

मेल करो निज नाम गुसइयाँ ।
मेल करो निज नाम ॥ टेक ॥
गुरु के चरन धार रहूँ हिये में ।
खुले सेत और पुर्याम ॥ १ ॥

कड़ी ६—निहायत धूम धाम के साथ धुन की धधकार पकड़ कर ऊपर को दौड़ता है और काल मुरझाता जाता है ॥

" ७—चढ़ते चढ़ते सुरत विमल नगर (अर्थात सुन्न) में जहाँ हंसों के अखाड़े जमा हैं पहुँची और नाम की गति वहाँ खोज कर अच्छी तरह से पहचानी ॥

" ८—फिर सुरत मछली की तरह मानसरोवर में और भँवर की तरह गुफा में सैर करती हुई सत्तलोक में पहुँच कर भृंगी अर्थात सतगुरु स्वरूप की गति को प्राप्त हुई ॥

" ९—और वहाँ से राधास्वामी धाम में राधास्वामी धुन सुनती हुई पहुँच कर मगन होगई और अविनाशी रूप हो कर वहाँ विश्राम किया ॥

दुक्ख हटावन खेद मिटावन ।
टारन काल और जाम ॥ २ ॥
ऐसे गुरु का ध्यान सम्हारन ।
पहुँच तिरकुटी धाम ॥ ३ ॥
मन और सुरत मान मद त्यागे ।
खोज लिया सतनाम ॥ ४ ॥
उलटी घाटी चढ़कर झाँकी ।
सीतल हुई छुटी कलि घाम ॥ ५ ॥
मैं चकोर चंदा धुन पाई ।
छूट गई दिशा बाम ॥ ६ ॥
काल नगर की हद्द छुड़ानी ।
दयाल गुरू दीन्हा आराम ॥ ७ ॥
सुरत समानी शब्द ठिकानी ।
पाया सुन्न गिरास ॥ ८ ॥
आरत करूँ प्रेम रस भीनी ।
सतगुरु चरन मिला बिस्राम ॥ ९ ॥
राधास्वामी नाम अनामी ।
भेद दिया अब मूल मुक़ाम ॥ १० ॥

॥ शब्द पंद्रहवाँ ॥

भरमी मन को लाओ ठिकाने ।
प्रात लगे गुरु चरन समाने ॥ १ ॥
दुबिधा छूटे मति बदलाने ।
सुमिरन टेक तुम्हारी आने ॥ २ ॥
तुम बिन भर्म भुलाना भारी ।
जहाँ तहाँ की अटक सम्हारी ॥ ३ ॥
बिन सतसंग बूझ नहिं आवे ।
भाग बिना सतसंग न पावे ॥ ४ ॥
क्योंकर कहूँ ब्यौंत नहिं कोई ।
तुम दयाल कुछ कहो बिलोई ॥ ५ ॥
चरनामृत परशादी देना ।
और उपाव नहीं क्या कहना ॥ ६ ॥
इतना काम सदा तुम करना ।
तौ कारज उसका भी सरना ॥ ७ ॥
उसकी तरफ़ से आरत करो ।
प्रीत प्रतीत चित्त में धरो ॥ ८ ॥
तब कुछ फल पावेगा थोड़ा ।
तौ मन मत जावे चित मोड़ा ॥ ९ ॥

राधास्वामी कहें समझाई ।
करो आरती प्रीत लगाई ॥ १० ॥

॥ शब्द सोलहवाँ ॥

सुत बन्नी गुरु पाया बन्ना ।
देख दरस छिन छिन मन भिन्ना ॥१॥
तुरिया घोड़ी सहज सिंगारी ।
धीरज पाखर ता पर डारी ॥ २ ॥
चाँद सुरज दोउ करीं रकाबें ।
गगन ज़ीन ला पीठ धरावें ॥ ३ ॥
बिजली पवन चाल चली घोड़ी ।
फेर लगाम एड़ दे मोड़ी ॥ ४ ॥

कड़ी १—प्रेमी सुरत को जब सतगुरु प्रीतम मिले, तब उनका दर्शन करके मन छिन छिन मगन हुआ ॥

" २- तुरिया यानी चेतन्य आतमा की धार को घोड़ी बना कर उस पर धीरज की पाखर डाली, यानी धीरज के साथ उस पर सतगुरु सवार हुए ॥

" ३—चाँद सूरज यानी इड़ा और पिंगला की रकाबें बनाईं और गगन यानी चेतन्य आकाश रूपी ज़ीन उस पर धरी ॥

" ४—इस तरह सतगुरु उस तुरिया की घोड़ी यानी चेतन्य धार पर सवार होकर बिजली और पवन की चाल के मुवाफ़िक़ चले, और लगाम यानी मुख उस धार का घर की तरफ़ मोड़ कर ऊपर चढ़ने के वास्ते ज़ोर दिया यानी एड़ लगाई ॥

हीरे लाल झालरें मोती ।
मानिक पन्ना वारूँ जोती ॥ ५ ॥
ता पर बन्ना करी असवारी ।
बिजली चाल पवन धधकारी ॥ ६ ॥
चल बरात पहुँची गगनापुर ।
बन्नी बन्ना मिले शिष्य गुर ॥ ७ ॥
ब्याह हुआ और फेरे डाले ।
बन्नी ले बन्ना घर चाले ॥ ८ ॥
घर में धसे मात पितु हर्षे ।
प्रेम मगन मानो बादल बर्षे ॥ ९ ॥

कड़ी ५—ऐसे सतगुरू के ऊपर हीरे लाल और मोती की झालरें और माणिक पन्ना और जोत स्वरूप को (जो मुराद शब्दों की धुन और स्थानों के स्वरूप से है) वार दूँ। असल में जैसे कि सुरत चढ़ती जाती है सब रास्ते के स्थान और वहाँ की रचना सतगुरू पर अपने आपे को वारते हैं, यानी नीचे पड़ते चले जाते हैं ॥

" ६—ऐसी चेतन्य धार की घोड़ी पर सतगुरू बन्ने सवार हुए, और वह धार बिजली और पवन की चाल और ज़ोर शोर के साथ चली और चढ़ी ॥

" ७—चलते चलते सतगुरू और प्रेमी सुरत और बरात यानी और सतसंगी और सतसंगिनों की सुरतें त्रिकुटी में पहुँचीं और वहाँ सतगुरू और सेवक का मेला हुआ ॥

" ८—और प्रेमी सुरत सतगुरू की परिक्रमा करके उनके साथ घर को चली ॥

" ९—जब सत्तलोक में पहुँचे तब सत्तपुरुष (जो कि कुल रचना के माता पिता हैं) देखकर मगन हुए, जैसे कि बादल की बर्षा होती है इसी तरह प्रेम और आनंद की वर्षा होने लगी ॥

मोती हीरे लाल जवाहिर ।
बुआ बहिन मिल किये निछावर ॥१०॥
करें आरत हँस बन्ना बन्नी ।
हंस पुकारें धन्ना धन्नी ॥ ११ ॥
राधास्वामी रलियाँ मन्नी ।
मगन हुए भइया और बहिनी ॥ १२ ॥

॥ शब्द सत्रहवाँ ॥

धुन धुन धुन डालूँ अब मन को ।
मैं धुनियाँ सतगुरु चरनन को ॥ १ ॥
मन कपास सूरत कर रूई ।
काम बिनौले डाले खोई ॥ २ ॥
हुई साफ़ धुन की सुधि पाई ।
नाम धुना ले गगन चढ़ाई ॥ ३ ॥

कड़ी १०—मोती हीरे लाल और जवाहिर, बुआ और बहन यानी हंस और हंसिनियों ने न्योछावर किये, यानी सत्त शब्द की धुनों की जो हर एक हीरा मोती और लाल रूप है सतगुरू और प्रेमी सुरत पर वर्षा होने लगी ॥

" ११—फिर सतगुरू और प्रेमी सुरत ने मगन होकर उमँग सहित सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की आरत उतारी, और चारों तरफ़ से हंस धन्य २ पुकारने लगे ॥

" १२—यह कैफ़ियत देख कर राधास्वामी दयाल मगन और प्रसन्न हुए और हंस हंसिनी भी इस बिलास में शामिल होकर आनंद को प्राप्त हुए

गाली मनसा गाले कर्मा ।
चरखा चला कते सब भर्मा ॥ ४ ॥
सूत सुरत बारीक निकासा ।
कुकड़ी कर किया शब्द निवासा ॥५॥
चित्त अटेरन टेर सुनाई ।
फेर फेर कँवलन पर लाई ॥ ६ ॥
कँवल कँवल लीला कहा गाऊँ ।
सुन सुन धुन निज मन समझाऊँ ॥७॥
सुरत रँगी करे शब्द बिलासा ।
तजी बासना बेची आसा ॥ ८ ॥
निकर पिंड सुन पैठ समाई ।
सौदा पूरा किया बनाई ॥ ९ ॥
राधास्वामी हुए दयाला ।
नफ़ा लिया खोला घट ताला ॥ १० ॥

॥ शब्द अट्ठारहवाँ ॥

ठुमरी अब करी है बखानी ।
सुरत चली ठुमठुम अगवानी ॥ १ ॥
मिल गया प्यारा झँझरी झाँकी ।
कहूँ कहा सोभा अब व्हाँ की ॥ २ ॥

किंगरी धुन अजब बजाई ।
सारंगी धुन वहाँ रही छाई ॥ ३ ॥
यह ठुमरी कोइ साध बिचारी ।
जोगी जती रहे सब हारी ॥ ४ ॥
राधास्वामी कह कर भाखी ।
सेवक देखें खुल खुल आँखी ॥ ५ ॥

॥ शब्द उन्नीसवाँ ॥

गुरु अचरज खेल दिखाया ।
सुत नाम रतन घट पाया ॥ १ ॥
बकरी ने हाथी मारा ।
गऊ कीन्हा सिंघ अहारा ॥ २ ॥
चींटी चढ़ गगन समाई ।
पिंगला चढ़ पर्बत आई ॥ ३ ॥
गूँगा सब राग सुनावे ।
अंधा सब रूप निहारे ॥ ४ ॥

कड़ी १—गुरू ने दया कर के अचरज रूपी खेल घट में दिखाया, सुरत को नाम रूपी रतन यानी दसवें द्वार का शब्द प्राप्त हुआ ॥
" २—सुरत ने मन को जीता और फिर सुरत ने काल को मारा ॥
" ३—सुरत चढ़कर गगन में पहुँची। जो मन कि दौड़ना यानी चंचलता छोड़कर निश्चल होगया वही पर्वत पर चढ़ गया यानी त्रिकुटी में पहुँचा ॥
" ४—जो शख़्स कि दुनियाँ की तरफ़ और अंतर में बोलने से चुप हुआ

मक्खी ने मकड़ी खाई ।
भुनगे ने धरन तुलाई ॥ ५ ॥
धरती चढ़ बृक्षा बैठी ।
पक्षी ने पवन चुगाई ॥ ६ ॥
जंगल सैं बस्ती व्याही ।
बस्ती सब ख़िलक़त खाई ॥ ७ ॥
मूसे से बिल्ली भागी ।
पानी सैं अग्नी लागी ॥ ८ ॥
कौवा धुन मधुरी बोले ।
मेंडक अब सागर तोले ॥ ९ ॥

कड़ी — वही शब्द की धुनें सुनने लगा, और जिस किसी ने बाहर से अपनी दृष्टि बन्द की वही अन्तर में सब देखने लगा ॥

" ५—मक्खी नाम सुरत का है जो मकड़ी यानी माया के घेरे में जब तक थी उसका खाजा हो रही थी और जब कि दसवें द्वार की तरफ़ उलट कर पहुँची तब माया को निगल गई—भुनगे यानी जीव या सुरत ने सूक्ष्म शरीर को समेट कर आकाश में उठा लिया ॥

" ६—सुरत चढ़ कर त्रिकुटी में पहुँची-मन जो सैलानी था जब चढ़कर त्रिकुटी में पहुँचा तब प्राण पवन को निगलता चला गया ॥

" ७—बस्ती यानी रचना (और रचना कराने वाली नाम सुरत का है) सो उसने पिंडरूपी जंगल में उतर कर रचना की और फिर जब उलट कर त्रिकुटी या दसवें द्वार में पहुँची तब पिंड और ब्रह्मांड की रचना को निगल गई यानी समेट गई ॥

" ८—चढ़ने वाली सुरत को देखकर माया हट गई--अमी की धार जो कि सहसदल कँवल के मुक़ाम पर आई वही जोति स्वरूप होकर रोशन हो रही है और वही माया का स्वरूप है और वही अग्नि है ।

" ९—जो मन कि पहिले कड़ुआ वाक्य बोलता था और अपने मतलब के

मूरख से चतुरा हारा ।

धरती में गगन पुकारा ॥ १० ॥

राधास्वामी उलटी गाई ।

उल्लू को सूर दिखाई ॥ ११ ॥

॥ शब्द बीसवाँ ॥

अंत हुआ जग माहिं ।

आदि घर आपना भूली ॥ १ ॥

मध्य गही पुनि आय ।

अंत को फिर ले तोली ॥ २ ॥

कड़ी लिये औरों को दुख देता था वही त्रिकुटी में चढ़कर मीठी बोली के साथ राग रागिनी सुनाता है–पिंड में नीचे का मन जो मेंडक के मुवाफ़िक़ थोड़ी ही हद में उछलता कूदता था त्रिकुटी में चढ़ कर भौसागर की तौल और नाप करता है ।

" १०–मन जो कि पिंड में बैठकर मूरखता से भोगों में फँस रहा था अब गुरु कृपा से घट में चढ़ कर त्रिकुटी में पहुँचा तब काल जिसने चतुराई करके जाल बिछाया था उससे हार गया और फिर धरती यानी पिंड में त्रिकुटी के शब्द की धुनें फैलीं ॥

" ११–राधास्वामी ने सुरत और मन के उलटने का यह हाल बर्णन किया और जो जीव कि उल्लू के मुवाफ़िक़ ब्रह्मरूपी सूरज का दर्शन नहीं कर सकते थे उन को त्रिकुटी में चढ़ाकर ब्रह्म का दर्शन कराया ।

" १–सुरत भोगों में फँस कर जड़ स्थान में उतर गई और संतों के दसवें द्वार को जो तीन लोक की रचना का आदि है और जहाँ से सुरत पिंड में उतरी थी भूल गई ।

" २–और फिर मध्य यानी मृत्यु लोक में नर देही पाकर तिरलोकी के अन्त पद की जो कि वही दसवाँ द्वार है सुरत ने खबर ली ॥

आदि अन्त मध छोड़ ।
गही जा अपनी मूली ॥ ३ ॥
जीवन पदवी मिले ।
चढ़े जो अबके सूली ॥ ४ ॥
ससे मारिया सिंघ ।
कौन यह समझे बोली ॥ ५ ॥
मात पिता दोउ जने ।
पूत ने बैठ खटोली ॥ ६ ॥
मछली चढ़ी अकाश ।
धरन कर डारी पोली ॥ ७ ॥

कड़ी ३—और फिर इन तीनों स्थान यानी दसवाँ द्वार और मृत्यु लोक और जंड़ खान को छोड़कर अपने मूल पद यानी सत्तपुरुष राधास्वामी देश में पहुँची, या उसका निशाना और इष्ट बाँधकर उस तरफ़ को चलने लगी ॥

" ४—सूली मतलब उस धार से है जो सहसदल कँवल से गुदा चक्र तक आई है सो जो कोई उस धारको पकड़ कर ऊपर को चढ़े, वही छठे चक्र के पार जाकर मौत को जीत लेगा और फिर सत्त लोक में पहुँच कर अमर हो जावेगा ॥

" ५—और फिर वही सुरत जोकि मुवाफ़िक़ ख़रगोशके पिंड में ग़रीब और निबल थी दसवें द्वार में पहुँच कर सिंह यानी काल को मार लेगी

" ६—जब सुरत गर्भ में यानी षटचक्र के देश में आई, तब पहिले उसने ब्रह्मांड और पिण्ड की रचना करी, यानी माया और ब्रह्मके पद उसी से प्रगट हुए, और जब सुरत जन्मी यानी जीव गर्भ से बाहर आया तब वही जीव पिंड में उतर कर बैठने से माया और ब्रह्म का पुत्र हो गया ॥

" ७—और जब सुरत मछली की तरह शब्द की धार को पकड़ कर उलटी

चाँद सूर पाताल से ।
निकले पट खोली ॥ ८ ॥
चोरन पकड़ा साह ।
साह ने पहिरी चोली ॥ ९ ॥
अमृत पी पी मरें ।
ज़हर की गाँठी खोली ॥ १० ॥
राधास्वामी गाइया ।
यह भेद अमोली ॥ ११ ॥
संत बिना को बूझि है ।
यह मर्म अतोली ॥ १२ ॥

कड़ी　यानी ऊपर को चढ़ी तब वह घरन यानी पिंड को पोला या ख़ाली कर गई ॥

" ८—और जब चढ़ते २ दसवें द्वार के परे गई तब सूरज और चाँद यानी त्रिकुटी और सुन्न स्थान दोनों पाताल यानी नीचे नज़र आई दिये ॥

" ९—जब सुरत यानी जीव का उतार हुआ तब काल और करम और काम क्रोध लोभ मोह और अहंकार वगैरह चोरों ने इस को घेर कर बंद यानी चोले में गिरफ़ार कर लिया ।

" १०—और जब वही जीव यानी सुरत उलट कर अपने घर की तरफ़ को चली और ब्रह्मांड के परे चढ़ गई और अमी की धारा बहने लगी तब वही सब चोर अमृत पी कर मर गये और उनकी ज़हर की गाँठ खुल कर भस्म हो गई ॥

" ११—राधास्वामी ने यह अमोल पद का अमोल भेद गाया ॥

" १२—और इस को बिना संत के कोई नहीं समझ सकता है ।

अजा मारिया भेड़िया ।
ले सिरगन टोली ॥ १३ ॥
सुरत शब्द मेला भया ।
ले अनरस घोली ॥ १४ ॥

॥ शब्द इक्कीसवाँ ॥

गुरु उलटी बात बताई ।
मूरखता खूब सिखाई ॥ १ ॥
सोते ने जमा कमाई ।
जगते ने माल गँवाई ॥ २ ॥

कड़ी १३—अजा बकरी को कहते हैं सो यह सूरत सुरत की पिंड में थी यानी काल भेड़िये का खाजा हो रही थी. सो जब सतगुरु की कृपा से उलटकर ब्रह्मांड और उसके परे पहुँची तो मन और इंद्रियों को संग लेकर काल भेड़िये पर चढ़ आई और उसको मार लिया ॥

" १४—और तब सुरत का शब्द के साथ मेला हो गया यानी अमृत भंडार खोल दिया ॥

" १—गुरू ने यह उलटी बात बताई कि संसार में मूर्ख होकर के बरत यानी चतुराई छोड़ दे, तो तेरा कोई दामन नहीं पकड़ सकेगा और दूसरे यह कि मूर यानी मूल पद की रक्षा और सम्हाल रख यानी इस तरफ़ से उलट कर राधास्वामी के चरनों को दृढ़ करके पकड़ ॥

" २—जिस किसी ने संसार की तरफ़ से उदास होकर इसके कारोबार में दखल देना छोड़ दिया यानी इस तरफ़ से सो गया और परमार्थ में लग गया उसी ने जमा हासिल की, यानी परमार्थ की कमाई कर के प्रेम की दौलत पाई, और जो संसार की तरफ़ मुतवज्जह रहा, और बहुत होशियारी और शौक़ से उसके कारोबार करता रहा, उसीने परमार्थ की दौलत खोई, और अपनी चेतन्यता मुफ़्त गँवा दी ॥

बैठे ने रस्ता काटा ।
चलते ने बाट न पाई ॥ ३ ॥
धरती चढ़ गगना आई ।
सुन्नी पाताल समाई ॥ ४ ॥
चोरी से ख़ाविंद रीझा ।
सच्चे को मार खपाई ॥ ५ ॥
अग्नी को जाड़ा लागा ।
बर्षा से सूखी साखा ॥ ६ ॥

कड़ी ३—जो मन कि निश्चल होकर घट में बैठा वही ऊँचे की तरफ़ चढ़ने लगा और परमार्थ का रास्ता तै करता हुआ घर की तरफ़ चला और जो मन कि चंचल रहा और इधर उधर संसार में दौड़ता रहा उस को घर का रास्ता नहीं मिला और न उस तरफ़ को चला ॥

" ४—जो सुरत कि अभ्यास करके ब्रह्मांड में और उसके परे पहुँची उसके संग धरती यानी माया भी जिसका आदि निकास त्रिकुटी से हुआ है उलट कर अपने असल में जा मिली और जो सुरत कि संसार में लिपट रही वह माया के साथ नीचे से नीचे के मुक़ाम तक उतरती चली गई ॥

" ५—जो शख़्स कि अपने परमार्थ की कमाई और तरक़्क़ी को जगत से छिपाये हुए चला उससे मालिक प्रसन्न हुआ और जिस किसी ने कि सचौटी के साथ अपने परमार्थ का भेद और कमाई का हाल जगत के जीवों से खोलकर कहा उसी को अनेक तरह के विघनों से मुक़ाबला करना पड़ा और सख़्त तकलीफ़ उठानी पड़ी और उसके परमार्थ में घाटा हुआ ॥

" ६—जब सुरत गगन की तरफ़ को चढ़ने लगी तब अग्नी यानी माया (जो सुरत की मदद से चेतन्य थी) काँपने लगी, यानी उसकी चेतन्यता खिंच गई, और जब अमृत की वर्षा अंतर में चढ़ने वाली

रोटी नित भूखी तरसे ।
पानी अब प्यासा तड़पे ॥ ७ ॥
सोते पर खाट बिछाई ।
जगते को सुषपति आई ॥ ८ ॥
बंझा नित जनती हारी ।
जनती पुनि बाँझ कहाई ॥ ९ ॥
घोड़े पर पृथ्वी दौड़ी ।
ऊँटन चढ़ गगना फोड़ी ॥ १० ॥

कड़ी सुरत पर होने लगी, तब बसबब खिंचाव और सिमटाव सुरत के जो उसकी धारें नीचे की तरफ़ जारी थीं वह सूखने लगीं और सिमटती चलीं ॥

" ७ और तब रोटी यानी माया और उसके पदार्थ जो सुरत की धार से चेतन्य थे अब उस चेतन्यता के लिये भूखे तड़पते हैं, और इसी तरह पानी यानी मन सुरत की चेतन्य धार के वास्ते प्यासा तड़पने लगा ॥

" ८—जो परमार्थ की तरफ़ से ग़ाफ़िल यानी सोता रहा वह माया के तले यानी षटचक्र में दबा और फँसा रहा और जो परमार्थ की कमाई चेतकर और होशियारी के साथ करने लगा वह पिंड और संसार की तरफ़ से बेख़बर होता गया ॥

" ९—बंझा यानी माया से (जब कि सुरत उसके घेर में उतर कर आई) अनेक प्रकारकी रचना और अनेक पदार्थ पैदा हुए, और जब सुरत यानी जनती और असल करता उलट कर पिंड और ब्रह्मांड के परे पहुँची, तब सब रचना सिमट गई, और वह अकेली अपने घर की तरफ़ सिधारी ॥

" १०—जब कि सुरत जो पिंड में फँसकर देह यानी पृथ्वी रूप हो रही थी उलट कर ब्रह्मांड की तरफ़ चली तो वह मन रूपी घोड़े पर सवार होकर दौड़ी, और तब ही ऊँट यानी स्वाँसा अथवा प्राण उलट कर और गगन को फोड़ कर चढ़ गई ॥

राधास्वामी मौज दिखाई ।
सूरत अब शब्द लगाई ॥ ११ ॥

॥ शब्द बाईसवाँ ॥

सुन री सखी इक मर्म जनाऊँ ।
नई बात अब तोहि सुनाऊँ ॥ १ ॥
दिन बिच नाचत चंद दिखाऊँ ।
रैन उदय दिन कर दरसाऊँ ॥ २ ॥
अग्नि पूतरी जल से सिंचाऊँ ।
जल की रंभा अग्नि नचाऊँ ॥ ३ ॥
गगन माहिं पृथ्वी चलवाऊँ ।
पृथ्वी मध्य गगन लखवाऊँ ॥ ४ ॥

कड़ी ११—खुलासा इस शब्द का यह है कि राधास्वामी ने अपनी मेहर और मौज से सुरत को चढ़ाकर शब्द से मिला दिया ॥

" १—हे सखी तुझको एक भेद जनाता हूँ और नई बात सुनाता हूँ ॥

" २—सुन्न में जहाँ कि सदा रोशनी रहती है यानी दिन रहता है चंद्र स्वरूप नज़र आता है, और त्रिकुटी के मुक़ाम पर जहाँ से कि माया यानी अंधेरा और रात शुरू हुई सूरज रूप रोशनी देता है ॥

" ३—सहसदल कँवल में जोत स्वरूप अमृत की जल धार से (जो ऊँचे से आती है) रोशन है, और अमृत धार के संग जो धुन सहसदल-कँवल से नीचे उतरी; वह अग्नी यानी माया के घेर में केल कर रही है ॥

" ४—आकाश में पृथ्वी यानी देह की वासी सुरत को चढ़ाऊँ, और पृथ्वी यानी देह में गगन यानी आकाश का लखाव करूँ ॥

ब्योम चलाय पवन थमवाऊँ ।
सिंघ मार और स्यार जिताऊँ ॥ ५ ॥
दुर्बल से बलवान गिराऊँ ।
त्रिकुटी चढ़ यह धूम मचाऊँ ॥ ६ ॥
कागन फुराड हंस करवाऊँ ।
लूकन को अब सूर दिखाऊँ ॥ ७ ॥
उलटी बात सभी कह गाऊँ ।
ऐसे समरथ राधास्वामी पाऊँ ॥ ८ ॥

॥ शब्द तेईसवाँ ॥

गूँगे ने गुड़ खाइया ।
वह कैसे कहे बनाय ॥ १ ॥

कड़ी ५—ब्योम यानी मन आकाश जब सुरत की चढ़ाई के वक्त, ऊपर को सिमटे, तब प्राण यानी पवन धीमी होकर ठहर जाती है, स्यार जो जीव से मुराद है वह गगन में चढ़ कर सिंह यानी काल को जीत लेता है ॥

" ६—दुर्बल वही जीव या सुरत से मतलब है जो पिण्ड में उतर कर निहायत बेताक़त होजाती है, और त्रिकुटी में चढ़कर काल बली को पछाड़ कर ज़ेर कर लेती है ॥

" ७—अनेक जीवों को जो पिण्ड में निपट काग यानी मन रूप होकर वर्त रहे हैं दसवें द्वार में पहुँचा कर हंस स्वरूप बनाऊँ, और निपट संसारी जो उल्लू के मुवाफ़िक़ मालिक की तरफ़ से अंधे और अजान हो रहे हैं उन को त्रिकुटी में पहुँचा कर सूरज ब्रह्म का दर्शन कराऊँ ॥

" ८ यह सब उलटी बातें समरथ सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से सही करके दिखाई जा सकती हैं ।

" १ जिसने कि अपने घट में शब्द का गहिरा रस पाया, वह उसको

बहिरे ने धुन पाइया ।
वह क्योंकर कहे सुनाय ॥ २ ॥
अन्धे मोती पो लिया ।
वह किसे दिखावन जाय ॥ ३ ॥
लूले ने नभ थामिया ।
यह अचरज कहा न जाय ॥ ४ ॥
पिंगला पर्बत चढ़ गया ।
कोइ साधू जाने ताय ॥ ५ ॥
रोगी सद जीवत रहे ।
बिन रोगहि मर मर जाय ॥ ६ ॥

कड़ी क्योंकर बयान कर सकता है--उसका हाल वही होगा जैसे कि गूँगे का जो गुड़ खाकर उसके स्वाद का बयान करने से लाचार है, और यह कि जिस किसी को गहिरा रस अन्तर में आया वही उसके प्रगट करने में आम लोगों के सामने गूँगा हो गया ॥

" २—जिसने कि दुनिया की तरफ़ से अपने कान बंद किये उसी को अन्तर में शब्द खुला फिर वह उस शब्द और आनंद के भेद को आम लोगों को कैसे जतावे या सुनावे ॥

" ३—जिसने कि अपनी नज़र दुनिया की तरफ़ से खींच ली यानी आँखें बंद कर लीं उसी ने अपनी सुरत की धार को दसवें द्वार में पहुँचाया यानी मोती पो लिया फिर वह इस कैफ़ियत को अवाम को कैसे दिखा सकता है ॥

" ४—जो मन कि दुनिया में दौड़ने से रह गया यानी जिसने चंचलता छोड़ दी उसी ने चढ़कर नभ यानी आकाश को थाम लिया और यही अचरज की बात है ॥

" ५—जो मन कि निश्चल हो गया वही पिंगला है और वही सतगुरु की दया से सुमेर पर्वत यानी त्रिकुटी पर चढ़ गया इस हाल को कोई अभ्यासी यानी साधू समझता है ॥

" ६—जो कोई मालिक के चरनों के इश्क़ यानी प्रेम का बीमार हुआ और

सोगी नित हर्षत रहे ।
बिन सोग चौरासी जाय ॥ ७ ॥
चिन्ता में जो नित रहे ।
सो मिले अचिन्ते आय ॥ ८ ॥
बैरागी भरमत फिरे ।
रागी मुक्ति समाय ॥ ६ ॥
सतगुरु यह परचा दिया ।
कोइ बिरले खोज कराय ॥ १० ॥

कड़ी जिस किसी ने अपने मन को बीमार जानकर सतगुरु से उस का इलाज कराना शुरू किया वही एक दिन अमर पद में पहुँचकर अमर हो जावेगा और जिस किसी को प्रेम की बीमारी नहीं लगी या जिस ने अपने मन की बीमारी की खबर न ली यानी अपने को निर्मल और चंगा समझा वह बारम्बार जन्मेगा और मरेगा ॥

" ७—जो अपने प्रीतम सच्चे मालिक के वियोग की बिरह में उदास और गमगीन रहता है, वह दिन २ अन्तर में चरन रस पाकर मगन होता जावेगा, और जिस किसी के हिरदे में मालिक के चरनों का बिरह और प्रेम नहीं है, वही मनुष्य चौरासी जोनि में भरमता रहेगा॥

" ८—जो कोई अपने मालिक से मिलने और अपने जीव का सच्चा उद्धार और कल्यान करने की चिंता में रहता है वही एक दिन अचिंत पुरुष यानी सच्चे मालिक से मिलकर निचंत हो जावेगा ॥

" ६—जिस किसी ने संसार से बैराग किया यानी घर बार छोड़कर भेष लिया और मालिक के चरनों का प्रेम और प्यार उसके मन में नहीं आया, तो वह हमेशा चारों खानों में भरमता रहेगा, और जिस किसी के मन में मालिक के चरनों का राग और प्रेम समाया वही एक दिन मुक्ति पद में पहुँच जावेगा ॥

" १०—सतगुरु ने इस तरह से सच्चे प्रेमियों को उनके घट में पर्चे दिये सो इस बात को सुनकर कोई बिरले जीव उसके खोज और तलाश में लगेंगे ॥

अंतरमुख जो शब्द में ।
लेंगे बूझ बुझाय ॥ ११ ॥
राधास्वामी कह दिया ।
तुम लेना शब्द कमाय ॥ १२ ॥

॥ शब्द चौबीसवाँ ॥

मन सींचो प्रेम कियारी ।
सतगुरु अस हेला मारी ॥ १ ॥
घट पौद खिली अब भारी ।
भक्ती की लग रही बाड़ी ॥ २ ॥
जल अमृत वर्ष बहा री ।
संतन सँग देख बहारी ॥ ३ ॥
गुरु शब्द लगा सुत तारी ।
सुषमन रस पी ले प्यारी ॥ ४ ॥
कँवल कमोदनी चन्द्र निहारी ।
खिली सुरत और प्यार बढ़ा री ॥५॥
मन भँवरा गुंजार लगा री ।
सूरजमुखी कँवल निरखा री ॥ ६ ॥

कड़ी ११—और जो अपने अन्तर में शब्द का अभ्यास करेंगे वही इस कैफ़ियत को समझेंगे और अपने घट में निरख और परख कर बूझेंगे ॥
" १२—इस वास्ते सतगुरु राधास्वामी दयाल सब जीवों को पुकार कर कहते हैं कि हे भाइयो शब्द की कमाई करो और अपने घट में रस और आनन्द लो और दया और मेहर के परचे देखो ॥

मरुवा मोगर मन मोहा री ।
चाह चमेली मेल मिला री ॥ ७ ॥
चम्पा चाँप चढ़ा धनुवा री ।
सुरत बान से काल गिरा री ॥ ८ ॥
मौरसली नृत मोर रसा री ।
नरगिस नैन देख उजियारी ॥ ९ ॥

*****

॥ बचन बयालिसवाँ ॥

॥ सेवा बानी ॥

॥ शब्द पहिला ॥

स्वामी उठे और बैठे भजन में ।
कर कर ध्यान मगन हुए मन में ॥१॥
फिर भर हुक्क़ा धर दिया आगे ।
सतसंगी आय दर्शन लागे ॥ २ ॥
किया चरनामृत लई परशादी ।
हार चढ़ाकर बँदगी साधी ॥ ३ ॥
लौटे धरे तब गये दिशा को ।
फिर आये जब टाल बला को ॥ ४ ॥
चौकी बिछा मैंने गद्दी बिछाई ।
स्वामी बिठा और हाथ धुलाई ॥ ५ ॥

दातन कर मंजन करवाई ।
मुख किया शुद्ध और दाँत सफ़ाई ॥६॥
कुल्ली दई स्वामी कुल मेरा उधरा ।
जन्म सुफल और तन मन सुधरा ॥७॥
बटना तन मल मैल गँवाई ।
बाट खुली और सुरत चढ़ाई ॥ ८ ॥
तेल मला और चमक बढ़ाई ।
शोभा राधास्वामी अधिक सुहाई ॥९॥
मानसरोवर जल भर लाई ।
तब राधास्वामी अश्नान कराई ॥१०॥
कर अश्नान पौंछ अँग लीन्हा ।
मगन हुई मैं जस जल मीना ॥ ११ ॥
कंघा किया स्वामी बाल सुधारे ।
गया जंजाल* मोह मद हारे ॥ १२ ॥
धोती बदली पहिने बस्तर ।
सतसंगी सब अब हुए इस्थिर ॥ १३ ॥
हुक्क़ा भर फिर दासी लाई ।
राधास्वामी ढिंग बैठ पिलाई ॥१४ ॥

* दुख ।

हुक्क़ा हक़ हक़ बोली बोला ।
चिलम अलस खोय सुख दर खोला ॥१५॥
कली कली मन चित्त खिलानी ।
नइ नइ सोभा आन समानी ॥ १६ ॥
सतसँग मैं आय किया उपदेसा ।
बचन कहे दिया अगम सँदेसा ॥ १७ ॥
फिर भोजन कर बीड़ी खाई ।
बाँटी बीड़ी कन्हइया भाई ॥ १८ ॥
सीत प्रसाद सभी मिल लीन्हा ।
जन्म जन्म के पातक छीना ॥ १९ ॥
माँज कमंडल जल भर लाई ।
और स्वामी को दिया पिलाई ॥ २० ॥
सेज बिछाई स्वामी पौढ़े ।
चरनन सेवा में चित जोड़े ॥ २१ ॥
चरनन सेवा करी बनाई ।
दुर्लभ सेवा यह हम पाई ॥ २२ ॥
जागे स्वामी दर्शन पाई ।
भाग आपना लिया जगाई ॥ २३ ॥
सेवा का बरनन सब कीन्हा ।
गावे सुने होय मन लीना ॥ २४ ॥

जो गावे यह सेवा बानी ।
सो पावे सतलोक निशानी ॥ २५ ॥
राधास्वामी सेवा गाई ।
सुरत शब्द मारग तब पाई ॥ २६ ॥
बड़ भागी जो सेवा करते ।
प्रीत सहित स्वामी सँग रहते ॥ २७ ॥

॥ शब्द दूसरा ॥

चौका बरतन किया अचंभी ।
सफ़ा किया मन अपना हम भी ॥ १ ॥
नूर पुरुष का अद्भुत जागा ।
तेज प्रचंड तिमर सब भागा ॥ २ ॥
चौका कीन्हा दसवें द्वारा ।
पाँचों बासन माँज सँवारा ॥ ३ ॥
चूल्हा धोया श्याम कंज सँ ।
जोत जगाई सहसकँवल सँ ॥ ४ ॥
तीन गुनन का पोता मारा ।
करम भरम का कूड़ा टारा ॥ ५ ॥
हुई सफ़ाई अचरज भारी ।
सतगुरु ने अब मोहिं सम्हारी ॥ ६ ॥

सतगुरु सेवा में रहूँ लागी ।
छिन छिन चरन कँवल में पागी ॥ ७ ॥

॥ शब्द तीसरा ॥

रात जगूँ मैं सुनकर खड़का ।
उठत सुवामी मन मेरा फड़का ॥ १ ॥
हाथ धुलाऊँ देउँ अँगोछा ।
इस सेवा पर मन मेरा लोचा ॥ २ ॥
भाव भक्ति से बिंजन करती ।
थाल परोस स्वामी ढिंग धरती ॥ ३ ॥
जब राधास्वामी ने भोग लगाया ।
मगन हुआ मन अति सुख पाया ॥ ४ ॥
ग्रास दिया परशादी का जबही ।
घट के परदे खुल गये तबही ॥ ५ ॥
राधास्वामी २ छिन छिन गाया ।
फिर सतसंगी सब मिल पाया ॥ ६ ॥
बटी परशादी सुख भया भारी ।
फिर पानी की भर लाई झारी ॥ ७ ॥
करमंडल ले जल अचवाया ।
पलँग बिछा स्वामी पौढ़ाया ॥ ८ ॥

चरन पखारूँ जागूँ रैना ।
फिर उठँ स्वामी तब पाऊँ चैना ॥ ९ ॥
उठकर दर्शन छिन छिन करती ।
चरनामृत परशादी लेती ॥ १० ॥

॥ शब्द चौथा ॥

भोग धरे राधास्वामी आगे ।
लीन्हे बिंजन अमी रस पागे ॥ १ ॥
गगन शिखर पर बजा है नगारा ।
भोग लगाया राधास्वामी सारा ॥ २ ॥
काल करम को खागये छिन में ।
जंगी नाम धराया पल में ॥ ३ ॥
ऐसा भोग लगा नहिँ कबही ।
राधास्वामी खागये सबको अब ही ॥४॥

*****

इति सम्पूर्ण समाप्त बचन सार
बयालीस राधास्वामी के

शुद्धाशुद्ध पत्र सारबचन छन्दबन्द

दूसरा भाग ।

पेज	सतर	ग़लत	सही
२	७	जीती	ज़ीते
१४	११	सत	संत
	१५	भँवर	भँवरा
२८	६	घर	धर
३१	९	महिना	महिमा
३२	११	झँझरीदीप†	झँझरीदीप*
	१२	ठकुराई‡	ठकुराई†
३७	४	शास्त्र	शास्त्र
४९	१२	१०	१०८
५४	६	प्रेस	प्रेम
५८	८	फेलौं	फ़ेलौं*
६४	५	लका	लंका
६९	१७	सेब	सब
७०	अर्थ	*जाग्रतस्वप्नसुषुप्ति	
७१	१	तीनौं*	तीनौं‡
	अर्थ		जाग्रतस्वप्नसुषुप्ति‡
८१	२	६८	६९
८६	८	११३	११२
८८	१०	वृतंता*	वृतंता**

पेज	सतर	ग़लत	सही
८९	१५	शरई	शरई
९१	१०	के	के निज
	१६	याँ	याँ
९२	अर्थ	लिया	लिया
९६	१८	पखंडी	पाखंडी
१०४	अर्थ	पा ग	पालंग
११६	५	छटवाँ	छठवाँ
११८	१०	सगारी	सगरी*
११९	५	हष	हर्ष
११९	११	हस	हंस
१२०	१७	जान	जाना
१२२	१७	पौद*	पौद†
	अर्थ		†छोटा पेड़
१२३	अर्थ	*छोडा पेड़	
१२७	१९	फनधर*	फनधर†
	अर्थ		†साँप
१२८	,,	*साँप	
१३२	,,	§ जा	§जो
१४३	३	सुनो	सुनी
१४४	११	म	मैं
१४६	१४	बुहारूँ†	बुहारूँ‡
१४८	१६	लान्ही	लोन्ही
१५०	१८	अंधेरा	अंधेरा§
१५१	२	नेहरा	नेहरा*

पेज	सतर	ग़लत	सही
१६५	१२	पाऊँ	ठाऊँ
१७१	४	करुँ	करूँ
१७९	१८	संगीत*	संगीत†
१८८	५	दोनाँ	दोनौं
१९०	८	तुग	तुम
१९५	१५	चला	चली
२०२	१७	होगा	होगी
२०५	१८	घट	घठ
२३१	१७	हुलास	हुलासा
२४०	१७	४	५
२५४	१३	घोड़े	घोड़े
२७६	२०	थाना	थाली
२७८	१९	जा	जो
२७९	६	प्रम	प्रेम
२८१	७	जोड़ा	जोड़ी
२८४	१२	सटकना	सटकना§
२८६	१२	खैंच	खैंच
२९४	१५	छाना	छोना
३००	१७	रला	रली
३०८	८	घूम	घूम
३०९	१३	जंग‖	जंग§
३११	१६	पटोल	पटोल‖
३१९	१८	मात	मृत
३२६	३	सेरी	मेरी

पेज	सतर	ग़लत	सही
३३४	९	दमकड़ा	दमकड़ा
३४०	७	आरता	आरती
३४४	९	डालो	डाली
३६८	९	कँवलाँ	कंवलाँ
३७१	१७	घूल	धूल
३७७	२	घर	घर
३९३	१४	माबूद	माबूद
३९४	७	दिक्कत	दि.क़्क़त
३९९	२	प्रगटा	प्रगटी
४०२	७	सढ़	मूढ़
	८	क्याँकर	क्योंकर
४०७	३	तंत	तंत
	११	वृतंत	बृतंत
४२९	९	ग ता	गोता
४४५	३	प्रात	प्रीत